उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

बी.ए. कर्मकाण्ड (षष्ठ सेमेस्टर)

BAKA(N)-350

(CORE ELECTIVE COURSE)

विविध स्तोत्र पाठ

मानविकी विद्याशाखा

भारतीय कर्मकाण्ड विभाग

तीनपानी बाईपास रोड , ट्रॉन्सपोर्ट नगर के पीछे

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139

फोन नं .05946- 261122 , 261123

टॉल फ्री न0 18001804025

Fax No.- 05946-264232, E-mail- info@uou.ac.in

http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति एवं अध्ययन समिति

अध्यक्ष
कुलपति, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रोफेसर रेनू प्रकाश – निदेशक
मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी – समन्वयक
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

डॉ. प्रमोद जोशी, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी),
ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ. प्रभाकर पुरोहित, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी)
ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

प्रोफेसर विनय कुमार पाण्डेय
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रोफेसर श्याम देव मिश्र
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, लखनऊ परिसर, लखनऊ

प्रोफेसर प्रेम कुमार शर्मा
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. रत्न लाल शर्मा
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार

सम्पादक

डॉ. रंजीत दूबे
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

सह - सम्पादक

डॉ. प्रमोद जोशी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखक	खण्ड	इकाई संख्या
डॉ. प्रमोद जोशी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	1	1,3,4,5
डॉ. प्रभाकर पुरोहित असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	2	1,2,3
डॉ. रंजीत दूबे असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	1 /2	2/4,5
डॉ. विजय प्रसाद रतूड़ी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी) , वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	3	1,2,3,4

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रथम संस्करण : 2026 **ISBN No. -**

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी **मुद्रक :**

नोट: - इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी स्थित सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।

विविध स्तोत्र पाठ CORE ELECTIVE COURSE COURSE BAKA(N)-350

बी.ए. (षष्ठ सेमेस्टर)– कर्मकाण्ड

क्रम व इकाइयों के नाम		पृष्ठ संख्या
खण्ड 1	**स्तोत्र पाठ**	**2**
इकाई 1	रामरक्षा स्तोत्र	3-18
इकाई 2	विष्णुसहस्र नाम	19 -59
इकाई 3	गजेन्द्र मोक्ष	60 - 74
इकाई 4	शिवताण्डव	75-89
इकाई 5	मधुराष्टकम्	90-101
खण्ड 2	**स्तोत्र पाठ**	**102**
इकाई 1	सूर्य स्तोत्र	103 - 120
इकाई 2	गणेश स्तोत्र	121-133
इकाई 3	नवग्रह स्तोत्र	134-157
इकाई 4	विष्णु स्तोत्र	158 -182
इकाई 5	शिव स्तोत्र	183 - 200
खण्ड 3	**स्तोत्र पाठ**	**201**
इकाई 1	रामचरितमानस पाठ विधि	202 -228
इकाई 2	दुर्गासप्तशती पाठ विधि	229 -251
इकाई 3	श्रीमद्भागवदमहापुराण पाठ विधि	252 - 277
इकाई 4	बाल्मीकी रामायण पाठ विधि	278 -309

बी.ए. (षष्ठ सेमेस्टर) कर्मकाण्ड

CORE ELECTIVE COURSE

विविध स्तोत्र पाठ

BAKA(N)-250

खण्ड - 1
स्तोत्र पाठ

इकाई -1 रामरक्षा स्तोत्र

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 राम रक्षास्तोत्र का महत्व
1.4 वर्तमान परिपेक्ष में राम रक्षास्तोत्र
1.5 सारांश
1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 350, के प्रथम खण्ड की प्रथम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है **रामरक्षा स्तोत्र** रामायण, जो भारतीय संस्कृति का एक आधारभूत ग्रंथ है, इस विचार को अत्यंत गहराई से प्रस्तुत करती है। यद्यपि "रक्षा स्तोत्र" नाम से कोई विशिष्ट स्तोत्र रामायण में प्रत्यक्ष रूप से नहीं मिलता, किंतु उसके मूल तत्व—ईश्वर का स्मरण, भक्ति, स्तुति और शरणागति—पूरे ग्रंथ में व्याप्त हैं। विशेष रूप से "राम" नाम को एक दिव्य शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है, जो साधक के लिए एक अदृश्य कवच का कार्य करता है। रामायण के विभिन्न प्रसंग यह सिद्ध करते हैं कि श्रद्धा और विश्वास के साथ किया गया नाम-स्मरण व्यक्ति को साहस, आत्मविश्वास और आंतरिक शांति प्रदान करता है। संकट के समय ईश्वर की शरण में जाना और उनके नाम का जप करना न केवल भय को दूर करता है, बल्कि जीवन को संतुलित और दृढ़ भी बनाता है। इस प्रकार, "रक्षा स्तोत्र" की अवधारणा केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि एक गहन आध्यात्मिक अनुभूति है, जो व्यक्ति को हर स्तर पर सशक्त बनाती है।

1.2 उद्देश्य

- ❖ राम रक्षा स्तोत्र के महत्व को समझ सकेंगें।
- ❖ वर्तमान में क्या उपादेयता है, इसे जान पायेंगे।
- ❖ राम रक्षा स्तोत्र के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ❖ किस प्रकार से लाभकारी है, इसे समझ पायेंगे।

1.3 राम रक्षास्तोत्र का महत्व

"रक्षा" शब्द का अर्थ ही सुरक्षा है। मान्यता है कि इसका पाठ करने से व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक और ध्यात्मिक रूप से सुरक्षा मिलती है और भय दूर होता है।

रामायण भारतीय संस्कृति और धर्म का एक आधारभूत ग्रंथ है, जिसमें न केवल आदर्श जीवन मूल्यों का वर्णन है, बल्कि भक्ति, नाम-स्मरण और स्तुति की शक्ति का भी गहन विवेचन मिलता है। "रक्षा स्तोत्र" का विचार भले ही प्रत्यक्ष रूप से रामायण में किसी एक शीर्षक के रूप में न मिलता हो, किंतु इसके मूल तत्व—ईश्वर का स्मरण, स्तुति और शरणागति—पूरे ग्रंथ में व्याप्त हैं। विशेष रूप से श्री राम के नाम और गुणों का स्मरण एक ऐसे आध्यात्मिक कवच के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो व्यक्ति को हर प्रकार के संकट से बचाने में समर्थ है।

रामायण के अनुसार "राम" नाम केवल एक शब्द नहीं, बल्कि दिव्य शक्ति का प्रतीक है। यह नाम धर्म, सत्य, करुणा और मर्यादा का सार है। जब कोई व्यक्ति श्रद्धा और विश्वास के साथ राम का स्मरण करता है, तो वह अपने भीतर एक अदृश्य शक्ति का अनुभव करता है। यही कारण है कि बाद के ग्रंथों में "राम रक्षा स्तोत्र" जैसे स्तोत्रों की रचना हुई, जो इस नाम-स्मरण को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करते हैं। रामायण यह स्पष्ट करती है कि ईश्वर का नाम स्वयं में इतना शक्तिशाली है कि वह साधक के लिए एक सुरक्षा कवच का कार्य करता है। रामायण में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि संकट के समय ईश्वर का स्मरण व्यक्ति की रक्षा करता है। उदाहरण के लिए, हनुमान जब समुद्र पार करने के लिए आगे बढ़ते हैं, तो वे राम का स्मरण करते हैं। इस स्मरण से उन्हें अद्भुत बल और आत्मविश्वास प्राप्त होता है, जिससे वे असंभव कार्य को भी संभव बना देते हैं। इसी प्रकार, विभीषण जब अपने भाई रावण का साथ छोड़कर राम की शरण में आते हैं, तो उन्हें तुरंत आश्रय और सुरक्षा मिलती है। यह प्रसंग यह दर्शाता है कि सच्चे मन से की गई शरणागति व्यक्ति के लिए सबसे बड़ा रक्षा कवच बन जाती है। शरणागति का सिद्धांत रामायण में अत्यंत महत्वपूर्ण है। भगवान राम स्वयं यह प्रतिज्ञा करते हैं कि जो कोई उनकी शरण में आता है, वे उसकी रक्षा अवश्य करेंगे। यह विचार "रक्षा स्तोत्र" के मूल भाव से जुड़ा हुआ है, क्योंकि स्तोत्र का पाठ भी एक प्रकार की प्रार्थना और समर्पण है। जब व्यक्ति अपनी सीमाओं को स्वीकार करते हुए ईश्वर की शरण में जाता है, तो उसे मानसिक शांति और सुरक्षा का अनुभव होता है। इस प्रकार, रक्षा स्तोत्र केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि एक गहरी आध्यात्मिक भावना का प्रतीक है।

रामायण यह भी सिखाती है कि मनुष्य के जीवन में आने वाले अधिकांश संकट उसके अपने मन की अशांति और विकारों के कारण होते हैं। क्रोध, लोभ, मोह और भय जैसे नकारात्मक भाव व्यक्ति को कमजोर बनाते हैं। ऐसे में, राम का नाम-जप और स्तुति मन को शुद्ध और शांत बनाते हैं। जब मन शांत होता है, तो व्यक्ति सही निर्णय लेने में सक्षम होता है और समस्याओं का समाधान सरलता से कर पाता है। इस दृष्टि से, "रक्षा स्तोत्र" का पाठ आंतरिक शुद्धि और मानसिक संतुलन का एक प्रभावी साधन है। रामायण में धर्म और मर्यादा के पालन को भी अत्यधिक महत्व दिया गया है। श्री राम का जीवन इस बात का उदाहरण है कि जो व्यक्ति सत्य और धर्म के मार्ग पर चलता है, उसकी रक्षा स्वयं धर्म करता है। इस प्रकार, रक्षा स्तोत्र का पाठ व्यक्ति को नैतिक जीवन जीने की प्रेरणा देता है। जब व्यक्ति धर्म का पालन करता है, तो वह स्वतः ही अनेक प्रकार के संकटों से बच जाता है।

रामायण के पात्र भी इस बात को सिद्ध करते हैं कि भक्ति और स्तुति का जीवन में कितना महत्व है। सीता का धैर्य, लक्ष्मण की सेवा-भावना और हनुमान की अटूट भक्ति—ये सभी गुण व्यक्ति के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। इन आदर्शों का स्मरण और अनुकरण करना भी एक प्रकार की "आंतरिक रक्षा" ही है, क्योंकि ये गुण व्यक्ति को जीवन की कठिनाइयों में स्थिर बनाए रखते हैं। रामायण में यह भी स्पष्ट किया गया है कि ईश्वर का स्मरण भय और नकारात्मकता को दूर करता है। जब व्यक्ति राम का नाम

लेता है, तो उसके मन में साहस और आत्मविश्वास का संचार होता है। यह साहस ही उसे कठिन परिस्थितियों में भी दृढ़ बनाए रखता है। इस प्रकार, रक्षा स्तोत्र का पाठ केवल बाहरी संकटों से बचाव का साधन नहीं, बल्कि आंतरिक शक्ति का स्रोत भी है।

अंततः, रामायण का संदेश यह है कि भक्ति, नाम-स्मरण और स्तुति जीवन को संतुलित और सुरक्षित बनाने के सबसे सरल और प्रभावी साधन हैं। "रक्षा स्तोत्र" इसी परंपरा का एक सशक्त रूप है, जो व्यक्ति को ईश्वर से जोड़ता है और उसे मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक स्तर पर सुदृढ़ बनाता है।

1.4 वर्तमान परिपेक्ष में राम रक्षास्तोत्र

भारतीय आध्यात्मिक परंपरा में स्तोत्रों का विशेष स्थान रहा है। ये केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि मन, बुद्धि और आत्मा को संतुलित करने के प्रभावी साधन हैं। ऐसे ही स्तोत्रों में "राम रक्षा स्तोत्र" अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। यह स्तोत्र भगवान श्री राम की स्तुति में रचित है और इसे एक दिव्य "कवच" के रूप में देखा जाता है। वर्तमान समय में, जब जीवन अनेक प्रकार के तनाव, असुरक्षा और चुनौतियों से घिरा हुआ है, तब राम रक्षा स्तोत्र का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। आज का युग तेज़ी, प्रतिस्पर्धा और अनिश्चितता का युग है। व्यक्ति निरंतर मानसिक दबाव, चिंता और भय का सामना कर रहा है। ऐसे में राम रक्षा स्तोत्र का नियमित पाठ मानसिक शांति प्रदान करता है। इसके श्लोकों का उच्चारण और उनके अर्थ पर ध्यान केंद्रित करने से मन धीरे-धीरे स्थिर होता है। यह एक प्रकार का ध्यान भी है, जो व्यक्ति को वर्तमान क्षण में रहने की प्रेरणा देता है। परिणामस्वरूप तनाव कम होता है और मानसिक संतुलन बना रहता है। राम रक्षा स्तोत्र का एक महत्वपूर्ण पक्ष "रक्षा" की भावना है। आज के समय में "रक्षा" का अर्थ केवल शारीरिक सुरक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि मानसिक और भावनात्मक सुरक्षा भी उतनी ही आवश्यक है। जब व्यक्ति इस स्तोत्र का पाठ करता है, तो उसके भीतर एक सकारात्मक विश्वास उत्पन्न होता है कि वह किसी उच्च शक्ति के संरक्षण में है। यह विश्वास उसे कठिन परिस्थितियों में भी साहस और धैर्य बनाए रखने में सहायता करता है। भगवान श्री राम का जीवन आदर्शों का प्रतीक है। सत्य, धर्म, कर्तव्य और मर्यादा—ये सभी गुण उनके व्यक्तित्व में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। राम रक्षा स्तोत्र का पाठ करते समय व्यक्ति केवल शब्दों का उच्चारण नहीं करता, बल्कि इन आदर्शों को अपने जीवन में अपनाने की प्रेरणा भी प्राप्त करता है। वर्तमान समाज में, जहाँ नैतिक मूल्यों में गिरावट देखने को मिलती है, वहाँ यह स्तोत्र व्यक्ति को सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। आज के समय में एकाग्रता की कमी भी एक बड़ी समस्या है, विशेष रूप से विद्यार्थियों और युवाओं के बीच। डिजिटल युग में लगातार बदलती सूचनाओं के बीच मन को स्थिर रखना कठिन हो गया है। राम रक्षा स्तोत्र का नियमित पाठ एकाग्रता बढ़ाने में सहायक होता है। जब व्यक्ति प्रतिदिन एक निश्चित समय पर इसका

पाठ करता है, तो उसमें अनुशासन विकसित होता है और उसकी ध्यान केंद्रित करने की क्षमता भी बढ़ती है।

सामाजिक दृष्टि से भी इस स्तोत्र का महत्व कम नहीं है। परिवार और समाज में सामंजस्य बनाए रखने के लिए धैर्य, सहनशीलता और सकारात्मक दृष्टिकोण आवश्यक होते हैं। राम रक्षा स्तोत्र का पाठ व्यक्ति के भीतर इन गुणों का विकास करता है। इससे न केवल उसका व्यक्तिगत जीवन बेहतर होता है, बल्कि उसके संबंध भी मजबूत होते हैं। इसके अतिरिक्त, यह स्तोत्र नकारात्मकता को दूर करने में भी सहायक माना जाता है। आज के समय में लोग अक्सर नकारात्मक विचारों, असफलताओं और भय से घिरे रहते हैं। राम रक्षा स्तोत्र का नियमित पाठ मन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है और व्यक्ति को आशावादी बनाता है। यह उसे जीवन की कठिनाइयों का सामना करने की शक्ति प्रदान करता है। आध्यात्मिक दृष्टि से देखें तो राम रक्षा स्तोत्र व्यक्ति को ईश्वर से जोड़ने का एक सरल माध्यम है। आधुनिक जीवन की व्यस्तता में लोग लंबी साधनाएँ या तपस्या नहीं कर पाते, लेकिन स्तोत्र पाठ एक ऐसा साधन है जिसे कोई भी व्यक्ति आसानी से अपना सकता है। यह व्यक्ति को आत्मचिंतन और आत्मिक विकास की ओर प्रेरित करता है। धीरे-धीरे वह अपने भीतर शांति और संतोष का अनुभव करने लगता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य भी एक महत्वपूर्ण विषय है। यद्यपि स्तोत्र का पाठ चिकित्सा का विकल्प नहीं है, फिर भी यह मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक होता है। जब मन शांत और सकारात्मक होता है, तो उसका प्रभाव शरीर पर भी पड़ता है। इस प्रकार, राम रक्षा स्तोत्र अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति के समग्र स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। एक और महत्वपूर्ण पहलू यह है कि राम रक्षा स्तोत्र व्यक्ति को आत्मविश्वास प्रदान करता है। जब वह नियमित रूप से इसका पाठ करता है, तो उसके भीतर यह भावना विकसित होती है कि वह अकेला नहीं है। यह भावना उसे जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रेरित करती है।

श्रीगणेशायनमः ।

अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य, बुधकौशिक ऋषिः, श्रीसीतारामचंद्रोदेवता ,अनुष्टुप् छन्दः, सीता शक्तिः, मद्हनुमान्कीलकम्, श्रीसीतारामचंद्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

अर्थ: — इस राम रक्षा स्तोत्र मंत्रके रचयिता बुधकौशिक ऋषि हैं, सीता और रामचंद्र देवता हैं, अनुष्टुप छंद हैं, सीता शक्ति हैं, हनुमानजी कीलक है तथा श्रीरामचंद्रजीकी प्रसन्नताके लिए राम रक्षा स्तोत्रके जपमें विनियोग किया जाता हैं।

॥ अथ ध्यानम् ॥

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं ।

पीतं वासोवसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ॥

वामाङ्कारूढ-सीता-मुखकमल-मिलल्लोचनं नीरदाभं ।

नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डनं रामचंद्रम् ॥

जो धनुष-बाण धारण किए हुए हैं, बद्ध पद्मासनकी मुद्रामें विराजमान हैं और पीतांबर पहने हुए हैं, जिनके आलोकित नेत्र नए कमल दलके समान स्पर्धा करते हैं, जो बायें ओर स्थित सीताजीके मुख कमलसे मिले हुए हैं- उन आजानु बाहु, मेघश्याम, विभिन्न अलंकारोंसे विभूषित तथा जटाधारी श्रीरामका ध्यान करें।

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् ।

एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥१॥

श्री रघुनाथजीका चरित्र सौ कोटि विस्तारवाला हैं। उसका एक-एक अक्षर महापातकोंको नष्ट करनेवाला है।

ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् ।

जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् ॥२॥

नीले कमलके श्याम वर्णवाले, कमलनेत्रवाले, जटाओंके मुकुटसे सुशोभित, जानकी तथा लक्ष्मण सहित ऐसे भगवान् श्रीरामका स्मरण कर,

सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तं चरान्तकम् ।

स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ॥३॥

जो अजन्मा एवं सर्वव्यापक, हाथोंमें खड्ग, तुणीर, धनुष-बाण धारण किए राक्षसोंके संहार तथा अपनी लीलाओंसे जगत रक्षा हेतु अवतीर्ण श्रीरामका स्मरण कर,

रामरक्षां पठेत्प्राज्ञ: पापघ्नीं सर्वकामदाम् ।

शिरो मे राघव: पातु भालं दशरथात्मज: ॥४॥

मैं सर्वकामप्रद और पापोंको नष्ट करनेवाले राम रक्षा स्तोत्रका पाठ करता हूं। राघव मेरे सिरकी और दशरथके पुत्र मेरे ललाटकी रक्षा करें।

कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रिय: श्रुती ।

घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सल: ॥५॥

कौशल्या नंदन मेरे नेत्रोंकी, विश्वामित्रके प्रिय मेरे कानोंकी, यज्ञरक्षक मेरे घ्राणकी और सुमित्राके वत्सल मेरे मुखकी रक्षा करें।

जिव्हां विद्यानिधि: पातु कण्ठं भरतवंदित: ।

स्कन्धौ दिव्यायुध: पातु भुजौ भग्नेशकार्मुक: ॥६॥

विद्यानिधि मेरी जिह्वाकी रक्षा करें, कंठकी भरत-वंदित, कंधोंकी दिव्यायुध और भुजाओंकी महादेवजीका धनुष तोडनेवाले भगवान् श्रीराम रक्षा करें।

करौ सीतापति: पातु हृदयं जामदग्न्यजित् ।

मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रय: ॥७॥

मेरे हाथोंकी सीता पति श्रीराम रक्षा करें, हृदयकी जमदग्नि ऋषिके पुत्रको (परशुराम) जीतनेवाले, मध्य भागकी खरके (नामक राक्षस) वधकर्ता और नाभिकी जांबवानके आश्रयदाता रक्षा करें।

सुग्रीवेश: कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभु: ।

ऊरू रघुत्तम: पातु रक्ष:कुलविनाशकृत् ॥८॥

मेरे कमरकी सुग्रीवके स्वामी, हडियोंकी हनुमानके प्रभु और रानोंकी राक्षस कुलका विनाश करनेवाले रघुकुलश्रेष्ठ रक्षा करें।

जानुनी सेतुकृत्पातु जङ्घे दशमुखान्तक: ।

पादौ बिभीषणश्रीद: पातु रामोऽखिलं वपु: ॥९॥

मेरे जानुओंकी सेतुकृत, जंघाओकी दशानन वधकर्ता, चरणोंकी विभीषणको ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले और सम्पूर्ण शरीरकी श्रीराम रक्षा करें।

एतां रामबलोपेतां रक्षां य: सुकृती पठेत् ।

स चिरायु: सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥१०॥

शुभ कार्य करनेवाला जो भक्त भक्ति एवं श्रद्धाके साथ रामबलसे संयुक्त होकर इस स्तोत्रका पाठ करता हैं, वह दीर्घायु, सुखी, पुत्रवान, विजयी और विनयशील हो जाता हैं।

पातालभूतलव्योम चारिणश्छद्मचारिण: ।

न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभि: ॥११॥

जो जीव पाताल, पृथ्वी और आकाशमें विचरते रहते हैं अथवा छद्म वेशमें घूमते रहते हैं , वे राम नामोंसे सुरक्षित मनुष्यको देख भी नहीं पाते ।

रामेति रामभद्रेति रामचंद्रेति वा स्मरन् ।

नरो न लिप्यते पापै भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥१२॥

राम, रामभद्र तथा रामचंद्र आदि नामोंका स्मरण करनेवाला रामभक्त पापों से लिप्त नहीं होता, इतना ही नहीं, वह अवश्य ही भोग और मोक्ष दोनोंको प्राप्त करता है

जगज्जेत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम् ।

य: कण्ठे धारयेत्तस्य करस्था: सर्वसिद्धय: ॥१३॥

जो संसारपर विजय करनेवाले मंत्र राम-नाम से सुरक्षित इस स्तोत्र को कंठस्थ कर लेता हैं, उसे सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

वज्रपंजरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् ।

अव्याहताज्ञ: सर्वत्र लभते जयमंगलम् ॥१४॥

जो मनुष्य वज्रपंजर नामक इस राम कवचका स्मरण करता हैं, उसकी आज्ञाका कहीं भी उल्लंघन नहीं होता तथा उसे सदैव विजय और मंगलकी ही प्राप्ति होती हैं।

आदिष्टवान् यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हर: ।

तथा लिखितवान् प्रात: प्रबुद्धो बुधकौशिक: ॥१५॥

भगवान् शंकरने स्वप्नमें इस रामरक्षा स्तोत्रका आदेश बुध कौशिक ऋषिको दिया था, उन्होंने प्रातः काल जागनेपर उसे वैसा ही लिख दिया।

आराम: कल्पवृक्षाणां विराम: सकलापदाम् ।

अभिरामस्त्रिलोकानां राम: श्रीमान् स न: प्रभु: ॥१६॥

जो कल्प वृक्षोंके बागके समान विश्राम देने वाले हैं, जो समस्त विपत्तियोंको दूर करनेवाले हैं और जो तीनो लोकों में सुंदर हैं, वही श्रीमान राम हमारे प्रभु हैं।

तरुणौ रूपसंपन्नौ सुकुमारौ महाबलौ ।

पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥१७॥

जो युवा, सुन्दर, सुकुमार, महाबली और कमलके (पुण्डरीक) समान विशाल नेत्रों वाले हैं, मुनियोंकी समान वस्त्र एवं काले मृगका चर्म धारण करते हैं।

फलमूलशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ ।

पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥१८॥

जो फल और कंदका आहार ग्रहण करते हैं, जो संयमी , तपस्वी एवं ब्रह्मचारी हैं, वे दशरथके पुत्र राम और लक्ष्मण दोनों भाई हमारी रक्षा करें।

शरण्यौ सर्वसत्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् ।

रक्ष:कुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो रघुत्तमौ ॥१९॥

ऐसे महाबली – रघुश्रेष्ठ मर्यादा पुरूषोतम समस्त प्राणियोंके शरणदाता, सभी धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ और राक्षसोंके कुलोंका समूल नाश करनेमें समर्थ हमारा रक्षण करें।

आत्तसज्जधनुषा विषुस्पृशा वक्षया शुगनिषङ्ग सङिगनौ ।

रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रत: पथि सदैव गच्छताम् ॥२०॥

संघान किए धनुष धारण किए, बाणका स्पर्श कर रहे, अक्षय बाणोसे युक्त तुणीर लिए हुए राम और लक्ष्मण मेरी रक्षा करनेके लिए मेरे आगे चलें ।

संनद्ध: कवची खड्गी चापबाणधरो युवा ।

गच्छन् मनोरथोSस्माकं राम: पातु सलक्ष्मण: ॥२१॥

हमेशा तत्पर, कवचधारी, हाथमें खडग, धनुष-बाण तथा युवावस्थावाले भगवान् राम लक्ष्मण सहित आगे-आगे चलकर हमारी रक्षा करें।

रामो दाशरथि: शूरो लक्ष्मणानुचरो बली ।

काकुत्स्थ: पुरुष: पूर्ण: कौसल्येयो रघुत्तम: ॥२२॥

भगवानका कथन है कि श्रीराम, दाशरथी, शूर, लक्ष्मनाचुर, बली, काकुत्स्थ , पुरुष, पूर्ण, कौसल्येय, रघुतम,

वेदान्तवेद्यो यज्ञेश: पुराणपुरुषोत्तम: ।

जानकीवल्लभ: श्रीमानप्रमेयपराक्रम: ॥२३॥

वेदान्त्वेघ, यज्ञेश, पुराण पुरूषोतम , जानकी वल्लभ, श्रीमान और अप्रमेय पराक्रम आदि नामों का

इत्येतानि जपेन्नित्यं मद्भक्त: श्रद्धयान्वित: ।

अश्वमेधाधिकं पुण्यं संप्राप्नोति न संशय: ॥२४॥

नित्यप्रति श्रद्धापूर्वक जप करनेवालेको निश्चित रूपसे अश्वमेध यज्ञसे भी अधिक फल प्राप्त होता हैं।

रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् ।

स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नर: ॥२५॥

दूर्वादलके समान श्याम वर्ण, कमल-नयन एवं पीतांबरधारी श्रीरामकी उपरोक्त दिव्य नामोंसे स्तुति करनेवाला संसारचक्रमें नहीं पड़ता।

रामं लक्ष्मण-पूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुंदरम्।

काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम्।

राजेन्द्रं सत्यसंधं दशरथनयं श्यामलं शान्तमूर्तिम्।

वन्दे लोकभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥२६॥

लक्ष्मण जीके पूर्वज , सीताजीके पति, काकुत्स्थ, कुल-नंदन, करुणाके सागर, गुण-निधान , विप्र भक्त, परम धार्मिक , राजराजेश्वर, सत्यनिष्ठ, दशरथके पुत्र, श्याम और शांत मूर्ति, सम्पूर्ण लोकोंमें सुन्दर, रघुकुल तिलक , राघव एवं रावणके शत्रु भगवान् रामकी मैं वंदना करता हूं।

रामाय रामभद्राय रामचंद्राय वेधसे।

रघुनाथाय नाथाय सीताया: पतये नम: ॥२७॥

राम, रामभद्र, रामचंद्र, विधात स्वरूप , रघुनाथ, प्रभु एवं सीताजीके स्वामीकी मैं वंदना करता हूं।

श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम। श्रीराम राम भरताग्रज राम राम।

श्रीराम राम रणकर्कश राम राम। श्रीराम राम शरणं भव राम राम ॥२८॥

हे रघुनन्दन श्रीराम ! हे भरतके अग्रज भगवान् राम! हे रणधीर, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ! आप मुझे शरण दीजिए।

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि। श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।

श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि। श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥२९॥

मैं एकाग्र मनसे श्रीरामचंद्रजीके चरणोंका स्मरण और वाणीसे गुणगान करता हूं, वाणी द्धारा और पूरी श्रद्धाके साथ भगवान् रामचन्द्रके चरणोंको प्रणाम करता हुआ मैं उनके चरणोंकी शरण लेता हूँ।

माता रामो मत्पिता रामचन्द्र:। स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्र:।

सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्। नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥३०॥

श्रीराम मेरे माता, मेरे पिता , मेरे स्वामी और मेरे सखा हैं। इस प्रकार दयालु श्रीराम मेरे सर्वस्व हैं, उनके सिवा मैं किसी दूसरे को नहीं जानता।

दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा ।

पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनंदनम् ॥३१॥

जिनके दाईं और लक्ष्मणजी, बाईं और जानकीजी और सामने हनुमान ही विराजमान हैं, मैं उन्ही रघुनाथजीकी वंदना करता हूं।

लोकाभिरामं रणरङ्गधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ।

कारुण्यरूपं करुणाकरन्तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ॥३२॥

मैं सम्पूर्ण लोकोंमें सुन्दर तथा रणक्रीडामें धीर, कमलनेत्र, रघुवंश नायक, करुणाकी मूर्ति और करुणाके भण्डार रुपी श्रीरामकी शरण में हूँ।

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।

वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥३३॥

जिनकी गति मनके समान और वेग वायुके समान (अत्यंत तेज) है, जो परम जितेन्द्रिय एवं बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हैं, मैं उन पवन-नंदन वानारग्रगण्य श्रीराम दूतकी शरण लेता हूं।

कूजन्तं राम-रामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।

आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥३४॥

मैं कवितामयी डालीपर बैठकर, मधुर अक्षरोंवाले 'राम-राम' के मधुर नामको कूजते हुए वाल्मीकि रुपी कोयलकी वंदना करता हूं।

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसंपदाम् ।

लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥३५॥

मैं इस संसारके प्रिय एवं सुन्दर , उन भगवान् रामको बार-बार नमन करता हूं, जो सभी आपदाओंको दूर करनेवाले तथा सुख-सम्पति प्रदान करनेवाले हैं।

भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसंपदाम् ।

तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम् ॥३६॥

राम-राम' का जप करनेसे मनुष्यके सभी कष्ट समाप्त हो जाते हैं। वह समस्त सुख-सम्पति तथा ऐश्वर्य प्राप्त कर लेता हैं। राम-रामकी गर्जनासे यमदूत सदा भयभीत रहते हैं।

रामो राजमणि: सदा विजयते रामं रमेशं भजे ।

रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नम: ।

रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहम् ।

रामे चित्तलय: सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर ॥३७॥

राजाओंमें श्रेष्ठ श्रीराम सदा विजयको प्राप्त करते हैं। मैं लक्ष्मीपति भगवान् श्रीरामका भजन करता हूं। सम्पूर्ण राक्षस सेनाका नाश करनेवाले श्रीरामको मैं नमस्कार करता हूं। श्रीरामके समान अन्य कोई आश्रयदाता नहीं। मैं उन शरणागत वत्सलका दास हूँ। मैं सद्सिव श्रीराममें ही लीन रहूं। हे श्रीराम! आप मेरा (इस संसार सागर से) उद्धार करें।

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।

सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥३८॥

शिव पार्वती से बोले – हे सुमुखी ! राम- नाम विष्णु सहस्त्रनाम के समान हैं। मैं सदा रामका स्तवन करता हूं और राम-नाममें ही रमण करता हूं।

इति श्रीबुधकौशिकविरचितं श्रीरामरक्षास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

इस प्रकार बुधकौशिकद्वारा रचित श्रीराम रक्षा स्तोत्र सम्पूर्ण होता है।

॥ श्री सीतारामचंद्रार्पणमस्तु ॥

बोध प्रश्न -

प्रश्न 1. "रक्षा" शब्द का मुख्य अर्थ क्या है?

(A) ज्ञान

(B) पूजा

(C) सुरक्षा

(D) त्याग

प्रश्न 2. रामायण के अनुसार "राम" नाम किसका प्रतीक है?

(A) केवल एक ऐतिहासिक व्यक्ति

(B) दिव्य शक्ति, धर्म और मर्यादा का सार

(C) युद्ध और विजय

(D) केवल भक्ति गीत

प्रश्न 3. हनुमान को समुद्र पार करने में शक्ति और आत्मविश्वास किससे प्राप्त हुआ?

(A) अपनी शारीरिक शक्ति से

(B) अन्य वानरों की सहायता से

(C) राम का स्मरण करने से

(D) जादुई वस्तु से

प्रश्न 4. रामायण में शरणागति का क्या महत्व बताया गया है?

(A) यह केवल एक परंपरा है

(B) इससे व्यक्ति कमजोर बनता है

(C) सच्चे मन से शरण लेने पर ईश्वर रक्षा करते हैं

(D) इसका कोई महत्व नहीं है

प्रश्न 5. वर्तमान समय में राम रक्षा स्तोत्र का महत्व क्यों बढ़ गया है?

(A) क्योंकि यह केवल धार्मिक अनुष्ठान है

(B) क्योंकि यह केवल परंपरा का हिस्सा है

(C) क्योंकि यह तनाव, चिंता और असुरक्षा को कम करने में सहायक है

(D) क्योंकि इसे केवल विद्वान लोग ही समझ सकते हैं

प्रश्न 6. राम रक्षा स्तोत्र के नियमित पाठ से क्या लाभ होता है?

(A) केवल शारीरिक शक्ति बढ़ती है

(B) मानसिक शांति और एकाग्रता बढ़ती है

(C) धन की प्राप्ति होती है

(D) केवल धार्मिक ज्ञान बढ़ता है

प्रश्न 7. "रक्षा" का आधुनिक संदर्भ में क्या अर्थ है?

(A) केवल बाहरी सुरक्षा

(B) केवल युद्ध में सुरक्षा

(C) शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक सुरक्षा

(D) केवल आध्यात्मिक सुरक्षा

प्रश्न 8. राम रक्षा स्तोत्र व्यक्ति में किस गुण का विकास करता है?

(A) आलस्य

(B) नकारात्मकता

(C) आत्मविश्वास और सकारात्मकता

(D) भ्रम और भय

1.5 सारांश

भारतीय धार्मिक और आध्यात्मिक परंपरा में स्तोत्रों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें "राम रक्षा स्तोत्र" एक विशेष स्थान रखता है, जो भगवान श्री राम की स्तुति और उनकी कृपा प्राप्त करने का एक प्रभावशाली माध्यम है। यह स्तोत्र केवल भक्ति का साधन नहीं, बल्कि एक "आध्यात्मिक कवच" (spiritual shield) के रूप में भी माना जाता है, जो साधक की रक्षा करता है और उसे मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक रूप से सुदृढ़ बनाता है। राम रक्षा स्तोत्र की शुरुआत भगवान राम के अनंत और दिव्य चरित्र के वर्णन से होती है। इसमें कहा गया है कि राम का चरित्र इतना व्यापक है कि उसका पूर्ण वर्णन असंभव है। उनके नाम का एक-एक अक्षर भी पापों का नाश करने वाला है। यह विचार इस बात को स्थापित करता है कि भगवान का नाम मात्र भी अत्यंत शक्तिशाली होता है। इस प्रकार स्तोत्र का प्रारंभ ही भक्ति और श्रद्धा की गहराई को दर्शाता है। इसके बाद स्तोत्र में भगवान राम के स्वरूप का ध्यान कराया गया है। उन्हें नीले कमल के समान श्याम वर्ण, कमल के समान सुंदर नेत्रों वाले, सीता और लक्ष्मण के साथ विराजमान तथा जटामुकुट धारण किए हुए बताया गया है। इस ध्यान का उद्देश्य साधक के मन में भगवान का स्पष्ट और दिव्य चित्र स्थापित करना है, जिससे उसका मन एकाग्र हो सके। ध्यान के माध्यम से व्यक्ति अपने मन को बाहरी विकर्षणों से हटाकर ईश्वर में केंद्रित करता है। स्तोत्र का मुख्य भाग "रक्षा कवच" के रूप में प्रस्तुत होता है, जिसमें शरीर के प्रत्येक अंग की रक्षा के लिए भगवान राम से प्रार्थना की गई है। इसमें सिर, आँख, कान, हृदय, हाथ, पैर आदि सभी अंगों के लिए अलग-अलग रूपों में राम का आह्वान किया गया है। इसका गहरा अर्थ यह है कि मनुष्य अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को भगवान के संरक्षण में समर्पित करता है। यह केवल शारीरिक सुरक्षा का प्रतीक नहीं, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक सुरक्षा का भी संकेत है। राम रक्षा स्तोत्र में आगे यह बताया गया है कि जो व्यक्ति श्रद्धा और विश्वास के साथ इसका पाठ करता है, वह दीर्घायु, सुखी, विजयी और विनम्र बनता है। उसे किसी प्रकार का भय नहीं रहता और वह सभी प्रकार के संकटों से सुरक्षित रहता है। यहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि स्तोत्र का प्रभाव केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि व्यावहारिक जीवन में भी दिखाई देता है। यह व्यक्ति के आत्मविश्वास को बढ़ाता है और उसे सकारात्मक दृष्टिकोण प्रदान करता है। स्तोत्र में "राम नाम" की महिमा का भी विशेष वर्णन किया गया है। यह कहा गया है कि केवल "राम" नाम का स्मरण करने से ही व्यक्ति पापों से मुक्त हो जाता है और उसे भौतिक सुख (भुक्ति) तथा मोक्ष (मुक्ति) दोनों प्राप्त होते

हैं। यह विचार भारतीय भक्ति परंपरा के उस सिद्धांत को पुष्ट करता है, जिसमें नाम-जप को सबसे सरल और प्रभावी साधन माना गया है। राम रक्षा स्तोत्र को "वज्र कवच" की उपमा दी गई है, जिसका अर्थ है कि यह अत्यंत मजबूत और अटूट सुरक्षा प्रदान करने वाला है। जो व्यक्ति इसे धारण करता है या स्मरण करता है, उसकी सभी इच्छाएँ पूर्ण होती हैं और उसे जीवन में सफलता प्राप्त होती है। यह विश्वास साधक के मन में दृढ़ता और निडरता उत्पन्न करता है। इस स्तोत्र की उत्पत्ति के संबंध में बताया गया है कि भगवान शिव ने इसे स्वप्न में ऋषि बुधकौशिक को प्रदान किया। इससे इसकी दिव्यता और महत्ता का पता चलता है। यह केवल एक साधारण रचना नहीं, बल्कि दैवी प्रेरणा से उत्पन्न एक पवित्र स्तोत्र है। स्तोत्र के मध्य भाग में भगवान राम और लक्ष्मण के स्वरूप, उनके गुणों और उनके आदर्श जीवन का वर्णन किया गया है। उन्हें धर्म, सत्य, करुणा और पराक्रम का प्रतीक बताया गया है। साथ ही यह भी प्रार्थना की गई है कि वे सदैव साधक के मार्ग में आगे चलकर उसकी रक्षा करें। यह प्रतीकात्मक रूप से यह दर्शाता है कि व्यक्ति को अपने जीवन में ईश्वर को मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार करना चाहिए। राम रक्षा स्तोत्र में भक्ति और समर्पण की भावना को विशेष महत्व दिया गया है। इसमें यह कहा गया है कि भगवान राम ही साधक के माता, पिता, मित्र और स्वामी हैं। यह पूर्ण समर्पण का भाव है, जिसमें व्यक्ति अपने अहंकार को त्यागकर स्वयं को ईश्वर के चरणों में अर्पित कर देता है। यही भक्ति का सर्वोच्च रूप माना गया है। इसके अतिरिक्त, स्तोत्र में हनुमान का भी स्मरण किया गया है, जो भगवान राम के परम भक्त और दूत हैं। हनुमान जी को शक्ति, बुद्धि और भक्ति का प्रतीक माना जाता है। उनका स्मरण साधक को साहस और निष्ठा प्रदान करता है।अंतिम श्लोकों में राम नाम की सर्वोच्च महिमा का वर्णन किया गया है। यह कहा गया है कि "राम" नाम का जप हजार नामों के बराबर है। यह विचार इस बात को रेखांकित करता है कि भक्ति में सरलता ही सबसे बड़ी शक्ति है। कठिन साधनाओं की अपेक्षा, सच्चे मन से किया गया नाम-स्मरण अधिक प्रभावशाली होता है। समग्र रूप से देखा जाए तो राम रक्षा स्तोत्र एक ऐसा ग्रंथ है, जो केवल धार्मिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है। यह व्यक्ति के जीवन को संतुलित, सकारात्मक और सुरक्षित बनाने का एक माध्यम है। यह मन को शांति देता है, आत्मविश्वास बढ़ाता है और जीवन की कठिनाइयों का सामना करने की शक्ति प्रदान करता है।

निष्कर्षतः, "राम रक्षा स्तोत्र" का सार यही है कि भगवान श्री राम का स्मरण, स्तुति और शरणागति ही मनुष्य के लिए सबसे बड़ा सुरक्षा कवच है। यह स्तोत्र व्यक्ति को बाहरी संकटों से ही नहीं, बल्कि उसके आंतरिक भय, संशय और दुर्बलताओं से भी मुक्त करता है और उसे एक श्रेष्ठ, संतुलित तथा आध्यात्मिक जीवन की ओर अग्रसर करता है।

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1, (C) 2, (B) 3, (C) 4, (C) 5, (C) 6, (B) 7, (C) 8, (C)

1. 6 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. नित्य कर्म पूजा प्रकाश

2. रामोपासना ग्रंथों में

3. स्तोत्र रत्नावली

4. नित्यपाठ संग्रह

5. वाल्मीकि रामायण

6. रामचरितमानस

7. महाभारत

1.7 निबंधात्मक प्रश्न

1. राम रक्षा स्तोत्र के महत्व पर प्रकाश डालिये।

2. वर्तमान परिपेक्ष में राम रक्षा स्तोत्र के महत्व पर विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई - 2 विष्णुसहस्र नाम

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विष्णुसहस्र नाम
बोध प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 350, के प्रथम खण्ड की द्वितीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है **विष्णुसहस्त्र नाम** इस इकाई में आप विष्णु भागवान से सम्बन्धित स्तोत्रों का अध्ययन करेंगें। विष्णु सहस्रनाम भारतीय धर्मग्रंथों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्तोत्र है, जिसका मूल स्रोत महाभारत के अनुशासन पर्व में प्राप्त होता है। यह प्रसंग उस समय का है जब भीष्म पितामह शरशय्या पर स्थित होकर धर्मराज युधिष्ठिर को धर्म, नीति और मोक्ष से संबंधित उपदेश दे रहे होते हैं। उसी क्रम में युधिष्ठिर के प्रश्नों—"किं एकं दैवतं लोके?", "किं वाप्येकं परायणम्?"—के उत्तर में भीष्म पितामह भगवान विष्णु के सहस्र (एक हजार) नामों का उपदेश देते हैं, जिसे 'विष्णु सहस्रनाम' के नाम से जाना जाता है। इस स्तोत्र में भगवान विष्णु के विविध गुणों, स्वरूपों, शक्तियों और उनके सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान तथा पालनकर्ता स्वरूप का अत्यंत सुंदर और दार्शनिक वर्णन किया गया है। प्रत्येक नाम अपने आप में एक विशेष अर्थ, तात्पर्य और आध्यात्मिक संदेश समेटे हुए है, जो साधक को ईश्वर के विभिन्न आयामों से परिचित कराता है। विष्णु सहस्रनाम केवल एक स्तुति मात्र नहीं है, बल्कि यह भक्ति, ज्ञान और कर्म—तीनों मार्गों का समन्वय प्रस्तुत करता है। इसमें भगवान के नामों के माध्यम से यह प्रतिपादित किया गया है कि परमात्मा सर्वत्र व्याप्त हैं और उनकी शरण में जाने से मनुष्य को समस्त दुःखों से मुक्ति प्राप्त होती है। इस स्तोत्र का नियमित पाठ मानसिक शांति, आत्मिक बल, सकारात्मक ऊर्जा तथा आध्यात्मिक उन्नति प्रदान करता है। साथ ही, यह भी मान्यता है कि विष्णु सहस्रनाम का जप करने से पापों का नाश होता है और जीवन में सुख, समृद्धि तथा कल्याण की प्राप्ति होती है। धार्मिक दृष्टि से यह स्तोत्र अत्यंत प्रभावशाली माना गया है और अनेक आचार्यों एवं संतों ने इसकी महिमा का गुणगान किया है। इस प्रकार, विष्णु सहस्रनाम भारतीय आध्यात्मिक परंपरा का एक अमूल्य रत्न है, जो न केवल ईश्वर की महिमा का गान करता है, बल्कि साधक के जीवन को धर्म, सदाचार और मोक्ष के मार्ग की ओर प्रेरित करता है। इस इकाई के माध्यम से इसके उद्गम, स्वरूप और महत्व को समझना न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि दार्शनिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा।

2.2 उद्देश्य

- **विष्णुसहस्र नाम** स्तोत्र के महत्व को समझ सकेंगें।
- वर्तमान में क्या उपादेयता है, इसे जान पायेंगे।

- ❖ **विष्णुसहस्र नाम** के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ❖ किस प्रकार से लाभकारी है, इसे समझ पायेंगे।

2.3 विष्णुसहस्र नाम

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात्।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

जिनके स्मरण करनेमात्रसे मनुष्य जन्म-मृत्यु- रूप संसारबन्धनसे मुक्त हो जाता है, सबकी उत्पत्तिके कारणभूत उन भगवान् विष्णुको नमस्कार है ॥

नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते ।
अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

सम्पूर्ण प्राणियोंके आदिभूत, पृथ्वीको धारण करनेवाले, अनेक रूपधारी और सर्वसमर्थ भगवान् विष्णुको प्रणाम है॥

वैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः ।
युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी कहते हैं- राजन् ! धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिरने सम्पूर्ण विधिरूप धर्म तथा पापोंका क्षय करने वाले धर्म-रहस्योंको सब प्रकार सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्मसे फिर पूछा ॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् ।
स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥ २ ॥

युधिष्ठिर बोले- दादाजी! समस्त जगत्में एक ही देव कौन है तथा इस लोकमें एक ही परम आश्रयस्थान कौन है? किस देवकी स्तुति-गुण-कीर्तन करनेसे तथा किस देवका नाना प्रकारसे बाह्य और आन्तरिक पूजन करनेसे मनुष्य कल्याणकी प्राप्ति कर सकते हैं? ॥ २ ॥

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।
किं जपन् मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥ ३ ॥

आप समस्त धर्मोंमें किस धर्मको परम श्रेष्ठ मानते हैं? तथा किसका जप करनेसे जीव जन्म- मरणरूप संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है ? ॥ ३ ॥

भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।

स्तुवन् नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥ ४ ॥

भीष्मजीने कहा-बेटा ! स्थावर-जंगमरूप संसार के स्वामी, ब्रह्मादि देवों के देव, देश-काल और वस्तु से अपरिच्छिन्न, क्षर-अक्षर से श्रेष्ठ पुरुषोत्तम का सहस्रनामों के द्वारा निरन्तर तत्पर रहकर गुण-संकीर्तन करने से पुरुष सब दुःखों से पार हो जाता है ॥ ४ ॥

तमेव चार्चयन् नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।

ध्यायन् स्तुवन् नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥ ५ ॥

तथा उसी विनाश रहित पुरुषका सब समय भक्ति से युक्त होकर पूजन करने से, उसीका ध्यान करने से तथा स्तवन एवं नमस्कार करने से पूजा करने वाला सब दुःखोंसे छूट जाता है ॥ ५ ॥

अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् ।

लोकाध्यक्षं स्तुवन् नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥ ६ ॥

उस जन्म-मृत्यु आदि छः भाव-विकारोंसे रहित, सर्वव्यापक, सम्पूर्ण लोकोंके महेश्वर, लोकाध्यक्ष देवकी निरन्तर स्तुति करनेसे मनुष्य सब दुःखोंसे पार हो जाता है॥ ६॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।

लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥ ७॥

ब्राह्मणों के हितकारी, सब धर्मों को जानने वाले, प्राणियों की कीर्ति को बढ़ाने वाले, सम्पूर्ण लोकों के स्वामी, समस्त भूतोंके उत्पत्ति-स्थान एवं संसारके कारणरूप परमेश्वरका स्तवन करनेसे मनुष्य सब दुःखोंसे छूट जाता है ॥ ७ ॥

एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।

यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥ ८ ॥

सम्पूर्ण धर्मोंमें मैं इसी धर्मको सबसे बड़ा मानता हूँ कि मनुष्य कमलनयन भगवान् वासुदेवका भक्तिपूर्वक गुण-संकीर्तनरूप स्तुतियोंसे सदा अर्चन करे॥ ८ ॥

परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।

परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥ ९ ॥

पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।

दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥ १० ॥

यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे ।

यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥ ११ ॥

तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते ।

विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥ १२ ॥

पृथ्वीपते ! जो परम महान् तेजःस्वरूप है, जो परम महान् तप:स्वरूप है, जो परम महान् ब्रह्म है, जो सबका परम आश्रय है, जो पवित्र करनेवाले तीर्थादिकों में परम पवित्र है, मंगलोंका भी मंगल है, देवोंका भी देव है तथा जो भूतप्राणियों का अविनाशी पिता है, कल्पके आदि में जिससे सम्पूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और फिर युगका क्षय होनेपर महाप्रलयमें जिसमें वे विलीन हो जाते हैं, उस लोक प्रधान, संसारके स्वामी, भगवान् विष्णुके हजार नामों को मुझसे सुनो, जो पाप और संसार-भयको दूर करने वाले हैं॥ ९-१२ ॥

यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।

ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥ १३ ॥

महान् आत्मस्वरूप विष्णु के जो नाम गुणके कारण प्रवृत्त हुए हैं, उनमेंसे जो-जो प्रसिद्ध हैं और मन्त्रद्रष्टा मुनियोंद्वारा जो सर्वत्र गाये गये हैं, उन समस्त नामों को पुरुषार्थ-सिद्धिके लिये वर्णन करता हूँ ॥ १३ ॥

ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ।

भूतकृद् भूतभृद् भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥ १४ ॥

ॐ सच्चिदानन्दस्वरूप, १ विश्वम्-विराट्स्वरूप, २ विष्णुः सर्वव्यापी, ३ वषट्कारः-जिनके उद्देश्यसे यज्ञमें वषट् क्रिया की जाती है, ऐसे यज्ञस्वरूप, ४ भूतभव्यभवत्प्रभुः - भूत, भविष्यत् और वर्तमानके स्वामी, ५भूतकृत्-रजोगुणको स्वीकार करके ब्रह्मारूपसे सम्पूर्ण भूतोंकी रचना करनेवाले, ६ भूतभृत्-सत्त्वगुणको स्वीकार करके सम्पूर्ण भूतोंका पालन-पोषण करनेवाले, ७ भावः-नित्यस्वरूप होते हुए भी स्वतः उत्पन्न होनेवाले, ८ भूतात्मा-सम्पूर्ण भूतोंके आत्मा, ९ भूतभावनः- भूतोंकी उत्पत्ति और वृद्धि करनेवाले॥ १४ ॥

पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।

अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥ १५ ॥

१० पूतात्मा-पवित्रात्मा, ११ परमात्मा-परमश्रेष्ठ नित्यशुद्ध-बुद्ध-मुक्तस्वभाव, १२ मुक्तानां परमा गतिः- मुक्त पुरुषोंकी सर्वश्रेष्ठ गतिस्वरूप, १३ अव्ययः- कभी विनाशको प्राप्त न होनेवाले, १४ पुरुषः-पुर अर्थात शरीरमें शयन करनेवाले, १५ साक्षी-बिना किसी व्यवधानके सब कुछ देखनेवाले,

१६ क्षेत्रज्ञः- क्षेत्र अर्थात् समस्त प्रकृतिरूप शरीरको पूर्णतया जाननेवाले, १७ अक्षर:-कभी क्षीण न होनेवाले ॥ १५ ॥

योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः ।
नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ॥ १६ ॥

१८ योगः-मनसहित सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियोंके निरोधरूप योगसे प्राप्त होनेवाले, १९ योगविदां नेता-योगको जाननेवाले भक्तोंके स्वामी, २० प्रधानपुरुषेश्वरः-प्रकृति और पुरुषके स्वामी, २१ नारसिंहवपुः-मनुष्य और सिंह दोनोंके-जैसा शरीर धारण करनेवाले नरसिंहरूप, २२ श्रीमान्-वक्ष:स्थलमें सदा श्रीको धारण करनेवाले, २३ केशव:-(क) ब्रह्मा, (अ) विष्णु और (ईश) महादेव-इस प्रकार त्रिमूर्तिस्वरूप, २४ पुरुषोत्तम:- रक्षर और अक्षर-इन दोनोंसे सर्वथा उत्तम ॥ १६ ॥

सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।
सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥ १७ ॥

२५ सर्वः सर्वरूप, २६ शर्व: सारी प्रजाका प्रलयकालमें संहार करनेवाले, २७ शिवः- तीनों गुणोंसे परे कल्याणस्वरूप, २८ स्थाणुः-स्थिर, २९ भूतादिः-भूतोंके आदिकारण, ३०निधिरव्ययः-प्रलयकालमें सब ॥ प्राणियोंके लीन होनेके लिये अविनाशी स्थानरूप, ३१ सम्भवः-अपनी इच्छासे भली प्रकार प्रकट होनेवाले, ॥ ३२ भावनः- समस्त भोक्ताओंके फलोंको उत्पन्न न करनेवाले, ३३ भर्ता-सबका भरण करनेवाले, ३४ से प्रभवः-उत्कृष्ट (दिव्य) जन्मवाले, ३५ प्रभुः-सबके , स्वामी, ३६ ईश्वर:- उपाधिरहित ऐश्वर्यवाले ॥ १७ ॥

स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।
अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥ १८ ॥

३७ स्वयम्भूः-स्वयं उत्पन्न होनेवाले, ३८ शम्भुः , भक्तोंके लिये सुख उत्पन्न करनेवाले, ३९ आदित्यः- द्वादश आदित्योंमें विष्णुनामक आदित्य, ४० पुष्कराक्षः- कमलके समान नेत्रवाले, ४१ महास्वनः-वेदरूप अत्यन्त महान् घोषवाले, ४२ अनादिनिधनः- जन्म- मृत्युसे रहित, ४३ धाता- विश्वको धारण करनेवाले, ॥ ४४ विधाता-कर्म और उसके फलोंकी रचना ट करनेवाले, ४५ धातुरुत्तमः-कार्य-कारणरूप सम्पूर्ण प्रपंचको धारण करनेवाले एवं सर्वश्रेष्ठ ॥ १८ ॥

अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥ १९ ॥

४६ अप्रमेयः-प्रमाणादिसे जाननेमें न आ सकनेवाले, ४७ हृषीकेशः -इन्द्रियोंके स्वामी, ४८ पद्मनाभः- ने, जगत्के कारणरूप कमलको अपनी नाभिमें स्थान देनेवाले, ४९ अमरप्रभुः-देवताओंके

स्वामी, ५० विश्वकर्मा- सारे जगत्की रचना करनेवाले, ५१ मनुः प्रजापति ॥ मनुरूप, ५२ त्वष्टा- संहारके समय सम्पूर्ण प्राणियोंको पक्षीण करनेवाले, ५३ स्थविष्ठः- अत्यन्त स्थूल, को ५४ स्थविरो ध्रुवः-अति प्राचीन एवं अत्यन्त स्थिर ॥ १९ ॥

अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।

प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम् ॥ २० ॥

५५ अग्राह्यः-मनसे भी ग्रहण न किये जा सकनेवाले, ५६ शाश्वतः सब कालमें स्थित रहनेवाले, ५७ कृष्ण:-सबके चित्तको बलात् अपनी ओर आकर्षित करनेवाले परमानन्दस्वरूप, ५८ लोहिताक्षः- लाल नेत्रोंवाले, ५९ प्रतर्दनः-प्रलयकालमें प्राणियोंका संहार करनेवाले, ६० प्रभूतः - ज्ञान, ऐश्वर्य आदि गुणोंसे सम्पन्न, ६१ त्रिककुब्धाम-ऊपर-नीचे और मध्यभेदवाली तीनों दिशाओंके आश्रयरूप, ६२ पवित्रम्-सबको पवित्र करनेवाले, ६३ मङ्गलं परम्-परम मंगलस्वरूप ॥ २० ॥

ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।

हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥ २१ ॥

६४ ईशानः सर्वभूतोंके नियन्ता, ६५ प्राणदः- सबके प्राणदाता, ६६ प्राण:- प्राणस्वरूप, ६७ ज्येष्ठः- सबके कारण होनेसे सबसे बड़े, ६८ श्रेष्ठः-सबमें उत्कृष्ट होनेसे परम श्रेष्ठ, ६९ प्रजापतिः – ईश्वररूपसे सारी प्रजाओंके स्वामी, ७० हिरण्यगर्भः- ब्रह्माण्डरूप हिरण्यमय अण्डके भीतर ब्रह्मारूपसे व्याप्त होनेवाले, ७१ भूगर्भः-पृथ्वीको गर्भमें रखनेवाले, ७२ माधवः- लक्ष्मीके पति, ७३ मधुसूदनः- मधुनामक दैत्यको मारनेवाले ॥ २१॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।

अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥ २२ ॥

७४ ईश्वर:- सर्वशक्तिमान् ईश्वर, ७५ विक्रमी- शूरवीरतासे युक्त, ७६ धन्वी-शार्ङ्गधनुष रखनेवाले, ७७ मेधावी - अतिशय बुद्धिमान्, ७८ विक्रमः – गरुड़ पक्षीद्वारा गमन करनेवाले, ७९ क्रमः- क्रमविस्तारके कारण, ८० अनुत्तमः-सर्वोत्कृष्ट, ८१ दुराधर्षः-किसीसे भी तिरस्कृत न हो सकनेवाले, ८२ कृतज्ञः -अपने निमित्तसे थोड़ा-सा भी त्याग किये जानेपर उसे बहुत माननेवाले यानि पत्र-पुष्पादि थोड़ी-सी वस्तु समर्पण करनेवालोंको भी मोक्ष दे देनेवाले, ८३ कृतिः-पुरुष- प्रयत्नके आधाररूप, ८४ आत्मवान्-अपनी ही महिमामें स्थित ॥ २२ ॥

सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।

अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥ २३ ॥

८५ सुरेशः-देवताओंके स्वामी, ८६ शरणम्- दीन-दुखियोंके परम आश्रय, ८७ शर्म-परमानन्दस्वरूप, ८८ विश्वरेताः - विश्वके कारण, ८९ प्रजाभवः-सारी प्रजाको उत्पन्न करनेवाले, ९० अहः-प्रकाशरूप, ९१ संवत्सरः- कालरूपसे स्थित, ९२ व्यालः- , शेषनागस्वरूप, ९३ प्रत्ययः-उत्तम बुद्धिसे जाननेमें र आनेवाले, ९४ सर्वदर्शनः-सबके द्रष्टा ॥ २३ ॥

अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः ।
वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥ २४ ॥

९५ अजः- जन्मरहित, ९६ सर्वेश्वरः – समस्त ईश्वरोंके भी ईश्वर, ९७ सिद्धः- नित्यसिद्ध, ९८ सिद्धिः- सबके फलस्वरूप, ९९ सर्वादिः-सब भूतोंके आदि कारण, १०० अच्युतः-अपनी स्वरूप- स्थितिसे कभी त्रिकालमें भी च्युत न होनेवाले, १०१ वृषाकपिः-धर्म और वराहरूप, १०२ अमेयात्मा-अप्रमेयस्वरूप, १०३ सर्वयोगविनिःसृतः - नाना प्रकारके शास्त्रोक्त साधनोंसे जाननेमें आनेवाले ॥ २४ ॥

वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मासम्मितः समः ।
अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥ २५ ॥

१०४ वसुः-सब भूतोंके वासस्थान, १०५ वसुमनाः- उदार मनवाले, १०६ सत्यः सत्यस्वरूप, १०७ समात्मा- सम्पूर्ण प्राणियोंमें एक आत्मारूपसे विराजनेवाले, १०८ असम्मितः-समस्त पदार्थोंसे मापे न जा सकनेवाले, १०९ समः सब समय समस्त विकारोंसे रहित, ११० अमोघः- भक्तोंके द्वारा पूजन, स्तवन अथवा स्मरण किये जानेपर उन्हें वृथा न करके पूर्णरूपसे उनका फल प्रदान करनेवाले, १११ पुण्डरीकाक्षः- कमलके समान नेत्रोंवाले, ११२ वृषकर्मा-धर्ममय कर्म करनेवाले, ११३ वृषाकृतिः- धर्मकी स्थापना करनेके लिये विग्रह धारण करनेवाले ॥ २५ ॥

रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।
अमृतः शाश्वतस्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥ २६ ॥

११४ रुद्रः-दुःखके कारणको दूर भगा देनेवाले, ११५ बहुशिराः- बहुत-से सिरोंवाले, ११६ बभ्रुः- लोकोंका भरण करनेवाले, ११७ विश्वयोनिः – विश्वको उत्पन्न करनेवाले, ११८ शुचिश्रवाः पवित्र कीर्तिवाले, ११९ अमृतः-कभी न मरनेवाले, १२० शाश्वतस्थाणुः- नित्य सदा एकरस रहनेवाले एवं स्थिर, १२१ वरारोहः- आरूढ़ होनेके लिये परम उत्तम अपुनरावृत्तिस्थानरूप, १२२ महातपाः-प्रताप (प्रभाव) रूप महान् तपवाले ॥ २६ ॥

सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।
वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः ॥ २७ ॥

१२३ सर्वगः-कारणरूपसे सर्वत्र व्याप्त रहनेवाले, १२४ सर्वविद्भानुः-सब कुछ जाननेवाले प्रकाशरूप, १२५ विष्वक्सेनः--युद्धके लिये की हुई तैयारीमात्रसे ही दैत्यसेनाको तितर-बितर कर डालनेवाले, १२६ जनार्दनः- भक्तोंके द्वारा अभ्युदयनिः श्रेयसरूप परम पुरुषार्थकी याचना किये जानेवाले, १२७ वेदः- वेदरूप, १२८ वेदवित्-वेद तथा वेदके अर्थको यथावत् जाननेवाले, १२९ अव्यङ्गः- ज्ञानादिसे परिपूर्ण अर्थात् किसी प्रकार अधूरे न रहनेवाले सर्वांगपूर्ण, १३० वेदाङ्गः-वेदरूप अंगोंवाले, १३१ वेदवित्- वेदोंको विचारनेवाले, १३२ कविः - सर्वज्ञ ॥ २७ ॥

लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।
चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥ २८ ॥

१३३ लोकाध्यक्षः- समस्त लोकोंके अधिपति, १३४ सुराध्यक्षः-देवताओंके अध्यक्ष, १३५ धर्माध्यक्षः- अनुरूप फल देनेके लिये धर्म और अधर्मका निर्णय करनेवाले, १३६ कृताकृतः- कार्यरूपसे कृत और कारणरूपसे अकृत, १९३७ चतुरात्मा - ब्रह्मा, विष्णु, महेश और निराकार ब्रह्म - इन चार स्वरूपोंवाले, १३८ चतुर्व्यूहः- उत्पत्ति, स्थिति, नाश और रक्षारूप चार व्यूहवाले, १३९ चतुर्दंष्ट्रः- चार दाढ़ोंवाले नरसिंहरूप, १४० चतुर्भुजः- चार भुजाओंवाले, वैकुण्ठवासी भगवान् विष्णु ॥ २८ ॥

भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ २९॥

१४१ भ्राजिष्णुः – एकरस प्रकाशस्वरूप, १४२ भोजनम्-ज्ञानियोंद्वारा भोगनेयोग्य अमृतस्वरूप, १४३ भोक्ता - पुरुषरूपसे भोक्ता, १४४ सहिष्णुः- सहनशील, १४५ जगदादिजः - जगत्के आदिमें हिरण्यगर्भ रूपसे स्वयं उत्पन्न होनेवाले, १४६ अनघः - पापरहित, १४७ विजयः -ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य आदि गुणोंमें सबसे बढ़कर, १४८ जेता-स्वभावसे ही समस्त भूतोंको जीतनेवाले, १४९ विश्वयोनिः - सबके कारणरूप, १५० पुनर्वसुः-पुनः-पुनः अवतार-शरीरोंमें निवास करनेवाले ॥ २९ ॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः ।
अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥ ३० ॥

१५१ उपेन्द्रः- इन्द्रके छोटे भाई, १५२ वामनः- वामनरूपसे अवतार लेनेवाले, १५३ प्रांसुः – तीनों प्रांसुः-तीनों लोकोंको लाँघनेके लिये त्रिविक्रमरूपसे ऊँचे होनेवाले, १५४ अमोघः-अव्यर्थ चेष्टावाले, १५५ शुचिः- स्मरण, स्तुति और पूजन करनेवालोंको पवित्र कर देनेवाले, १५६ ऊर्जितः – अत्यन्त बलशाली, १५७ अतीन्द्रः- स्वयंसिद्ध ज्ञान-ऐश्वर्यादिके कारण इन्द्रसे भी बढ़े - चढ़े हुए, १५८ संग्रहः- प्रलयके समय सबको समेट लेनेवाले, १५९ सर्गः सृष्टिके कारणरूप, १६० धृतात्मा-

जन्मादिसे रहित रहकर स्वेच्छासे स्वरूप धारण करनेवाले, १६१ नियमः प्रजाको अपने-अपने अधिकारोंमें नियमित करनेवाले, १६२ यमः – अन्तःकरणमें स्थित होकर नियमन करनेवाले ॥ ३० ॥

वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः ।
अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥ ३१ ॥

१६३ वेद्यः- कल्याणकी इच्छावालोंके द्वारा जानने योग्य, १६४ वैद्यः- सब विद्याओंके जाननेवाले, १६५ सदायोगी-सदा योगमें स्थित रहनेवाले, १६६ वीरहा-धर्मकी रक्षाके लिये असुर योद्धाओंको मार डालनेवाले, १६७ माधवः - विद्याके स्वामी, १६८ मधुः - अमृतकी तरह सबको प्रसन्न करनेवाले, १६९ अतीन्द्रियः - इन्द्रियोंसे सर्वथा अतीत, १७० महामायः- मायावियोंपर भी माया डालनेवाले, महान् मायावी, १७१ महोत्साहः-जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयके लिये तत्पर रहनेवाले परम उत्साही, १७२ महाबलः- महान् बलशाली॥३१॥

महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ।
अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥ ३२ ॥

१७३ महाबुद्धिः-महान् बुद्धिमान्, १७४ महावीर्यः- महान् पराक्रमी, १७५ महाशक्तिः महान् सामर्थ्यवान्, १७६महाद्युतिः-महान् कान्तिमान्, १७७ अनिर्देश्यवपुः- वर्णन करनेमें न आने योग्य स्वरूप, १७८ श्रीमान्- ऐश्वर्यवान् १७९ अमेयात्मा जिसका अनुमान न किया जा सके ऐसे आत्मावाले, १८० महाद्रिधृक्- अमृतमन्थन और गोरक्षणके समय मन्दराचल और गोवर्धन नामक महान् पर्वतोंको धारण करनेवाले ॥ ३२ ॥

महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः ।
अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः ॥ ३३ ॥

१८१ महेष्वासः-महान् धनुषवाले, १८२ महीभर्ता- पृथ्वीको धारण करनेवाले, १८३ श्रीनिवासः – अपने वक्षःस्थलमें श्रीको निवास देनेवाले, १८४ सतां गतिः- सत्पुरुषोंके परम आश्रय, १८५ अनिरुद्धः-किसीके भी द्वारा न रुकनेवाले, १८६ सुरानन्दः-देवताओंको आनन्दित करनेवाले, १८७ गोविन्दः- वेदवाणीके द्वारा अपनेको प्राप्त करा देनेवाले, १८८ गोविदां पतिः- वेदवाणीको जाननेवालोंके स्वामी ॥ ३३ ॥

मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।
हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥ ३४ ॥

१८९ मरीचिः - तेजस्वियोंके भी परम तेजरूप, १९० दमनः- प्रमाद करनेवाली प्रजाको यम आदिके रूपसे दमन करनेवाले, १९१ हंसः - पितामह ब्रह्माको वेदका ज्ञान करानेके लिये हंसरूप धारण

करनेवाले, १९२ सुपर्णः - सुन्दर पंखवाले गरुड़स्वरूप, १९३ भुजगोत्तमः- सर्पोंमें श्रेष्ठ शेषनागरूप, १९४ हिरण्यनाभः – सुवर्णके समान रमणीय नाभिवाले, १९५ सुतपाः – बदरिकाश्रममें नर-नारायणरूपसे सुन्दर तप करनेवाले, १९६ पद्मनाभः- कमलके समान सुन्दर नाभिवाले, १९७ प्रजापतिः- सम्पूर्ण प्रजाओंके पालनकर्ता ॥ ३४ ॥

अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः संधाता सन्धिमान्स्थिरः ।
अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥ ३५ ॥ 1

१९८ अमृत्युः - मृत्युसे रहित, १९९ सर्वदृक्- सब कुछ देखनेवाले, २०० सिंहः- दुष्टोंका विनाश करनेवाले, २०१ संधाता-प्राणियोंको उनके कर्मोंके फलोंसे संयुक्त करनेवाले, २०२ सन्धिमान् – सम्पूर्ण यज्ञ और तपोंके फलोंको भोगनेवाले, २०३ स्थिरः- सदा एक रूप, २०४ अजः-दुर्गुणोंको दूर हटा देनेवाले, २०५ दुर्मर्षणः- किसीसे भी सहन नहीं किये जा सकनेवाले, २०६ शास्ता - सबपर शासन करनेवाले, २०७ विश्रुतात्मा - वेदशास्त्रोंमें प्रसिद्ध स्वरूपवाले, २०८ सुरारिहा-देवताओंके शत्रुओंको मारनेवाले ॥ ३५ ॥

गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः ।
निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥ ३६ ॥

२०९ गुरुः - सब विद्याओंका उपदेश करनेवाले, २१० गुरुतमः - ब्रह्मा आदिको भी ब्रह्मविद्या प्रदान करनेवाले, २११ धाम- सम्पूर्ण जगत्के आश्रय, २१२ सत्यः सत्यस्वरूप, २१३ सत्यपराक्रमः – अमोघ पराक्रमवाले, २१४ निमिषः-योगनिद्रासे मुँदे हुए नेत्रोंवाले, २१५ अनिमिषः-मत्स्यरूपसे अवतार लेनेवाले, २१६ स्रग्वी वैजयन्तीमाला धारण करनेवाले, २१७ वाचस्पतिरुदारधीः-सारे पदार्थोंको प्रत्यक्ष करनेवाली बुद्धिसे युक्त समस्त विद्याओंके पति ॥ ३६ ॥

अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः ।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ ३७ ॥

२१८ अग्रणीः- मुमुक्षुओंको उत्तम पदपर ले जानेवाले, २१९ ग्रामणीः- भूतसमुदायके नेता, - २२० श्रीमान्- सबसे बढ़ी चढ़ी कान्तिवाले, २२१ न्यायः- प्रमाणोंके आश्रयभूत तर्ककी मूर्ति, २२२ नेता - जगत्- नेता-जगत्- रूप यन्त्रको चलानेवाले, २२३ समीरणः -श्वासरूपसे प्राणियोंसे चेष्टा करानेवाले, २२४ सहस्रमूर्धा- हजार सिरवाले, २२५ विश्वात्मा - विश्वके आत्मा, २२६ सहस्राक्षः-हजार आँखोंवाले, २२७ सहस्रपात्- हजार पैरोंवाले ॥ ३७॥

आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः ।
अहः संवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥ ३८ ॥

२२८ आवर्तन:- संसारचक्रको चलानेके स्वभाव- वाले, २२९ निवृत्तात्मा - संसारबन्धनसे नित्य मुक्तस्वरूप, २३० संवृतः - अपनी योगमायासे ढके हुए, २३१ सम्प्रमर्दनः - अपने रुद्र आदि स्वरूपसे सबका मर्दन करनेवाले, २३२ अहः संवर्तकः-सूर्यरूपसे सम्यक्तया दिनके प्रवर्तक, २३३ वह्निः - हविको वहन करनेवाले अग्निदेव, २३४ अनिलः - प्राणरूपसे वायुस्वरूप, २३५ धरणीधरः-वराह और शेषरूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ३८ ॥

सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग् विश्वभुग् विभुः ।
सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नुर्नारायणो नरः ॥ ३९॥

२३६ सुप्रसादः - शिशुपालादि अपराधियोंपर भी कृपा करनेवाले, २३७ प्रसन्नात्मा - प्रसन्न स्वभाववाले, २३८ विश्वधृक्-जगत्को धारण करनेवाले, २३९ विश्वभुक्- विश्वका पालन करनेवाले, २४० विभुः - सर्वव्यापी, २४१ सत्कर्ता-भक्तोंका सत्कार करनेवाले, २४२ सत्कृतः - पूजितोंसे भी पूजित, सत्कृतः-पूजितोंसे २४३ साधुः - भक्तोंके कार्य साधनेवाले, २४४ जह्नुः- संहारके समय जीवोंका लय करनेवाले, २४५ नारायणः - जलमें शयन करनेवाले, २४६ नरः- भक्तोंको परमधाममें ले जानेवाले ॥३९॥

असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।
सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥ ४० ॥

२४७ असंख्येयः - जिसके नाम और गुणोंकी संख्या न की जा सके, २४८ अप्रमेयात्मा -किसीसे भी मापे न जा सकनेवाले, २४९ विशिष्टः- सबसे उत्कृष्ट, २५० शिष्टकृत् - श्रेष्ठ बनानेवाले, २५१ शुचिः – परम शुद्ध, २५२ सिद्धार्थ:-इच्छित अर्थको सर्वथा सिद्ध कर चुकनेवाले, २५३ सिद्धसंकल्पः - सत्य- संकल्पवाले, २५४ सिद्धिदः - कर्म करनेवालोंको उनके अधिकारके अनुसार फल देनेवाले, २५५ सिद्धिसाधनः- सिद्धिरूप क्रियाके साधक ॥४०॥

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥ ४१ ॥

२५६ वृषाही - द्वादशाहादि यज्ञोंको अपनेमें स्थित रखनेवाले, २५७ वृषभः - भक्तोंके लिये इच्छित वस्तुओंकी वर्षा करनेवाले, २५८ विष्णुः-शुद्ध सत्त्वमूर्ति, २५९ वृषपर्वा-परमधाममें आरूढ़ होनेकी इच्छावालोंके लिये धर्मरूप सीढ़ियोंवाले, २६० वृषोदरः – अपने उदरमें धर्मको धारण करनेवाले, २६१ वर्धनः- भक्तोंको बढ़ानेवाले, २६२ वर्धमानः - संसाररूपसे बढ़नेवाले, २६३ विविक्तः – संसारसे पृथक् रहनेवाले, २६४ श्रुतिसागरः - वेदरूप जलके समुद्र ॥ ४१ ॥

सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।

नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥ ४२ ॥

२६५ सुभुजः- जगत्की रक्षा करनेवाली अति सुन्दर भुजाओंवाले, २६६ दुर्धरः- ध्यानद्वारा कठिनतासे धारण किये जा सकनेवाले, २६७ वाग्मी - वेदमयी वाणीको उत्पन्न करनेवाले, २६८ महेन्द्रः - ईश्वरोंके भी ईश्वर, २६९ वसुदः- धन देनेवाले, २७० वसुः - धनरूप, २७१ नैकरूपः- अनेक रूपधारी, २७२ बृहद्रूपः - विश्वरूपधारी, २७३ शिपिविष्टः- सूर्यकिरणोंमें स्थित रहनेवाले, २७४ प्रकाशन:-सबको प्रकाशित करनेवाले ॥ ४२ ॥

ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः ।

ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥ ४३ ॥

२७५ ओजस्तेजोद्युतिधरः - प्राण और बल, शूरवीरता आदि गुण तथा ज्ञानकी दीप्तिको धारण करनेवाले, २७६ प्रकाशात्मा-प्रकाशरूप, २७७ प्रतापन:- सूर्य आदि अपनी विभूतियोंसे विश्वको तप्त करनेवाले, २७८ ऋद्धः - धर्म, ज्ञान और वैराग्यादिसे सम्पन्न, २७९ स्पष्टाक्षरः - ओंकाररूप स्पष्ट अक्षरवाले, २८० मन्त्रः ऋक्, साम और यजुके मन्त्रस्वरूप, २८१ चन्द्रांशुः - संसारतापसे संतप्तचित्त पुरुषोंको चन्द्रमाकी किरणोंके समान आह्लादित करनेवाले, २८२ भास्करद्युतिः-सूर्यके समान प्रकाशस्वरूप ॥ ४३ ॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः ।

औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥४४॥

२८३ अमृतांशूद्भवः- समुद्रमन्थन करते समय चन्द्रमाको उत्पन्न करनेवाले, २८४ भानुः-भासनेवाले, २८५ शशबिन्दुः- खरगोशके समान चिह्नवाले चन्द्रस्वरूप, २८६ सुरेश्वरः-देवताओंके ईश्वर, २८७ औषधम्-संसाररोगको मिटानेके लिये औषधरूप, २८८ जगतः सेतुः-संसार-सागरको पार करानेके लिये सेतुरूप, २८९ सत्यधर्मपराक्रमः- सत्यस्वरूप धर्म और पराक्रमवाले ॥ ४४ ॥

भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।

कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥ ४५ ॥

२९० भूतभव्यभवन्नाथः - भूत, भविष्य और वर्तमानके स्वामी, २९१ पवनः - वायुरूप, २९२ पावनः- जगत्को पवित्र करनेवाले, २९३ अनलः - अग्निस्वरूप, २९४ कामहा-अपने भक्तजनोंके सकामभावको नष्ट करनेवाले, २९५ कामकृत्- भक्तोंकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाले, २९६ कान्तः - कमनीयरूप, २९७ काम:- (क) ब्रह्मा, (अ) विष्णु, (म) महादेव - इस प्रकार त्रिदेवरूप, २९८ कामप्रदः - भक्तोंको उनकी कामना की हुई वस्तुएँ प्रदान करनेवाले, २९९ प्रभुः- सर्वसामर्थ्यवान् ॥ ४५ ॥

युगादिकृद् युगावर्तो नैकमायो महाशनः ।

अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥ ४६ ॥

३०० युगादिकृत्-युगादिका आरम्भ करनेवाले, ३०१ युगावर्तः-चारों युगोंको चक्रके समान घुमानेवाले, ३०२ नैकमायः - अनेक मायाओंको धारण करनेवाले, ३०३ महाशनः- कल्पके अन्तमें सबको ग्रसन करनेवाले, ३०४ ॥

अदृश्य:- समस्त ज्ञानेन्द्रियोंके अविषय, ३०५अव्यक्तरूपः – निराकार स्वरूपवाले, ३०६ सहस्रजित् - युद्धमें हजारों देवशत्रुओंको जीतनेवाले, ३०७ अनन्तजित् - युद्ध और क्रीड़ा आदिमें सर्वत्र समस्त भूतोंको जीतनेवाले ॥ ४६ ॥

इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः ।

क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥ ४७ ॥

३०८ इष्टः - परमानन्दरूप होनेसे सर्वप्रिय, ३०९ अविशिष्टः- सम्पूर्ण विशेषणोंसे रहित, ३१० शिष्टेष्टः-शिष्ट पुरुषोंके इष्टदेव, ३११ शिखण्डी- मयूरपिच्छको अपना शिरोभूषण बना लेनेवाले, ३१२ नहुषः- भूतोंको मायासे बाँधनेवाले, ३१३ वृषः – कामनाओंको पूर्ण करनेवाले धर्मस्वरूप, ३१४ क्रोधहा क्रोधका नाश करनेवाले, ३१५ क्रोधकृत्कर्त्ता-क्रोध करनेवाले दैत्यादिके विनाशक, ३१६ विश्वबाहुः- सब ओर बाहुओंवाले, ३१७ महीधरः- पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ४७ ॥

अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः

अपां निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥ ४८ ॥

३१८ अच्युतः-छः भावविकारोंसे रहित, ३१९ प्रथितः - जगत्की उत्पत्ति आदि कर्मोंके कारण विख्यात, ३२० प्राणः- हिरण्यगर्भरूपसे प्रजाको जीवित रखनेवाले, ३२१ प्राणदः-सबका भरण-पोषण करनेवाले, ३२२ वासवानुजः- वामनावतारमें इन्द्रके अनुजरूपमें उत्पन्न होनेवाले, ३२३ अपां निधिः -जलको एकत्र रखनेवाले समुद्ररूप, ३२४ अधिष्ठानम् – उपादान कारणरूपसे सब भूतोंके आश्रय, ३२५ अप्रमत्तः – कभी प्रमाद न करनेवाले, ३२६ प्रतिष्ठितः- अपनी महिमामें स्थित ॥ ४८ ॥

स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।

वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरंदरः ॥ ४९ ॥

३२७ स्कन्दः-स्वामिकार्तिकेयरूप, ३२८स्कन्दधरः- धर्मपथको धारण करनेवाले, ३२९ धुर्यः- समस्त भूतोंके जन्मादिरूप धुरको धारण करनेवाले, ३३० वरदः- इच्छित वर देनेवाले, ३३१ वायुवाहनः - सारे वायुभेदोंको चलानेवाले, ३३२ वासुदेवः - सब भूतोंमें सर्वात्मारूपसे बसनेवाले, ३३३ बृहद्भानुः

- महान् किरणोंसे युक्त एवं सम्पूर्ण जगत्को प्रकाशित करनेवाले सूर्यरूप, ३३४ आदिदेवः-सबके आदिकारण देव, ३३५ पुरंदरः- असुरोंके नगरोंका ध्वंस करनेवाले ॥ ४९ ॥

अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।

अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥ ५० ॥

३३६ अशोकः - सब प्रकारके शोकसे रहित, ३३७ तारण:-संसारसागरसे तारनेवाले, ३३८ तारः- जन्म-जरा-मृत्युरूप भयसे तारनेवाले, ३३९ शूरः- पराक्रमी, ३४० शौरिः - शूरवीर श्रीवसुदेवजीके पुत्र, ३४१ जनेश्वरः- समस्त जीवोंके स्वामी, ३४२ अनुकूलः- आत्मारूप होनेसे सबके अनुकूल, ३४३ शतावर्तः- धर्मरक्षाके लिये सैकड़ों अवतार लेनेवाले, ३४४ पद्मी - अपने हाथमें कमल धारण करनेवाले, ३४५ पद्मनिभेक्षणः – कमलके समान कोमल दृष्टिवाले ॥ ५० ॥

पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।

महर्द्धिरृद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥ ५१ ॥

३४६ पद्मनाभः-हृदय-कमलके मध्य निवास करनेवाले, ३४७ अरविन्दाक्षः-कमलके समान आँखोंवाले, ३४८ पद्मगर्भः-हृदयकमलमें ध्यान करनेयोग्य, ३४९ शरीरभृत्-अन्नरूपसे सबके शरीरोंका भरण करनेवाले, ३५० महर्द्धिः-महान् विभूतिवाले, ३५१ ऋद्धः – सबमें बढ़े- चढ़े, ३५२ वृद्धात्मा-पुरातन स्वरूप, ३५३ महाक्षः- विशाल नेत्रोंवाले, ३५४ गरुडध्वजः - गरुडके चिह्नसे युक्त ध्वजावाले ॥५१॥

अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।

सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः ॥ ५२ ॥

३५५ अतुलः- तुलनारहित, ३५६ शरभः-शरीरोंको प्रत्यगात्मरूपसे प्रकाशित करनेवाले, ३५७ भीमः- जिससे पापियोंको भय हो ऐसे भयानक, ३५८ समयज्ञः- समभावरूप यज्ञसे सम्पन्न, ३५९ हविर्हरिः- यज्ञोंमें हविर्भागको और अपना स्मरण करनेवालोंके पापोंको हरण करनेवाले, ३६० सर्वलक्षणलक्षण्यः- समस्त लक्षणोंसे लक्षित होनेवाले, ३६१ लक्ष्मीवान्- अपने वक्षःस्थलमें लक्ष्मीजीको सदा बसानेवाले, ३६२ समितिञ्जयः - संग्रामविजयी ॥ ५२ ॥

विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।

महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥ ५३॥

३६३ विक्षरः-नाशरहित, ३६४ रोहितः- मत्स्यविशेषका स्वरूप धारण करके अवतार लेनेवाले, ३६५ मार्गः-परमानन्दप्राप्तिके साधन -स्वरूप, ३६६ हेतुः - संसारके निमित्त और उपादान कारण, ३६७ दामोदरः-यशोदाजीद्वारा रस्सीसे बँधे हुए उदरवाले, ३६८ सहः-भक्तजनोंके अपराधोंको सहन

करनेवाले, ३६९ महीधरः-पृथ्वीको धारण करनेवाले, ३७० महाभागः- महान् भाग्यशाली, ३७१ वेगवान् - तीव्रगतिवाले, ३७२ अमिताशनः- प्रलयकालमें सारे विश्वको भक्षण करनेवाले ॥ ५३॥

उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः ।
करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ५४ ॥

३७३ उद्भवः - जगत्की उत्पत्तिके उपादानकारण, ३७४ क्षोभणः - जगत्की उत्पत्तिके समय प्रकृति और पुरुषमें प्रविष्ट होकर उन्हें क्षुब्ध करनेवाले, ३७५ देवः- प्रकाशस्वरूप, ३७६ श्रीगर्भः-सम्पूर्ण ऐश्वर्यको अपने उदरमें रखनेवाले, ३७७ परमेश्वरः- सर्वश्रेष्ठ शासन करनेवाले, ३७८ करणम्-संसारकी उत्पत्तिके सबसे बड़े साधन, ३७९ कारणम्-जगत्के उपादान और निमित्तकारण, ३८० कर्ता-सबके रचयिता, ३८१ विकर्ता- विचित्र भुवनोंकी रचना करनेवाले, ३८२ गहनः-अपने विलक्षण स्वरूप, सामर्थ्य और लीलादिके कारण पहचाने न जा सकनेवाले, ३८३ गुहः-मायासे अपने स्वरूपको ढक लेनेवाले ॥ ५४ ॥

व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः ।
परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥ ५५ ॥

३८४ व्यवसायः - ज्ञानस्वरूप, ३८५ व्यवस्थानः- लोकपालादिकोंको, समस्त जीवोंको, चारों वर्णाश्रमोंको एवं उनके धर्मोंको व्यवस्थापूर्वक रचनेवाले, ३८६ संस्थानः-प्रलयके सम्यक् स्थान, ३८७ स्थानदः- ध्रुवादि भक्तोंको स्थान देनेवाले, ३८८ ध्रुवः- अचल स्वरूप, ३८९ परर्द्धिः - श्रेष्ठ विभूतिवाले, ३९० परमस्पष्टः- ज्ञानस्वरूप होनेसे परम स्पष्टरूप, ३९१ तुष्टः- एकमात्र परमानन्दस्वरूप, ३९२ पुष्टः- एकमात्र सर्वत्र परिपूर्ण, ३९३ शुभेक्षणः- दर्शनमात्रसे कल्याण करनेवाले ॥ ५५ ॥

रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।
वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ५६ ॥

३९४ रामः-योगीजनोंके रमण करनेके लिये नित्यानन्दस्वरूप, ३९५ विरामः -प्रलयके समय प्राणियोंको अपनेमें विराम देनेवाले, ३९६ विरजः- रजोगुण तथा तमोगुणसे सर्वथा शून्य, ३९७ मार्गः-मुमुक्षुजनोंके अमर होनेके साधनस्वरूप, ३९८ नेयः- उत्तम ज्ञानसे ग्रहण करनेयोग्य, ३९९ नयः - सबको नियममें रखनेवाले, ४०० अनयः-स्वतन्त्र, ४०१ वीरः - पराक्रमशाली, ४०२ शक्तिमतां श्रेष्ठः - शक्तिमानोंमें भी अतिशय शक्तिमान्, ४०३ धर्मः-धर्मस्वरूप, ४०४ धर्मविदुत्तमः- समस्त धर्मवेत्ताओंमें उत्तम ॥ ५६ ॥

वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।

हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥ ५७ ॥

४०५ वैकुण्ठः-परमधामस्वरूप, ४०६ पुरुषः- विश्वरूप शरीरमें शयन करनेवाले, ४०७ प्राणः- प्राणवायुरूपसे चेष्टा करनेवाले, ४०८ प्राणदः-सर्गके आदिमें प्राण प्रदान करनेवाले, ४०९ प्रणवः - ओंकार- स्वरूप, ४१० पृथुः - विराट्रूपसे विस्तृत होनेवाले, ४११ हिरण्यगर्भः- ब्रह्मारूपसे प्रकट होनेवाले, ४१२ शत्रुघ्नः-देवताओंके शत्रुओंको मारनेवाले, ४१३ व्याप्तः- कारणरूपसे सब कार्योंमें व्याप्त, ४१४ वायुः-पवनरूप, ४१५ अधोक्षजः-अपने स्वरूपसे
क्षीण न होनेवाले ॥ ५७ ॥

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः ।
उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥ ५८ ॥

४१६ ऋतुः-ऋतुस्वरूप, ४१७ सुदर्शनः – भक्तोंको सुगमतासे ही दर्शन दे देनेवाले, ४१८ कालः- सबकी गणना करनेवाले, ४१९ परमेष्ठी-अपनी प्रकृष्ट महिमामें स्थित रहनेके स्वभाववाले, ४२० परिग्रहः- शरणार्थियोंके द्वारा सब ओरसे ग्रहण किये जानेवाले, ४२१ उग्रः- सूर्यादिके भी भयके कारण, ४२२ संवत्सरः- सम्पूर्ण भूतोंके वासस्थान, ४२३ दक्षः- सब कार्योंको बड़ी कुशलतासे करनेवाले, ४२४ विश्रामः - विश्रामकी इच्छावाले मुमुक्षुओंको मोक्ष देनेवाले, ४२५ विश्वदक्षिणः – बलिके यज्ञमें समस्त विश्वको दक्षिणारूपमें प्राप्त करनेवाले ॥ ५८ ॥

विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।
अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥ ५९ ॥

४२६ विस्तारः- समस्त लोकोंके विस्तारके स्थान, ४२७ स्थावरस्थाणुः-स्वयं स्थितिशील रहकर पृथ्वी आदि, स्थितिशील पदार्थोंको अपनेमें स्थित रखनेवाले, ४२८ प्रमाणम् - ज्ञानस्वरूप होनेके कारण स्वयं प्रमाणरूप, ४२९ बीजमव्ययम् - संसारके अविनाशी कारण, ४३० अर्थः-सुखस्वरूप होनेके कारण सबके द्वारा प्रार्थनीय, ४३१ अनर्थः -पूर्णकाम होनेके कारण प्रयोजनरहित, ४३२ महाकोशः- बड़े खजानेवाले, ४३३ महाभोगः- यथार्थ सुखरूप महान् भोगवाले, ४३४ महाधनः- अतिशय यथार्थ धनस्वरूप ॥५९॥

अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः क्षामः समीहनः ॥६०॥

४३५ अनिर्विण्णः- उकताहटरूप विकारसे रहित, ४३६ स्थविष्ठः- विराट्रूपसे स्थित, ४३७ अभूः- अजन्मा, ४३८ धर्मयूपः- धर्मके स्तम्भरूप, ४३९ महामखः- महान् यज्ञस्वरूप, ४४० नक्षत्रनेमिः -

समस्त नक्षत्रोंके केन्द्रस्वरूप, ४४१ नक्षत्री चन्द्ररूप, ४४२ क्षमः - समस्त कार्योंमें समर्थ, ४४३ क्षामः - समस्त जगत्के निवासस्थान, ४४४ समीहनः सृष्टि आदिके लिये भलीभाँति चेष्टा करनेवाले ॥ ६०॥

यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः ।
सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥ ६१॥

४४५ यज्ञः-भगवान् विष्णु, ४४६ इज्यः -पूजनीय, ४४७ महेज्य:-सबसे अधिक उपासनीय, ४४८ क्रतुः- स्तम्भयुक्त यज्ञस्वरूप, ४४९ सत्रम्-सत्पुरुषोंकी रक्षा करनेवाले, ४५० सतां गतिः-सत्पुरुषोंकी परम गति, ४५१ सर्वदर्शी-समस्त प्राणियोंको और उनके कार्योंको देखनेवाले, ४५२ विमुक्तात्मा-सांसारिक बन्धनसे नित्यमुक्त आत्मस्वरूप, ४५३ सर्वज्ञः-सबको जाननेवाले, ४५४ ज्ञानमुत्तमम्-सर्वोत्कृष्ट ज्ञानस्वरूप ॥ ६१ ॥

सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।
मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥ ६२ ॥

४५५ सुव्रतः प्रणतपालनादि श्रेष्ठ व्रतोंवाले, ४५६ सुमुखः- सुन्दर और प्रसन्न मुखवाले, ४५७ सूक्ष्मः- अणुसे भी अणु, ४५८ सुघोषः-सुन्दर और गम्भीर वाणी बोलनेवाले, ४५९ सुखदः-अपने भक्तोंको सब प्रकारसे सुख देनेवाले, ४६० सुहृत्-प्राणिमात्रपर अहैतुकी दया करनेवाले परम मित्र, ४६१ मनोहर:-अपने रूप- लावण्य और मधुर भाषणादिसे सबके मनको हरनेवाले, ४६२ जितक्रोधः-क्रोधपर विजय करनेवाले अर्थात् अपने साथ अत्यन्त अनुचित व्यवहार करनेवालेपर भी क्रोध न करनेवाले, ४६३ वीरबाहुः - अत्यन्त पराक्रमशील भुजाओंसे युक्त, ४६४ विदारण:- अधर्मियोंको नष्ट करनेवाले ॥ ६२ ॥

स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।
वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥ ६३ ॥

४६५ स्वापनः-प्रलयकालमें समस्त प्राणियोंको अज्ञाननिद्रामें शयन करानेवाले, ४६६ स्ववशः - स्वतन्त्र, ४६७ व्यापी आकाशकी भाँति सर्वव्यापी ४६८ नैकात्मा- प्रत्येक युगमें लोकोद्धारके लिये अनेक रूप धारण करनेवाले, ४६९ नैककर्मकृत्-जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयरूप तथा भिन्न-भिन्न अवतारोंमें मनोहर लीलारूप अनेक कर्म करनेवाले, ४७० वत्सरः – सबके निवास-स्थान, ४७१ वत्सलः - भक्तोंके परम स्नेही, ४७२ वत्सी-वृन्दावनमें बछड़ोंका पालन करनेवाले, ४७३ रत्नगर्भः - रत्नोंको अपने गर्भमें धारण करनेवाले समुद्ररूप, ४७४ धनेश्वरः - सब प्रकारके धनोंके स्वामी ॥ ६३ ॥

धर्मगुब् धर्मकृद् धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।

अविज्ञाता सहस्त्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥ ६४॥

४७५धर्मगुप्-धर्मकी रक्षा करनेवाले, ४७६ धर्म- कृत्-धर्मकी स्थापना करनेके लिये स्वयं धर्मका आचरण करनेवाले, ४७७ धर्मी-सम्पूर्ण धर्मोंके आधार, ४७८ सत्-सत्यस्वरूप, ४७९ असत्-स्थूल जगत्स्वरूप, ४८० क्षरम्-सर्वभूतमय, ४८१ अक्षरम्-अविनाशी, ४८२ अविज्ञाता-क्षेत्रज्ञ जीवात्माको विज्ञाता कहते हैं, उनसे विलक्षण भगवान् विष्णु, ४८३ सहस्रांशुः- हजारों किरणोंवाले सूर्यस्वरूप, ४८४ विधाता – सबको अच्छी प्रकार धारण करनेवाले, ४८५ कृतलक्षणः- श्रीवत्स आदि चिह्नोंको धारण करनेवाले॥ ६४ ॥

गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।

आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥ ६५ ॥

४८६ गभस्तिनेमिः-किरणोंके बीचमें सूर्यरूपसे स्थित, ४८७ सत्त्वस्थः - अन्तर्यामीरूपसे समस्त प्राणियोंके अन्तःकरणमें स्थित रहनेवाले, ४८८ सिंहः-भक्त प्रह्लादके लिये नृसिंहरूप धारण करनेवाले, ४८९ भूतमहेश्वरः- सम्पूर्ण प्राणियोंके महान् ईश्वर, ४९० आदिदेवः- सबके आदि कारण और दिव्यस्वरूप, ४९१ महादेवः ज्ञानयोग और ऐश्वर्य आदि महिमाओंसे युक्त, ४९२ देवेशः-समस्त देवोंके स्वामी, ४९३ देवभृद्गुरुः- देवोंका विशेषरूपसे भरण-पोषण करनेवाले उनके परम गुरु॥ ६५ ॥

उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।

शरीरभूतभृद् भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥ ६६ ॥

४९४ उत्तरः-संसार-समुद्रसे उद्धार करनेवाले और सर्वश्रेष्ठ, ४९५ गोपतिः - गोपालरूपसे गायोंकी रक्षा करनेवाले, ४९६ गोप्ता - समस्त प्राणियोंका पालन और रक्षा करनेवाले, ४९७ ज्ञानगम्यः - ज्ञानके द्वारा जाननेमें आनेवाले, ४९८ पुरातनः- सदा एकरस रहनेवाले, सबके आदि पुराणपुरुष, ४९९ शरीरभूतभृत्-शरीरके उत्पादक पञ्चभूतोंका प्राणरूपसे पालन करनेवाले, ५००भोक्ता-निरतिशय आनन्दपुंजको भोगनेवाले, ५०१ कपीन्द्रः- बंदरोंके स्वामी श्रीराम, ५०२ भूरिदक्षिणः-श्रीरामादि अवतारोंमें यज्ञ करते समय बहुत-सी दक्षिणा प्रदान करनेवाले॥ ६६॥

सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित् पुरुसत्तमः ।

विनयो जयः सत्यसंधो दाशार्हः सात्वतां पतिः ॥ ६७ ॥

५०३ सोमपः- यज्ञोंमें देवरूपसे और यजमानरूपसे सोमरसका पान करनेवाले, ५०४ अमृतपः-समुद्रमन्थनसे निकाला हुआ अमृत देवोंको पिलाकर स्वयं पीनेवाले, ५०५ सोमः - ओषधियोंका पोषण करनेवाले चन्द्रमारूप, ५०६ पुरुजित्-बहुतोंको विजय लाभ करनेवाले, ५०७ पुरुसत्तमः-विश्वरूप और अत्यन्त श्रेष्ठ, ५०८ विनयः- दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, ५०९ जयः- सबपर विजय प्राप्त

करनेवाले, ५१० सत्यसंधः-सच्ची प्रतिज्ञा करनेवाले, ५११ दाशार्हः- दाशार्हकुलमें प्रकट होनेवाले, ५१२ सात्वतां पतिः-यादवोंके और अपने भक्तोंके स्वामी ॥ ६७ ॥

जीवो विनयितासाक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ।
अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥ ६८ ॥

५१३ जीवः - क्षेत्रज्ञरूपसे प्राणोंको धारण करनेवाले, ५१४ विनयितासाक्षी-अपने शरणापन्न भक्तोंके विनय- भावको तत्काल प्रत्यक्ष अनुभव करनेवाले, ५१५ मुकुन्दः - मुक्तिदाता, ५१६ अमितविक्रमः- वामनावतारमें पृथ्वी नापते समय अत्यन्त विस्तृत पैर रखनेवाले, ५१७ अम्भोनिधिः- जलके निधान समुद्रस्वरूप, ५१८ अनन्तात्मा - अनन्तमूर्ति, ५१९ महोदधिशयः- प्रलयकालके महान् समुद्रमें शयन करनेवाले, ५२० अन्तकः- प्राणियोंका संहार करनेवाले मृत्युस्वरूप ॥ ६८ ॥

अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः ।
आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥ ६९ ॥

५२१ अजः - अकार भगवान् विष्णुका वाचक है, उससे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मास्वरूप, ५२२ महार्हः- पूजनीय, ५२३ स्वाभाव्यः - नित्य सिद्ध होनेके कारण स्वभावसे ही उत्पन्न न होनेवाले, ५२४ जितामित्रः- रावण - शिशुपालादि शत्रुओंको जीतनेवाले, ५२५ प्रमोदनः- स्मरणमात्रसे नित्य प्रमुदित करनेवाले, ५२६ आनन्दः- आनन्दस्वरूप, ५२७ नन्दनः - सबको प्रसन्न करनेवाले, ५२८ नन्दः - सम्पूर्ण ऐश्वर्योंसे सम्पन्न, ५२९ सत्यधर्मा- धर्मज्ञानादि सब गुणोंसे युक्त, ५३० त्रिविक्रमः – तीन डगमें तीनों लोकोंको नापनेवाले ॥ ६९॥

महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।
त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत् ॥ ७० ॥

५३१ महर्षिः कपिलाचार्यः- सांख्यशास्त्रके प्रणेता भगवान् कपिलाचार्य, ५३२ कृतज्ञः-अपने भक्तोंकी सेवाको बहुत मानकर अपनेको उनका ऋणी समझनेवाले, ५३३ मेदिनीपतिः - पृथ्वीके स्वामी, ५३४ त्रिपदः- त्रिलोकीरूप तीन पैरोंवाले विश्वरूप, ५३५ त्रिदशाध्यक्षः- देवताओंके स्वामी, ५३६ महाशृङ्गः-मत्स्यावतारमें महान् सींग धारण करनेवाले, ५३७ कृतान्तकृत्-स्मरण करनेवालोंके समस्त कर्मोंका अन्त करनेवाले ॥ ७० ॥

महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।
गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥ ७१ ॥

५३८ महावराहः - हिरण्याक्षका वध करनेके लिये महावराहरूप धारण करनेवाले, ५३९ गोविन्दः- नष्ट हुई पृथ्वीको पुनः प्राप्त कर लेनेवाले, ५४० सुषेणः- पार्षदोंके समुदायरूप सुन्दर सेनासे सुसज्जित,

५४१ कनकाङ्गदी-सुवर्णका बाजूबंद धारण करनेवाले, ५४२ गुह्यः-हृदयाकाशमें छिपे रहनेवाले, ५४३ गभीरः- अतिशय गम्भीर स्वभाववाले, ५४४ गहनः – जिनके , स्वरूपमें प्रविष्ट होना अत्यन्त कठिन हो – ऐसे, ५४५ गुप्तः- वाणी और मनसे जाननेमें न आनेवाले, , ५४६ चक्रगदाधरः- भक्तोंकी रक्षा करनेके लिये चक्र और गदा आदि दिव्य आयुधोंको धारण करनेवाले ॥ ७१ ॥

वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः सङ्कर्षणोऽच्युतः ।
वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥ ७२ ॥

५४७ वेधाः - सब कुछ विधान करनेवाले, ५४८ स्वाङ्गः-कार्य करनेमें स्वयं ही सहकारी, ५४९ अजितः-किसीके द्वारा न जीते जानेवाले, ५५० कृष्णः- श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण, ५५१ दृढः – अपने ॥ स्वरूप और सामर्थ्यसे कभी भी च्युत न होनेवाले, ५५२ सङ्कर्षणोऽच्युतः - प्रलयकालमें एक साथ सबका संहार करनेवाले और जिनका कभी किसी भी कारणसे पतन न हो सके-ऐसे अविनाशी, ५५३ वरुणः- जलके स्वामी वरुणदेवता, ५५४ वारुणः- वरुणके

पुत्र वशिष्ठस्वरूप, ५५५ वृक्षः - अश्वत्थवृक्षरूप, ५५६ पुष्कराक्षः - कमलके समान नेत्रवाले, ५५७ , महामनाः- संकल्पमात्रसे उत्पत्ति, पालन और संहारआदि समस्त लीला करनेकी शक्तिवाले ॥ ७२ ॥

न भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः ।
आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥ ७३ ॥

५५८ भगवान् - उत्पत्ति और प्रलय, आना और जाना तथा विद्या और अविद्याको जाननेवाले एवं सर्वैश्वर्यादि छहों भगोंसे युक्त, ५५९ भगहा- अपने भक्तोंका प्रेम बढ़ानेके लिये उनके ऐश्वर्यका हरण करनेवाले, ५६० आनन्दी- परम सुखस्वरूप, - ५६१ वनमाली - वैजयन्ती वनमाला धारण करनेवाले, ५६२ हलायुधः - हलरूप शस्त्रको धारण करनेवाले बलभद्रस्वरूप, ५६३ आदित्यः - अदितिपुत्र वामन- भगवान्, ५६४ ज्योतिरादित्यः-सूर्यमण्डलमें विराजमान ज्योतिःस्वरूप, ५६५ सहिष्णुः - समस्त द्वन्द्वोंको सहन करनेमें समर्थ, ५६६ गतिसत्तमः- सर्वश्रेष्ठ गतिस्वरूप ॥ ७३ ॥

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।
दिविस्पृक् सर्वदृग् व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥ ७४ ॥

५६७ सुधन्वा - अतिशय सुन्दर शार्ङ्गधनुष धारण करनेवाले, ५६८ खण्डपरशुः-शत्रुओंका खण्डन करनेवाले फरसेको धारण करनेवाले परशुरामस्वरूप, ५६९ दारुणः-सन्मार्गविरोधियोंके लिये महान् भयंकर, ५७० द्रविणप्रदः - अर्थार्थी भक्तोंको धन-सम्पत्ति प्रदान करनेवाले, ५७१ दिविस्पृक्-स्वर्गलोकतक व्याप्त, ५७२ सर्वदृग् व्यासः-सबके द्रष्टा एवं वेदका विभाग करनेवाले श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासस्वरूप, ५७३ वाचस्पतिरयोनिजः -विद्याके स्वामी तथा बिना

योनिके स्वयं ही प्रकट होनेवाले ॥ ७४ ॥

त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।

संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥ ७५ ॥

५७४ त्रिसामा - देवव्रत आदि तीन साम श्रुतियोंद्वारा जिनकी स्तुति की जाती है - ऐसे परमेश्वर, ५७५ सामगः-सामवेदका गान करनेवाले, ५७६ साम- सामवेदस्वरूप, ५७७ निर्वाणम्-परमशान्तिके निधान परमानन्दस्वरूप, ५७८ भेषजम्-संसार-रोगकी ओषधि, ५७९ भिषक्-संसाररोगका नाश करनेके लिये गीतारूप उपदेशामृतका पान करानेवाले परम वैद्य, ५८० संन्यासकृत्-मोक्षके लिये संन्यासाश्रम और संन्यासयोगका निर्माण करनेवाले, ५८१ शमः-उपशमताका उपदेश देनेवाले, ५८२ शान्तः - परम शान्तस्वरूप, ५८३ निष्ठा - सबकी स्थितिके आधार अधिष्ठानस्वरूप, ५८४ शान्तिः - परम शान्तिस्वरूप, ५८५ परायणम्- मुमुक्षु पुरुषोंके परम प्राप्य-स्थान॥७५॥

शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।

गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥ ७६ ॥

५८६ शुभाङ्गः-अति मनोहर परम सुन्दर अंगोंवाले, ५८७ शान्तिदः - परम शान्ति देनेवाले, ५८८ स्रष्टा- सर्गके आदिमें सबकी रचना करनेवाले, ५८९ कुमुदः- पृथ्वीपर प्रसन्नतापूर्वक लीला करनेवाले, ५९० कुवलेशयः- जलमें शेषनागकी शय्यापर शयन करनेवाले, ५९१ गोहितः - गोपालरूपसे गायोंका और अवतार धारण करके भार उतारकर पृथ्वीका हित करनेवाले, ५९२ गोपतिः - पृथ्वीके और गायोंके स्वामी, ५९३ गोप्ता-अवतार धारण करके सबके सम्मुख प्रकट होते समय अपनी मायासे अपने स्वरूपको आच्छादित करनेवाले, ५९४ वृषभाक्षः- समस्त कामनाओंकी वर्षा करनेवाली कृपादृष्टिसे युक्त, ५९५ वृषप्रियः- धर्मसे प्यार करनेवाले ॥ ७६ ॥

अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः ।

श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः ॥ ७७ ॥

५९६ अनिवर्ती रणभूमिमें और धर्मपालनमें पीछे न हटनेवाले, ५९७ निवृत्तात्मा-स्वभावसे ही विषय-वासनारहित नित्य शुद्ध मनवाले, ५९८ संक्षेप्ता- विस्तृत जगत्को संहारकालमें संक्षिप्त यानी सूक्ष्म करनेवाले, ५९९ क्षेमकृत्-शरणागतकी रक्षा करनेवाले, ६०० शिवः - स्मरणमात्रसे पवित्र करनेवाले कल्याणस्वरूप, ६०१ श्रीवत्सवक्षाः- श्रीवत्स नामक चिह्नको वक्षःस्थलमें धारण करनेवाले, ६०२ श्रीवासः -श्रीलक्ष्मीजीके वासस्थान, ६०३ श्रीपतिः - परमशक्तिरूपा श्रीलक्ष्मीजीके स्वामी, ६०४ श्रीमतां वरः- सब प्रकारकी सम्पत्ति और ऐश्वर्यसे युक्त ब्रह्मादि समस्त लोकपालोंसे श्रेष्ठ ॥ ७७ ॥

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।

श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः ॥ ७८ ॥

६०५ श्रीदः - भक्तोंको श्री प्रदान करनेवाले, ६०६ श्रीशः - लक्ष्मीके नाथ, ६०७ श्रीनिवासः- श्रीलक्ष्मीजीके अन्तःकरणमें नित्य निवास करनेवाले, ६०८ श्रीनिधिः- समस्त श्रियोंके आधार, ६०९ श्रीविभावनः- सब मनुष्योंके लिये उनके कर्मानुसार नाना प्रकारके ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले, ६१० श्रीधरः – जगज्जननी श्रीको वक्षःस्थलमें धारण करनेवाले, ६११ श्रीकरः- स्मरण, स्तवन और अर्चन आदि करनेवाले भक्तोंके लिये श्रीका विस्तार करनेवाले, ६१२ श्रेयः - कल्याणस्वरूप, ६१३ श्रीमान्- सब श्रीमान्- सब प्रकारकी श्रियोंसे युक्त, ६१४ लोकत्रयाश्रयः - तीनों लोकोंके आधार ॥ ७८ ॥

स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः ।
विजितात्माविधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्न संशयः ॥ ७९ ॥

६१५ स्वक्षः-मनोहर कृपाकटाक्षसे युक्त परम सुन्दर आँखोंवाले, ६१६ स्वङ्गः- अतिशय कोमल, परम सुन्दर, मनोहर अंगोंवाले, ६१७ शतानन्दः-लीलाभेदसे सैकड़ों विभागोंमें विभक्त आनन्दस्वरूप, ६१८ नन्दिः- परमानन्दस्वरूप, ६१९ ज्योतिर्गणेश्वरः-नक्षत्रसमुदायोंके ईश्वर, ६२० विजितात्मा-जिते हुए मनवाले, ६२१ अविधेयात्मा - जिनके असली स्वरूपका किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके-ऐसे अनिर्वचनीयस्वरूप, ६२२ सत्कीर्तिः-सच्ची कीर्तिवाले, ६२३ छिन्नसंशयः - सब प्रकारके संशयोंसे रहित ॥ ७९ ॥

उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः ।
भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥ ८० ॥

६२४ उदीर्णः-सब प्राणियोंसे श्रेष्ठ, ६२५ सर्व- तश्चक्षुः- समस्त वस्तुओंको सब दिशाओंमें सदा-सर्वदा देखनेकी शक्तिवाले, ६२६ अनीशः-जिनका दूसरा कोई शासक न हो-ऐसे स्वतन्त्र, ६२७ शाश्वतस्थिरः- सदा एकरस स्थिर रहनेवाले, निर्विकार, ६२८ भूशयः- लंकागमनके लिये मार्गकी याचना करते समय समुद्रतटकी भूमिपर शयन करनेवाले, ६२९ भूषणः- स्वेच्छासे नाना अवतार लेकर अपने चरण-चिह्नोंसे भूमिकी शोभा बढ़ानेवाले, ६३० भूतिः समस्त विभूतियोंके आधारस्वरूप, ६३१ विशोकः-सब प्रकारसे शोकरहित, ६३२ शोकनाशनः- स्मृतिमात्रसे भक्तोंके शोकका समूल नाश करनेवाले ॥ ८० ॥

अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।
अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥ ८१ ॥

६३३ अर्चिष्मान्-चन्द्र-सूर्य आदि समस्त ज्योतियोंको देदीप्यमान करनेवाली अतिशय प्रकाशमय अनन्त किरणोंसे युक्त, ६३४ अर्चितः - ब्रह्मादि समस्त लोकोंसे पूजे जानेवाले, ६३५ कुम्भः-घटकी भाँति सबके निवासस्थान, ६३६ विशुद्धात्मा - परम शुद्ध निर्मल आत्मस्वरूप, ६३७ विशोधनः- स्मरणमात्रसे समस्त पापोंका नाश करके भक्तोंके अन्तःकरणको परम शुद्ध कर देनेवाले, ६३८ अनिरुद्धः - जिनको कोई बाँधकर नहीं रख सके-ऐसे चतुर्व्यूहमें अनिरुद्धस्वरूप, ६३९ अप्रतिरथः- प्रतिपक्षसे रहित, ६४० प्रद्युम्नः - परम श्रेष्ठ अपार धनसे युक्त चतुर्व्यूहमें प्रद्युम्नस्वरूप, ६४१ अमितविक्रमः- अपार पराक्रमी ॥ ८१ ॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥ ८२ ॥

६४२ कालनेमिनिहा - कालनेमि नामक असुरको मारनेवाले, ६४३ वीरः - परम शूरवीर, ६४४ शौरिः- शूरकुलमें उत्पन्न होनेवाले श्रीकृष्णस्वरूप, ६४५ शूरजनेश्वरः- अतिशय शूरवीरताके कारण इन्द्रादि शूरवीरोंके भी इष्ट, ६४६ त्रिलोकात्मा - अन्तर्यामीरूपसे तीनों लोकोंके आत्मा, ६४७ त्रिलोकेशः- तीनों लोकोंके स्वामी, ६४८ केशवः- ब्रह्मा, विष्णु और शिव-स्वरूप, ६४९ केशिहा- केशी नामके असुरको मारनेवाले, ६५० हरिः – स्मरणमात्रसे समस्त पापोंका हरण करनेवाले ॥८२॥

कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।
अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनंजयः ॥ ८३ ॥

६५१ कामदेवः - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष - इन चारों पुरुषार्थोंको चाहनेवाले मनुष्योंद्वारा अभिलषित समस्त कामनाओंके अधिष्ठाता परमदेव, ६५२ कामपालः-सकामी भक्तोंकी कामनाओंकी पूर्ति करनेवाले, ६५३ कामी- अपने प्रियतमोंको चाहनेवाले, ६५४ कान्तः-परम मनोहर स्वरूप, ६५५ कृतागमः- समस्त वेद और शास्त्रोंको रचनेवाले, ६५६ अनिर्देश्यवपुः- जिनके दिव्य स्वरूपका किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सके-ऐसे अनिर्वचनीय शरीरवाले, ६५७ विष्णुः - शेषशायी भगवान् विष्णु, ६५८ वीरः- बिना ही पैरोंके गमन करनेकी दिव्य शक्तिसे युक्त,६५९ अनन्तः- जिनके स्वरूप, शक्ति, ऐश्वर्य, सामर्थ्य और गुणोंका कोई भी पार नहीं पा सकता- ऐसे अविनाशी गुण, प्रभाव और शक्तियोंसे युक्त, ६६० धनञ्जयः - अर्जुनरूपसे दिग्विजयके समय बहुत-सा धन जीतकर लानेवाले ॥ ८३ ॥

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।
ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥ ८४ ॥

६६१ ब्रह्मण्यः-तप, वेद, ब्राह्मण और ज्ञानकी रक्षा करनेवाले, ६६२ ब्रह्मकृत् पूर्वोक्त तप आदिकी रचना करनेवाले, ६६३ ब्रह्मा- ब्रह्मारूपसे जगत्को उत्पन्न करनेवाले, ६६४ ब्रह्म-सच्चिदानन्दस्वरूप, व ६६५ ब्रह्मविवर्धनः- पूर्वोक्त ब्रह्मशब्दवाची तप आदिकी - वृद्धि करनेवाले, ६६६ ब्रह्मवित्-वेद और वेदार्थको पूर्णतया जाननेवाले, ६६७ ब्राह्मण:- समस्त वस्तुओंको - ब्रह्मरूपसे देखनेवाले, ६६८ ब्रह्मी ब्रह्मशब्दवाची तपादि समस्त पदार्थोंके अधिष्ठान, ६६९ ब्रह्मज्ञः – अपने आत्मस्वरूप ब्रह्मशब्दवाची वेदको पूर्णतया यथार्थ जाननेवाले,। ६७० ब्राह्मणप्रियः- ब्राह्मणोंको अतिशय प्रिय माननेवाले॥ ८४॥

महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।
महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥ ८५ ॥

६७१ महाक्रमः-बड़े वेगसे चलनेवाले, ६७२ महाकर्मा- भिन्न-भिन्न अवतारोंमें नाना प्रकारके महान् कर्म करनेवाले, ६७३ महातेजाः-जिसके तेजसे समस्त सूर्य आदि तेजस्वी देदीप्यमान होते हैं-ऐसे महान् तेजस्वी, ६७४ महोरगः-बड़े भारी सर्प यानी वासुकिस्वरूप, ६७५ महाक्रतुः - महान् यज्ञस्वरूप, ६७६ महायज्वा - लोकसंग्रहके लिये बड़े-बड़े यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाले, ॥ ६७७ महायज्ञः-जपयज्ञ आदि भगवत्प्राप्तिके साधनरूप : समस्त यज्ञ जिनकी विभूतियाँ हैं-ऐसे महान् यज्ञस्वरूप, ६७८ महाहविः -ब्रह्मरूप अग्निमें हवन किये जाने योग्य प्रपञ्चरूप हवि जिनका स्वरूप है-ऐसे महान् हविःस्वरूप॥ ८५ ॥

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।
पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥ ८६ ॥

६७९ स्तव्यः-सबके द्वारा स्तुति किये जाने योग्य, ६८० स्तवप्रियः - स्तुतिसे प्रसन्न होनेवाले, ६८१ स्तोत्रम्- जिनके द्वारा भगवान्के गुण-प्रभावका कीर्तन किया जाता है, वह स्तोत्र, ६८२ स्तुतिः- स्तवनक्रियास्वरूप, ६८३ स्तोता - स्तुति करनेवाले, ६८४ रणप्रियः-युद्धमें प्रेम करनेवाले, ६८५ पूर्णः- समस्त ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य और गुणोंसे परिपूर्ण, ६८६ पूरयिता अपने भक्तोंको सब प्रकारसे परिपूर्ण करनेवाले, ६८७ पुण्यः-स्मरणमात्रसे पापोंका नाश करनेवाले पुण्यस्वरूप, ६८८ पुण्यकीर्तिः- परमपावन कीर्तिवाले, ६८९ अनामयः - आन्तरिक और बाह्य सब प्रकारकी व्याधियोंसे रहित॥ ८६॥

मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।
वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥ ८७ ॥

६९० मनोजवः-मनकी भाँति वेगवाले, ६९१ तीर्थकरः-समस्त विद्याओंके रचयिता और उपदेशकर्ता, ६९२ वसुरेताः- हिरण्यमय पुरुष (प्रथम पुरुषसृष्टिका बीज) जिनका वीर्य है - ऐसे सुवर्णवीर्य, ६९३ वसुप्रदः- प्रचुर धन प्रदान करनेवाले, ६९४ वसुप्रदः – अपने भक्तोंको मोक्षरूप महान् धन देनेवाले, ६९५ वासुदेवः- वसुदेवपुत्र श्रीकृष्ण, ६९६ वसुः- सबके अन्तःकरणमें निवास करनेवाले, ६९७ वसुमनाः - समानभावसे सबमें निवास करनेकी शक्तिसे युक्त मनवाले, ६९८ हविः - यज्ञमें हवन किये जाने योग्य हविःस्वरूप॥ ८७ ॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।
शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥ ८८ ॥

६९९ सद्गतिः-सत्पुरुषोंद्वारा प्राप्त किये जाने योग्य गतिस्वरूप, ७०० सत्कृतिः - जगत्की रक्षा आदि सत्कार्य करनेवाले, ७०१ सत्ता-सदा-सर्वदा विद्यमान सत्तास्वरूप, ७०२ सद्भूतिः - बहुत प्रकारसे बहुत रूपोंमें भासित होनेवाले, ७०३ सत्परायणः -सत्पुरुषोंके परम प्रापणीय स्थान, ७०४ शूरसेनः- हनुमानादि श्रेष्ठ शूरवीर योद्धाओंसे युक्त सेनावाले, ७०५ यदुश्रेष्ठः- यदुवंशियोंमें सर्वश्रेष्ठ, ७०६ सन्निवासः -सत्पुरुषोंके आश्रय, ७०७ सुयामुनः- जिनके परिकर यमुना-तट निवासी गोपालबाल आदि अति सुन्दर हैं, ऐसे श्रीकृष्ण ॥ ८८ ॥

भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।
दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥ ८९ ॥

७०८ भूतावासः-समस्त प्राणियोंके मुख्य निवास- स्थान, ७०९ वासुदेवः-अपनी मायासे जगत्को आच्छादित करनेवाले परमदेव, ७१० सर्वासुनिलयः समस्त प्राणियोंके आधार, ७११ अनलः - अपार शक्ति और सम्पत्तिसे युक्त, ७१२ दर्पहा - धर्मविरुद्ध मार्गमें चलनेवालोंके घमण्डको नष्ट करनेवाले, ७१३ दर्पदः - अपने भक्तोंको विशुद्ध उत्साह प्रदान करनेवाले, ७१४ दृप्तः- नित्यानन्दमग्न, ७१५ दुर्धरः- बड़ी कठिनतासे हृदयमें धारित होनेवाले, ७१६ अपराजितः -दूसरोंसे अजित ॥ ८९ ॥

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥ ९० ॥

७१७ विश्वमूर्तिः- समस्त विश्व ही जिनकी मूर्ति है - ऐसे विराट्स्वरूप, ७१८ महामूर्ति :- बड़े रूपवाले, ७१९ दीप्तमूर्तिः - स्वेच्छासे धारण किये हुए देदीप्यमान स्वरूपसे युक्त, ७२० अमूर्तिमान् - जिनकी कोई मूर्ति नहीं - ऐसे निराकार, ७२१ अनेकमूर्तिः- नाना अवतारोंमें स्वेच्छासे लोगोंका उपकार करनेके लिये बहुत मूर्तियोंको धारण करनेवाले, ७२२ अव्यक्तः- अनेक मूर्ति होते हुए भी

जिनका स्वरूप किसी प्रकार व्यक्त न किया जा सके-ऐसे अप्रकटस्वरूप, ७२३ शतमूर्तिः - सैकड़ों मूर्तियोंवाले, ७२४ शताननः- सैकड़ों मुखोंवाले ॥ ९०॥

एको नैकः सवः कः किं यत् तत् पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥ ९१ ॥

७२५ एकः - सब प्रकारके भेद-भावोंसे रहित अद्वितीय, ७२६ नैकः - अवतार-भेदसे अनेक, ७२७ सवः- जिनमें सोमनामकी ओषधिका रस निकाला जाता है - ऐसे यज्ञ - स्वरूप, ७२८ कः - सुखस्वरूप, ७२९ किम् - विचारणीय ब्रह्मस्वरूप, ७३० यत्-स्वतः सिद्ध, ७३१ तत्-विस्तार करनेवाले, ७३२ पदमनुत्तमम्- मुमुक्षु पुरुषोंद्वारा प्राप्त किये जाने योग्य अत्युत्तम परमपदस्वरूप, ७३३ लोकबन्धुः- समस्त प्राणियोंके हित करनेवाले परम मित्र, ७३४ लोकनाथः – सबके द्वारा याचना किये जानेयोग्य लोकस्वामी, ७३५ माधवः- मधुकुलमें उत्पन्न होनेवाले, ७३६ भक्तवत्सलः- भक्तोंसे प्रेम करनेवाले ॥ ९१ ॥

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥ ९२ ॥

७३७ सुवर्णवर्णः - सोनेके समान पीतवर्णवाले, ७३८ हेमाङ्गः- सोनेके समान चमकीले अङ्गोंवाले, ७३९ वराङ्गः-परम श्रेष्ठ अंग-प्रत्यंगोंवाले, ७४० चन्दनाङ्गदी-चन्दनके लेप और बाजूबंदसे सुशोभित, ७४१ वीरहा-शूरवीर असुरोंका नाश करनेवाले, ७४२ विषमः-जिनके समान दूसरा कोई नहीं – ऐसे अनुपम, ७४३ शून्यः- समस्त विशेषणोंसे रहित, ७४४ घृताशीः-अपने आश्रित जनोंके लिये कृपासे सने हुए द्रवित संकल्प करनेवाले, ७४५ अचलः- किसी प्रकार भी विचलित न होनेवाले - अविचल, ७४६ चलः - वायुरूपसे सर्वत्र गमन करनेवाले ॥ ९२ ॥

अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥ ९३ ॥

७४७ अमानी-स्वयं मान न न चाहनेवाले, ७४८ मानदः- दूसरोंको मान देनेवाले, ७४९ मान्यः- सबके पूजनेयोग्य माननीय, ७५० लोकस्वामी- चौदह भुवनोंके स्वामी, ७५१ त्रिलोकधृक्- तीनों लोकोंको धारण करनेवाले, ७५२ सुमेधाः - अति उत्तम सुन्दर बुद्धिवाले, ७५३ मेधजः - यज्ञमें प्रकट होनेवाले, ७५४ धन्यः- नित्य कृतकृत्य होनेके कारण सर्वथा धन्यवादके पात्र, ७५५ सत्यमेधाः- सच्ची और श्रेष्ठ बुद्धिवाले, ७५६ धराधरः - अनन्त भगवान्‌के रूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले ॥ ९३ ॥

तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥ ९४ ॥

७५७ तेजोवृषः-अपने भक्तोंपर आनन्दमय तेजकी वर्षा करनेवाले, ७५८ द्युतिधरः- परम कान्तिको धारण करनेवाले, ७५९ सर्वशस्त्रभृतां वरः- समस्त शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, ७६० प्रग्रहः-भक्तोंके द्वारा अर्पित पत्र – पुष्पादिको ग्रहण करनेवाले, ७६१ निग्रहः- सबका निग्रह करनेवाले, ७६२ व्यग्रः- अपने भक्तोंको अभीष्ट फल देनेमें लगे हुए, ७६३ नैकशृङ्गः- नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपातरूप चार सींगोंको धारण करनेवाले शब्दब्रह्मस्वरूप, ७६४ गदाग्रजः-गदसे पहले जन्म लेनेवाले श्रीकृष्ण॥ ९४॥

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात्॥ ९५॥

७६५ चतुर्मूर्तिः-राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्नरूप चार मूर्तियोंवाले, ७६६ चतुर्बाहुः-चार भुजाओंवाले, ७६७ चतुर्व्यूहः- वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध- इन चार व्यूहोंसे युक्त, ७६८ चतुर्गतिः- सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्यरूप चार परम गतिस्वरूप, ७६९ चतुरात्मा-मन, बुद्धि, अहंकार और चित्तरूप चार अन्तःकरणवाले, ७७० चतुर्भावः-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- इन चारों पुरुषार्थोंके उत्पत्तिस्थान, ७७१ चतुर्वेदवित्-चारों वेदोंके अर्थको भलीभाँति ॥ जाननेवाले, ७७२ एकपात्-एक पादवाले यानी एक , पाद (अंश) -से समस्त विश्वको व्याप्त करनेवाले॥ ९५॥

समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गे दुरावासो दुरारिहा॥ ९६॥

७७३ समावर्तः-संसारचक्रको भलीभाँति घुमानेवाले, ७७४ अनिवृत्तात्मा सर्वत्र विद्यमान होनेके कारण जिनका आत्मा कहींसे भी हटा हुआ नहीं है, ऐसे, ७७५ दुर्जयः - किसीसे भी जीतनेमें न आनेवाले, ७७६ दुरतिक्रमः - जिनकी आज्ञाका कोई उल्लंघन नहीं कर सके, ऐसे, ७७७ दुर्लभः - बिना भक्तिके प्राप्त न ह होनेवाले, ७७८ दुर्गमः कठिनतासे जाननेमें आनेवाले, ७७९ दुर्गः-कठिनतासे प्राप्त होनेवाले, ७८० दुरावासः- बड़ी कठिनतासे योगीजनोंद्वारा हृदयमें बसाये जानेवाले, , ७८१ दुरारिहा-दुष्ट मार्गमें चलनेवाले दैत्योंका वध करनेवाले॥ ९६॥

शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः॥ ९७॥

७८२ शुभाङ्गः- कल्याणकारक सुन्दर अंगोंवाले, ७८३ लोकसारङ्गः-लोकोंके सारको ग्रहण करनेवाले, । ७८४ सु तन्तुः - सुन्दर विस्तृत जगत्रूप तन्तुवाले, ७८५ तन्तु वर्धनः- पूर्वोक्त जगत्-तन्तुको बढ़ानेवाले, ७८६ इन्द्रकर्मा - इन्द्रके समान कर्मवाले, ७८७ महाकर्मा- बड़े-बड़े कर्म करनेवाले, ७८८ कृतकर्मा - जो समस्त कर्तव्य कर्म कर चुके हों, जिनका कोई कर्तव्य शेष रहा हो -

ऐसे कृतकृत्य, ७८९ कृतागमः – स्वोचित अनेक कार्योंको पूर्ण करनेके लिये अवतार धारण : करके आनेवाले ॥ ९७ ॥

उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥ ९८ ॥

७९० उद्भवः-स्वेच्छासे श्रेष्ठ जन्म धारण करनेवाले, ७९१ सुन्दरः-परम सुन्दर, ७९२ सुन्दः- परम करुणाशील, ७९३ रत्ननाभः-रत्नके समान सुन्दर नाभिवाले, ७९४ सुलोचनः-सुन्दर नेत्रोंवाले, ७९५ अर्कः-ब्रह्मादि पूज्य पुरुषोंके भी पूजनीय, ७९६ वाजसनः याचकोंको अन्न प्रदान करनेवाले, ७९७ शृङ्गी-प्रलयकालमें सींगयुक्त मत्स्यविशेषका रूप धारण करनेवाले, ७९८ जयन्तः- शत्रुओंको पूर्णतया जीतनेवाले, ७९९ सर्वविज्जयी – सब कुछ जाननेवाले और सबको जीतनेवाले ॥ ९८ ॥

सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।
महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥ ९९ ॥

८०० सुवर्णबिन्दुः-सुन्दर अक्षर और बिन्दुसे युक्त ओंकारस्वरूप, ८०१ अक्षोभ्यः - किसीके द्वारा भी क्षुभित न किये जा सकनेवाले, ८०२ सर्ववागीश्वरेवरः- समस्त वाणीपतियोंके यानी ब्रह्मादिके भी स्वामी, ८०३ महाहदः - ध्यान करनेवाले जिसमें गोता लगाकर आनन्दमें मग्न होते हैं, ऐसे परमानन्दके महान् सरोवर, ८०४ महागर्तः- महान् रथवाले, ८०५ महाभूतः त्रिकालमें कभी नष्ट न होनेवाले महाभूतस्वरूप, ८०६ महानिधिः- सबके महान् निवास-स्थान ॥९९॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः
अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥ १०० ॥

८०७ कुमुदः - कु अर्थात् पृथ्वीको उसका भार उतारकर प्रसन्न करनेवाले, ८०८ कुन्दरः- हिरण्याक्षको मारनेके लिये पृथ्वीको विदीर्ण करनेवाले, ८०९ कुन्दः- परशुराम - अवतारमें पृथ्वी प्रदान करनेवाले, ८१० पर्जन्यः- बादलकी भाँति समस्त इष्ट वस्तुओंकी वर्षा करनेवाले, ८११पावनः-स्मरणमात्रसे पवित्र करनेवाले, ८१२ अनिलः -सदा प्रबुद्ध रहनेवाले, ८१३ अमृताशः- जिनकी आशा कभी विफल न हो-ऐसे अमोघसंकल्प, ८१४ अमृतवपुः - जिनका कलेवर कभी नष्ट न हो-ऐसे नित्य विग्रह, ८१५ सर्वज्ञः - सदा-सर्वदा सब कुछ जाननेवाले, ८१६ सर्वतोमुखः - सब ओर मुखवाले यानी जहाँ कहीं भी उनके भक्त भक्तिपूर्वक पत्र - पुष्पादि जो कुछ भी अर्पण करें, उसे भक्षण करनेवाले ॥ १०० ॥

सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥ १०१॥

८१७ सुलभः- नित्य - निरन्तर चिन्तन करनेवालेको और एकनिष्ठ श्रद्धालु भक्तको बिना ही परिश्रमके सुगमतासे प्राप्त होनेवाले, ८१८ सुव्रतः-सुन्दर भोजन करनेवाले यानी अपने भक्तोंद्वारा प्रेमपूर्वक अर्पण किये हुए पत्र-पुष्पादि मामूली भोजनको भी परम श्रेष्ठ मानकर खानेवाले, ८१९ सिद्धः-स्वभावसे ही समस्त सिद्धियोंसे युक्त, ८२० शत्रुजित्-देवता और सत्पुरुषोंके शत्रुओंको जीतनेवाले, ८२१ शत्रुतापनः-देव- शत्रुओंको तपानेवाले, ८२२ न्यग्रोधः- वटवृक्षरूप, ८२३ उदुम्बरः-कारणरूपसे आकाशके भी ऊपर रहनेवाले, ८२४ अश्वत्थः-पीपल वृक्षस्वरूप, ८२५ चाणूरान्ध्रनिषूदनः- चाणूर नामक अन्ध्रजातिके वीर मल्लको मारनेवाले॥ १०१ ॥

सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।
अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद् भयनाशनः ॥ १०२ ॥

८२६ सहस्रार्चिः - अनन्त किरणोंवाले सूर्यरूप, ८२७ सप्तजिह्वः - काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी और विश्वरुचि - इन सात जिह्वाओंवाले अग्निस्वरूप, ८२८ सप्तैधाः-सात दीप्तिवाले अग्निस्वरूप, ८२९ सप्तवाहनः - सात घोड़ोंवाले सूर्यरूप, ८३० अमूर्तिः- मूर्तिरहित निराकार, ८३१ अनघः - सबप्रकारसे निष्पाप, ८३२ अचिन्त्यः- किसी प्रकार भी चिन्तन करनेमें न आनेवाले अव्यक्तस्वरूप, ८३३ भयकृत्- दुष्टोंको भयभीत करनेवाले, ८३४ भयनाशनः- स्मरण करनेवालोंके और सत्पुरुषोंके भयका नाश करनेवाले॥ १०२ ॥

अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।
अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः ॥ १०३ ॥

८३५ अणुः - अत्यन्त सूक्ष्म, ८३६ बृहत्- सबसे बड़े, ८३७ कृशः- अत्यन्त पतले और हलके, ८३८ स्थूलः - अत्यन्त मोटे और भारी, ८३९ गुणभृत्- समस्त गुणोंको धारण करनेवाले, ८४० निर्गुणः - सत्त्व, रज और तम - इन तीनों गुणोंसे अतीत, ८४१ महान्- गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य और ज्ञान आदिकी अतिशयताके कारण परम महत्त्वसम्पन्न, ८४२ अधृतः – जिनको कोई भी धारण नहीं कर सकता - ऐसे निराधार, ८४३ स्वधृतः - अपने-आपसे धारित यानी अपनी ही महिमामें स्थित, ८४४ स्वास्यः - सुन्दर मुखवाले, ८४५ प्राग्वंशः - जिनसे समस्त वंश-परम्परा आरम्भ हुई है - ऐसे समस्त पूर्वजोंके भी पूर्वज आदिपुरुष, ८४६ वंशवर्धनः- जगत्-प्रपंचरूप वंशको और यादव वंशको बढ़ानेवाले॥ १०३॥

भारभृत् कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः ।
आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥ १०४ ॥

८४७ भारभृत्-शेषनाग आदिके रूपमें पृथ्वीका भार उठानेवाले और अपने भक्तोंके योगक्षेमरूप भारको वहन करनेवाले, ८४८ कथितः-वेद-शास्त्र और महापुरुषोंद्वारा जिनके गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य और स्वरूपका बारंबार कथन किया गया है, ऐसे सबके द्वारा वर्णित, ८४९ योगी- नित्य समाधियुक्त, ८५० योगीशः- समस्त योगियोंके स्वामी, ८५१ सर्वकामदः- समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाले, ८५२ आश्रमः – सबको विश्राम देनेवाले, ८५३ श्रमणः-दुष्टोंको संतप्त करनेवाले, ८५४ क्षामः-प्रलयकालमें सब प्रजाका क्षय करनेवाले, ८५५ सुपर्णः-वेदरूप सुन्दर पत्तोंवाले (संसारवृक्षस्वरूप), ८५६ वायुवाहनः - वायुको गमन करनेके लिये शक्ति देनेवाले॥ १०४॥

धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः।
अपराजितः सर्वसहो नियन्ता नियमोऽयमः॥ १०५॥

८५७ धनुर्धरः- धनुषधारी श्रीराम, ८५८ धनुर्वेदः- धनुर्विद्याको जाननेवाले श्रीराम, ८५९ दण्डः-दमन करनेवालोंकी दमनशक्ति, ८६० दमयिता-यम और राजा आदिके रूपमें दमन करनेवाले, ८६१ दमः-दण्डका कार्य यानी जिनको दण्ड दिया जाता है, उनका सुधार, ८६२ अपराजितः - शत्रुओंद्वारा पराजित न होनेवाले, ८६३ सर्वसहः-सब कुछ सहन करनेकी सामर्थ्यसे युक्त, अतिशय तितिक्षु, ८६४ नियन्ता-सबको अपने- अपने कर्तव्यमें नियुक्त करनेवाले, ८६५ अनियमः- नियमोंसे न बँधे हुए, जिनका कोई भी नियन्त्रण करनेवाला नहीं, ऐसे परमस्वतन्त्र, ८६६ अयम: जिनका कोई शासक नहीं ॥ १०५॥

सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः।
अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत् प्रीतिवर्धनः॥ १०६॥

८६७ सत्त्ववान् -बल, वीर्य, सामर्थ्य आदि समस्त तत्त्वोंसे सम्पन्न, ८६८ सात्त्विकः सत्त्वगुणप्रधानविग्रह, ८६९ सत्यः-सत्यभाषणस्वरूप, ८७० सत्यधर्मपरायणः- यथार्थ भाषण और धर्मके परम आधार, ८७१ अभिप्रायः- प्रेमीजन जिनको चाहते हैं - ऐसे परम इष्ट, ८७२ प्रियार्हः-अत्यन्त प्रिय वस्तु समर्पण करनेके लिये योग्य पात्र ८७३ अर्हः - सबके परम पूज्य, ८७४ प्रियकृत्-भजनेवालोंका प्रिय करनेवाले, ८७५ प्रीतिवर्धनः- अपने प्रेमियोंके प्रेमको बढ़ानेवाले॥ १०६॥

विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग् विभुः।
रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः॥ १०७॥

८७६ विहायसगतिः- आकाशमें गमन करनेवाले, ८७७ ज्योतिः - स्वयंप्रकाशस्वरूप, ८७८ सुरुचि:-सुन्दर रुचि और कान्तिवाले, ८७९ हुतभुक्-यज्ञमें हवन की हुई समस्त हविको अग्निरूपसे भक्षण करनेवाले, ८८० विभुः सर्वव्यापी, ८८१ रविः- समस्त रसोंका शोषण करनेवाले सूर्य, ८८२

विरोचनः- विविध प्रकारसे प्रकाश फैलानेवाले, ८८३ सूर्यः- शोभाको प्रकट करनेवाले, ८८४ सविता-समस्त जगत्को उत्पन्न करनेवाले, ८८५ रविलोचनः -सूर्यरूप
नेत्रोंवाले ॥ १०७ ॥

अनन्तो हुतभुग् भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।
अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥ १०८ ॥

८८६ अनन्तः - सब प्रकारसे अन्तरहित, ८८७ हुतभुक्-यज्ञमें हवन की हुई सामग्रीको उन-उन देवताओंके रूपमें भक्षण करनेवाले, ८८८ भोक्ता- जगत्का पालन करनेवाले, ८८९ सुखदः- भक्तोंको दर्शनरूप परम सुख देनेवाले, ८९० नैकजः - धर्मरक्षा, साधुरक्षा आदि परम विशुद्ध हेतुओंसे स्वेच्छापूर्वक अनेक जन्म धारण करनेवाले, ८९१ अग्रजः- सबसे पहले जन्मनेवाले आदिपुरुष, ८९२ अनिर्विण्णः- पूर्णकाम होनेके कारण उकताहटसे रहित, सदामर्षी-सत्पुरुषोंपर ८९३ ८९४ लोकाधिष्ठानम् – समस्त क्षमा करनेवाले, लोकोंके आधार, ८९५ अद्भुतः - अत्यन्त आश्चर्यमय ॥ १०८॥

सनात् सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः ।
स्वस्तिदः स्वस्तिकृत् स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणः ॥ १०९ ॥

८९६ सनात् - अनन्तकालस्वरूप, ८९७ सनातनतमः- सबके कारण होनेसे ब्रह्मादि पुरुषोंकी अपेक्षा भी परम पुराणपुरुष, ८९८ कपिल :- महर्षि कपिलावतार, ८९९ कपिः-सूर्यदेव, ९०० अव्ययः- सम्पूर्ण जगत्के लयस्थान, ९०१ स्वस्तिदः - परमानन्दरूप मंगल देनेवाले, ९०२ स्वस्तिकृत्- आश्रितजनोंका कल्याण करनेवाले, ९०३ स्वस्ति-कल्याणस्वरूप, ९०४ स्वस्तिभुक्- भक्तोंके कल्याणकी परम रक्षा करनेवाले, ९०५ स्वस्तिदक्षिणः - कल्याण करनेमें समर्थ और शीघ्र कल्याण करनेवाले ॥ १०९ ॥

अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।
शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥ ११० ॥

९०६ अरौद्रः - सब प्रकारके रुद्र (क्रूर) भावोंसे रहित शान्तिमूर्ति, ९०७ कुण्डली - सूर्यके समान प्रकाशमान मकराकृति कुण्डलोंको धारण करनेवाले, ९०८ चक्री- सुदर्शनचक्रको धारण करनेवाले, ९०९ विक्रमी – सबसे विलक्षण पराक्रमशील, ९१० ऊर्जितशासनः – जिनका श्रुति - स्मृतिरूप शासन अत्यन्त श्रेष्ठ है-ऐसे अतिश्रेष्ठ शासन करनेवाले, ९११ शब्दातिगः-शब्दकी जहाँ पहुँच नहीं, ऐसे वाणीके अविषय, ९१२ शब्दसह :- कठोर शब्दोंको सहन करनेवाले, ९१३ शिशिरः-

त्रितापपीड़ितोंको शान्ति देनेवाले शीतलमूर्ति, ९१४ शर्वरीकरः -ज्ञानियोंकी रात्रि संसार और अज्ञानियोंकी रात्रि ज्ञान- इन दोनोंको उत्पन्न करनेवाले ॥ ११०॥

अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः ।
विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ १११॥

९१५ अक्रूरः- सब प्रकारके क्रूरभावोंसे रहित, ९१६ पेशल: - मन, वाणी और कर्म - सभी दृष्टियोंसे सुन्दर होनेके कारण परम सुन्दर, ९१७ दक्षः – सब प्रकारसे समृद्ध, परमशक्तिशाली और क्षणमात्रमें बड़े- से बड़ा कार्य कर देनेवाले महान् कार्यकुशल, ९१८ दक्षिणः संहारकारी, ९१९ क्षमिणां वरः- क्षमा करनेवालोंमें सर्वश्रेष्ठ, ९२० विद्वत्तमः-विद्वानोंमें सर्वश्रेष्ठ परम विद्वान्, ९२१ वीतभयः-सब प्रकारके भयसे रहित, ९२२ पुण्यश्रवणकीर्तन:-जिनके नाम, गुण,
महिमा और स्वरूपका श्रवण और कीर्तन परम पावन हैं; ऐसे ॥ १११ ॥

उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ।
वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ११२ ॥

९२३ उत्तारणः - संसार-सागरसे पार करनेवाले, ९२४ दुष्कृतिहा- पापोंका और पापियोंका नाश करनेवाले, ९२५ पुण्यः-स्मरण आदि करनेवाले समस्त पुरुषोंको पवित्र कर देनेवाले, ९२६ दुःस्वप्ननाशनः- ध्यान, स्मरण, कीर्तन और पूजन करनेसे बुरे स्वप्नोंका नाश करनेवाले, ९२७ वीरहा - शरणागतोंकी विविध गतियोंका यानी संसार-चक्रका नाश करनेवाले, ९२८ रक्षण:- सब प्रकारसे रक्षा करनेवाले, ९२९ सन्तः - विद्या, विनय और धर्म आदिका प्रचार करनेके लिये संतोंके रूपमें प्रकट होनेवाले, ९३० जीवन:- समस्त प्रजाको प्राणरूपसे जीवित रखनेवाले, ९३१ पर्यवस्थितः- समस्त विश्वको व्याप्त करके स्थित रहनेवाले ॥ ११२ ॥

अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः।
चतुरस्त्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥ ११३॥

९३२ अनन्तरूपः- अमितरूपवाले, ९३३ अनन्तश्रीः- अपरिमित शोभासम्पन्न, ९३४ जितमन्युः- सब प्रकारसे क्रोधको जीत लेनेवाले, ९३५ भयापहः- भक्तभयहारी, ९३६ चतुरस्त्रः - मंगलमूर्ति, ९३७ गभीरात्मा- गम्भीर मनवाले, ९३८ विदिशः-अधिकारियोंको उनके कर्मानुसार विभागपूर्वक नाना प्रकारके फल देनेवाले, ९३९ व्यादिशः - सबको यथायोग्य विविध आज्ञा देनेवाले, ९४० दिशः- वेदरूपसे समस्त कर्मोंका फल बतलानेवाले ॥ ११३ ॥

अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।
जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥ ११४॥

१९४१ अनादिः - जिसका आदि कोई न हो ऐसे सबके कारणस्वरूप, ९४२ भूर्भुवः-पृथ्वीके भी आधार, ९४३ लक्ष्मी:- समस्त शोभायमान वस्तुओंकी शोभास्वरूप, ९४४ सुवीरः - उत्तम योधा, ९४५ रुचिराङ्गदः- परम रुचिकर

रुचिकर कल्याणमय बाजूबंदोंको धारण करनेवाले, ९४६ जननः - प्राणिमात्रको उत्पन्न करनेवाले, ९४७ जनजन्मादिः – जन्म लेनेवालोंके जन्मके मूल कारण, ९४८ भीमः - दुष्टोंको भय देनेवाले, ९४९ भीमपराक्रमः - अतिशय भय उत्पन्न करनेवाले, पराक्रमसे युक्त ॥ ११४॥

आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः ।

ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥ ११५ ॥

९५० आधारनिलयः - आधारस्वरूप पृथ्वी आदि समस्त भूतोंके स्थान, ९५१ अधाता - जिसका कोई भी बनानेवाला न हो ऐसे स्वयं स्थित, ९५२ पुष्पहास:- पुष्पकी भाँति विकसित हास्यवाले, ९५३ प्रजागरः- भली प्रकार जाग्रत् रहनेवाले नित्यप्रबुद्ध, ९५४ ऊर्ध्वगः- सबसे ऊपर रहनेवाले, ९५५ सत्पथाचारः – सत्पुरुषोंके मार्गका आचरण करनेवाले मर्यादापुरुषोत्तम, ९५६ प्राणदः-परीक्षित् आदि मरे हुओंको भी जीवन देनेवाले, ९५७ प्रणवः - ॐ कारस्वरूप, ९५८ पणः- यथायोग्य व्यवहार करनेवाले ॥ ११५ ॥

प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत् प्राणजीवनः ।

तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥ ११६ ॥

९५९ प्रमाणम्-स्वत:सिद्ध होनेसे स्वयं प्रमाणस्वरूप, ९६० प्राणनिलयः-प्राणोंके आधारभूत, ९६१ प्राणभृत्- समस्त प्राणोंका पोषण करनेवाले, ९६२ प्राणजीवन:- प्राणवायुके संचारसे प्राणियोंको जीवित रखनेवाले, ९६३ तत्त्वम्-यथार्थ तत्त्वरूप, ९६४ तत्त्ववित्- यथार्थ तत्त्वको पूर्णतया जाननेवाले, ९६५ एकात्मा- अद्वितीयस्वरूप, ९६६ जन्ममृत्युजरातिगः-जन्म, मृत्यु और बुढ़ापा आदि शरीरके धर्मोंसे सर्वथा अतीत ॥ ११६ ॥

भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।

यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥ ११७ ॥

९६७ भूर्भुवः स्वस्तरु:-'भू: भुवः स्वः' तीनों लोकोंवाले, संसारवृक्षस्वरूप, ९६८ तारः-संसार-सागरसे पार उतारनेवाले, ९६९ सविता-सबको उत्पन्न करनेवाले, ९७० प्रपितामहः - पितामह ब्रह्माके भी पिता, ९७१ यज्ञः-यज्ञस्वरूप, ९७२ यज्ञपतिः-समस्त यज्ञोंके अधिष्ठाता, ९७३ यज्वा यजमानरूपसे यज्ञ करनेवाले, ९७४ यज्ञाङ्गः-समस्त यज्ञरूप अंगोंवाले, वाराहस्वरूप, ९७५ यज्ञवाहनः-यज्ञोंको चलानेवाले ॥ ११७ ॥

यज्ञभृद् यज्ञकृद् यज्ञी यज्ञभुग् यज्ञसाधनः ।

यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च॥११८॥

९७६ यज्ञभृत्-यज्ञोंको धारण करनेवाले, ९७७ यज्ञकृत्-यज्ञोंके रचयिता, ९७८ यज्ञी- समस्त यज्ञ जिसमें समाप्त होते हैं-ऐसे यज्ञशेषी, ९७९ यज्ञभुक् - समस्त यज्ञोंके भोक्ता, ९८० यज्ञसाधनः- ब्रह्मयज्ञ, जपयज्ञ आदि बहुत-से यज्ञ जिनकी प्राप्तिके साधन हैं ऐसे, ९८१ यज्ञान्तकृत्-यज्ञोंका फल देनेवाले, ९८२ यज्ञगुह्यम्-यज्ञोंमें गुप्त निष्काम यज्ञस्वरूप, ९८३ अन्नम् - समस्त प्राणियोंके अन्न यानी अन्नकी भाँति उनकी सब प्रकारसे तुष्टि पुष्टि करनेवाले,

९८४ अन्नादः- समस्त अन्नोंके भोक्ता ॥ ११८ ॥

आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानः सामगायनः ।

देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥ ११९ ॥

९८५ आत्मयोनिः - जिनका कारण दूसरा कोई नहीं ऐसे स्वयं योनिस्वरूप, ९८६ स्वयंजातः – स्वयं अपने-आप स्वेच्छापूर्वक प्रकट होनेवाले, ९८७ वैखानः- पातालवासी हिरण्याक्षका वध करनेके लिये पृथ्वीको खोदनेवाले, वाराह अवतारधारी, ९८८ सामगायनः- सामवेदका गान करनेवाले, ९८९ देवकीनन्दनः- देवकीपुत्र, ९९० स्स्रष्टा - समस्त लोकोंके रचयिता, ९९१ क्षितीशः - पृथ्वीपति, ९९२ पापनाशनः- स्मरण, कीर्तन, पूजन और ध्यान आदि करनेसे समस्त पापसमुदायका नाश करनेवाले ॥ ११९॥

शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।

रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः॥ १२०॥

९९३ शङ्खभृत्-पाञ्चजन्यशंखको धारण करनेवाले, ९९४ नन्दकी - नन्दक नामक खड्ग धारण करनेवाले, ९९५ चक्री-सुदर्शन चक्र धारण करनेवाले, ९९६ शार्ङ्गधन्वा - शार्ङ्गधनुषधारी, ९९७ गदाधरः- कौमोदकी नामकी गदा धारण करनेवाले, ९९८ रथाङ्गपाणिः - भीष्मकी प्रतिज्ञा रखनेके लिये सुदर्शन चक्रको हाथमें धारण करनेवाले श्रीकृष्ण, ९९९ अक्षोभ्यः - जो किसी प्रकार भी विचलित नहीं किये जा सके, ऐसे, १००० सर्वप्रहरणायुधः – ज्ञात और अज्ञात जितने भी युद्धादिमें काम आनेवाले अस्त्र- शस्त्र हैं, उन सबको धारण करनेवाले ॥ १२०॥

सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति

यहाँ हजार नामोंकी समाप्ति दिखलानेके लिये अन्तिम नामको दुबारा लिखा गया है। मंगलवाची होनेसे ॐकारका स्मरण किया गया है। अन्तमें नमस्कार करके भगवान्‌की पूजा की गयी है।

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।

नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥ १२१ ॥

इस प्रकार यह कीर्तन करने योग्य महात्मा केशवके दिव्य एक हजार नामोंका पूर्णरूपसे वर्णन कर दिया ॥ १२१ ॥

य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।
नाशुभं प्राप्नुयात् किंचित् सोऽमुत्रेह च मानवः ॥ १२२ ॥

जो मनुष्य इस विष्णुसहस्रनामका सदा श्रवण करता है और जो प्रतिदिन इसका कीर्तन या पाठ करता है, उसका इस लोकमें तथा परलोकमें कहीं भी कुछ अशुभ नहीं होता ॥ १२२ ॥

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥ १२३ ॥

इस विष्णुसहस्रनामका श्रवण, पठन और कीर्तन करनेसे ब्राह्मण वेदान्त - पारगामी हो जाता है, क्षत्रिय युद्धमें विजय पाता है, वैश्य धनसे सम्पन्न होता है और शूद्र सुख पाता है ॥ १२३ ॥

धर्मार्थी प्राप्नुयाद् धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात् कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात् प्रजाम् ॥ १२४॥

धर्मकी इच्छावाला धर्मको पाता है, अर्थकी इच्छावाला अर्थ पाता है, भोगोंकी इच्छावाला भोग पाता है और संतानकी इच्छावाला संतान पाता है ॥ १२४॥

भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत् प्रकीर्तयेत् ॥ १२५ ॥
यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।
अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥ १२६ ॥
न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।
भवत्यरोगो द्युतिमान् बलरूपगुणान्वितः ॥ १२७ ॥

जो भक्तिमान् पुरुष सदा प्रातःकालमें उठकर स्नान करके पवित्र हो मनमें विष्णुका ध्यान करता हुआ इस वासुदेव-सहस्रनामका भली प्रकार पाठ करता है, वह महान् यश पाता है, जातिमें महत्त्व पाता है, अचल सम्पत्ति पाता है और अति उत्तम कल्याण पाता है तथा उसको कहीं भय नहीं होता। वह वीर्य और तेजको पाता है तथा आरोग्यवान्, कान्तिमान्, बलवान्, रूपवान् और सर्वगुणसम्पन्न हो जाता है ॥ १२५-१२७ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगाद् बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥ १२८ ॥

रोगातुर पुरुष रोगसे छूट जाता है, बन्धनमें पड़ा हुआ पुरुष बन्धनसे छूट जाता है, भयभीत भयसे छूट जाता है और

आपत्तिमें पड़ा हुआ आपत्तिसे छूट जाता है॥ १२८ ॥

दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम्।

स्तुवन् नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः॥ १२९ ॥

जो पुरुष भक्तिसम्पन्न होकर इस विष्णुसहस्रनामसे पुरुषोत्तम भगवान्‌की प्रतिदिन स्तुति करता है, वह शीघ्र ही समस्त संकटोंसे पार हो जाता है॥ १२९ ॥

वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः।

सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम्॥ १३० ॥

जो मनुष्य वासुदेवके आश्रित और उनके परायण है, वह समस्त पापोंसे छूटकर विशुद्ध अन्तःकरणवाला हो सनातन परब्रह्मको पाता है॥ १३० ॥

न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित्।

जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते॥ १३१ ॥

वासुदेवके भक्तोंका कहीं कभी भी अशुभ नहीं होता है तथा उनको जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिका भी भय नहीं रहता है॥ १३१ ॥

इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः।

युज्येतात्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः॥ १३२ ॥

जो पुरुष श्रद्धापूर्वक भक्तिभावसे इस विष्णुसहस्रनामका पाठ करता है, वह आत्मसुख, क्षमा, लक्ष्मी, धैर्य, स्मृति और कीर्तिको पाता है॥ १३२ ॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः।

भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे॥ १३३ ॥

पुरुषोत्तमके पुण्यात्मा भक्तोंको किसी दिन क्रोध नहीं आता, ईर्ष्या उत्पन्न नहीं होती, लोभ नहीं होता और उनकी बुद्धि कभी अशुद्ध नहीं होती॥ १३३ ॥

द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः।

वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः॥ १३४॥

स्वर्ग, सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रसहित आकाश, दस दिशाएँ, पृथ्वी और महासागर-ये सब महात्मा वासुदेवके प्रभावसे धारण किये गये हैं॥ १३४ ॥

ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम्।

जगद् वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम्॥ १३५ ॥

देवता, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष, सर्प और राक्षससहित यह स्थावर-जंगमरूप सम्पूर्ण जगत् श्रीकृष्णके अधीन रहकर यथायोग्य बरत रहे हैं॥ १३५ ॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।

वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥ १३६ ॥

इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, सत्त्व, तेज, बल, धीरज, क्षेत्र, (शरीर) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा) – ये सब-के-सब श्रीवासुदेवके रूप हैं, ऐसा वेद कहते हैं॥ १३६ ॥

सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते ।

आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥ १३७ ॥

सब शास्त्रोंमें आचार प्रथम माना जाता है, आचारसे ही धर्मकी उत्पत्ति होती है और धर्मके स्वामी भगवान् अच्युत हैं॥ १३७ ॥

ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।

जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥ १३८ ॥

ऋषि, पितर, देवता, पञ्च महाभूत, धातुएँ और स्थावर-जंगमात्मक सम्पूर्ण जगत्-ये सब नारायणसे ही उत्पन्न हुए हैं॥१३८॥

योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्या शिल्पादि कर्म च ।

वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत् सर्वं जनार्दनात् ॥ १३९ ॥

योग, ज्ञान, सांख्य, विद्याएँ, शिल्प आदि कर्म, वेद, शास्त्र और विज्ञान—ये सब विष्णुसे उत्पन्न हुए हैं॥ १३९ ॥

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।

त्रींल्लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥ १४०॥

वे समस्त विश्वके भोक्ता और अविनाशी विष्णु ही एक ऐसे हैं, जो अनेक रूपोंमें विभक्त होकर भिन्न-भिन्न भूतविशेषोंके अनेक रूपोंको धारण कर रहे हैं तथा त्रिलोकीमें व्याप्त होकर सबको भोग रहे हैं ॥१४० ॥

इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।

पठेद् य इच्छेत् पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥ १४१ ॥

जो पुरुष परम श्रेय और सुख पाना चाहता हो, वह भगवान् व्यासजीके कहे हुए इस विष्णुसहस्रनामस्तोत्रका पाठ करे॥ १४१ ॥

विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम्।

भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम्॥ १४२॥

जो विश्वके ईश्वर जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करनेवाले जन्मरहित कमललोचन भगवान् विष्णुका

भजन करते हैं, वे कभी पराभव नहीं पाते हैं॥ १४२॥

बोध प्रश्न

1. विष्णु सहस्रनाम का वर्णन किस ग्रंथ में मिलता है?

क. रामायण

ख. पुराण

ग. महाभारत

घ. उपनिषद्

2. विष्णु सहस्रनाम महाभारत के किस पर्व से लिया गया है?

क. भीष्म पर्व

ख. द्रोण पर्व

ग. अनुशासन पर्व

घ. शांतिपर्व

3. विष्णु सहस्रनाम का उपदेश किसने दिया था?

क. श्रीकृष्ण

ख. व्यास

ग. नारद

घ. भीष्म पितामह

4. विष्णु सहस्रनाम किसे सुनाया गया था?

क. अर्जुन

ख. भीम

ग. युधिष्ठिर

घ. कर्ण

5. विष्णु सहस्रनाम में कितने नामों का वर्णन है?

क. 500

ख. 700

ग. 900

घ. 1000

6. विष्णु सहस्रनाम में मुख्यतः किसका वर्णन किया गया है?

क. शिव के गुण

ख. देवी के स्वरूप

ग. विष्णु के गुण और नाम

घ. ब्रह्मा की सृष्टि

2.4 सारांश

विष्णु सहस्रनाम पर आधारित इस इकाई के अध्ययन के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि यह स्तोत्र भारतीय धार्मिक एवं दार्शनिक परंपरा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। इसका मूल स्रोत महाभारत के अनुशासन पर्व में वर्णित वह प्रसंग है, जहाँ भीष्म पितामह शरशय्या पर स्थित होकर धर्मराज युधिष्ठिर को जीवन के गूढ़ रहस्यों, धर्म, कर्तव्य तथा मोक्ष के मार्ग का उपदेश देते हैं। इसी क्रम में वे भगवान विष्णु के सहस्र नामों का वर्णन करते हैं, जो ईश्वर के विविध गुणों, स्वरूपों और उनकी अनंत शक्तियों का प्रतीक हैं। इस इकाई में यह समझाया गया है कि विष्णु सहस्रनाम केवल एक स्तुति नहीं, बल्कि एक संपूर्ण आध्यात्मिक साधना है, जिसमें भक्ति, ज्ञान और कर्म का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है।

इस इकाई के माध्यम से यह भी ज्ञात होता है कि विष्णु सहस्रनाम के प्रत्येक नाम का एक विशिष्ट अर्थ और दार्शनिक महत्व है, जो साधक को ईश्वर के विभिन्न आयामों से परिचित कराता है। यह स्तोत्र यह शिक्षा देता है कि परमात्मा सर्वव्यापी, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान हैं, तथा उनकी शरण में जाने से मनुष्य को सांसारिक बंधनों से मुक्ति प्राप्त हो सकती है। इसमें यह भी प्रतिपादित किया गया है कि नाम-स्मरण की शक्ति अत्यंत प्रभावशाली होती है, जो मन को शुद्ध करती है और आत्मा को परम शांति की ओर अग्रसर करती है।

साथ ही, इस इकाई में विष्णु सहस्रनाम के पाठ के महत्व पर भी विशेष प्रकाश डाला गया है। यह बताया गया है कि इसका नियमित जप करने से मानसिक शांति, आत्मिक संतुलन, सकारात्मक ऊर्जा तथा जीवन में सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार, यह स्तोत्र पापों के नाश तथा कष्टों के निवारण में भी सहायक माना जाता है। अनेक आचार्यों और संतों ने इसकी महिमा का वर्णन करते हुए इसे कलियुग में सबसे सरल और प्रभावी साधना बताया है।

अतः समग्र रूप से यह इकाई यह स्पष्ट करती है कि विष्णु सहस्रनाम न केवल एक धार्मिक पाठ है, बल्कि यह जीवन को सही दिशा प्रदान करने वाला एक आध्यात्मिक मार्गदर्शक भी है। इसके अध्ययन से साधक के भीतर श्रद्धा, भक्ति और नैतिक मूल्यों का विकास होता है, जिससे वह धर्म और मोक्ष की ओर अग्रसर हो सकता है। इस प्रकार, यह इकाई विष्णु सहस्रनाम के स्वरूप, उसके गूढ़ अर्थ तथा उसके व्यावहारिक और आध्यात्मिक महत्व को समझाने में पूर्णतः सफल सिद्ध होती है।

2.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ग 2. ग 3.घ 4. ग 5. घ 6. ग

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. महाभारत (षष्ठ खण्ड)– गीताप्रेस, गोरखपुर
2. नित्यकर्म – पूजाप्रकाश – गीताप्रेस, गोरखपुर

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. महाभारत के अनुशासन पर्व में वर्णित विष्णु सहस्रनाम की उत्पत्ति और प्रसंग का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. भीष्म पितामह द्वारा युधिष्ठिर को दिए गए उपदेश के संदर्भ में विष्णु सहस्रनाम का महत्व स्पष्ट कीजिए।
3. विष्णु सहस्रनाम में भक्ति, ज्ञान और कर्म योग के समन्वय को स्पष्ट कीजिए।

इकाई - 3 गजेन्द्र मोक्ष

इकाई की संरचना –

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 गजेन्द्र मोक्ष परिचय
3.4 गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र
3.5 सारांश
3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 350, के प्रथम खण्ड की तृतीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है **गजेन्द्र मोक्ष** इस इकाई में गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित उस दिव्य प्रसंग पर आधारित है, जिसमें भगवान विष्णु अपने भक्त गजेन्द्र हाथी की करुण पुकार पर उसे संकट से मुक्त करते हैं। यह स्तोत्र भक्ति, शरणागति और ईश्वर की करुणा के महत्त्व को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। इसकी विषय-वस्तु यह स्पष्ट करती है कि जब जीव अहंकार और सांसारिक बंधनों से ऊपर उठकर पूर्ण श्रद्धा से ईश्वर का स्मरण करता है, तब भगवान स्वयं उसकी रक्षा के लिए तत्पर हो जाते हैं। इस स्तोत्र का मुख्य संदेश यह है कि सच्ची भक्ति बाह्य बल या साधनों पर नहीं, बल्कि अंतःकरण की निष्कपट भावना पर आधारित होती है। गजेन्द्र, जो अपने बल और सामर्थ्य पर गर्व करता था, संकट में पड़कर जब समस्त आश्रय छोड़ केवल भगवान की शरण में जाता है, तभी उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस प्रकार गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र मानव जीवन को यह शिक्षा देता है कि ईश्वर की शरणागति ही दुःखों से मुक्ति और आत्मिक उद्धार का सर्वोत्तम मार्ग है।

3 .2 उद्देश्य

- ❖ इस इकाई में आप इसके महत्व को समझ सकेंगे।
- ❖ वर्तमान में इसकी उपयोगिता को अमझ पायेंगे।
- ❖ श्लोकों के अर्थ को सरल रूप में जान पायेंगे।
- ❖ पाठ करने की विधि को जान पायेंगे।

3.3 गजेन्द्र मोक्ष परिचय

गजेन्द्र मोक्ष की उपयोगिता

भारतीय आध्यात्मिक साहित्य में गजेन्द्र मोक्ष एक अत्यंत प्रेरक और अर्थपूर्ण प्रसंग है, जो श्रीमद्भागवत पुराण के अष्टम स्कंध में वर्णित है। यह कथा केवल एक पौराणिक आख्यान नहीं, बल्कि मानव जीवन के लिए गहन नैतिक, आध्यात्मिक और व्यवहारिक शिक्षाओं से परिपूर्ण है। वर्तमान जीवन की जटिलताओं में गजेन्द्र मोक्ष की उपयोगिता और भी अधिक प्रासंगिक हो जाती है गजेन्द्र मोक्ष की कथा यह सिखाती है कि संकट चाहे कितना ही गहरा क्यों न हो, ईश्वर की शरणागति से मुक्ति संभव है। गजेन्द्र बलशाली हाथी था, परंतु मगरमच्छ के बंधन में फँसकर वह असहाय हो गया। यह स्थिति मनुष्य के जीवन की प्रतीक है, जहाँ बाह्य शक्ति, पद और संपत्ति भी कठिन समय में व्यर्थ सिद्ध हो जाते हैं। इस प्रसंग से यह शिक्षा मिलती है कि अहंकार और आत्मबल के स्थान पर ईश्वर-आश्रय ही वास्तविक सहारा है।इस कथा की सबसे बड़ी उपयोगिता पूर्ण शरणागति की भावना

में निहित है। गजेन्द्र ने जब तक अपने बल पर संघर्ष किया, तब तक उसे मुक्ति नहीं मिली; किंतु जब उसने संपूर्ण समर्पण के साथ भगवान विष्णु का स्मरण किया, तब स्वयं भगवान उसकी रक्षा के लिए प्रकट हुए। यह मानव जीवन को यह संदेश देता है कि सच्ची प्रार्थना और निष्कपट भक्ति कभी निष्फल नहीं होती।

नैतिक दृष्टि से गजेन्द्र मोक्ष यह सिखाता है कि संकट के समय धैर्य और विश्वास बनाए रखना चाहिए। जीवन में अनेक बार परिस्थितियाँ मगरमच्छ की भाँति हमें जकड़ लेती हैं—रोग, शोक, भय, आसक्ति या मोह के रूप में। ऐसे समय में निराशा के स्थान पर ईश्वर में विश्वास मनुष्य को मानसिक शक्ति और आशा प्रदान करता है।

दार्शनिक दृष्टि से यह कथा कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धांत को भी स्पष्ट करती है। गजेन्द्र और मगरमच्छ दोनों ही पूर्व जन्म के कर्मों के कारण उस स्थिति में बंधे थे। किंतु ईश्वर की कृपा से बंधन समाप्त हुआ। इससे यह शिक्षा मिलती है कि कर्म के बंधन से मुक्ति केवल ईश्वर-कृपा और भक्ति से ही संभव है।

वर्तमान समाज में, जहाँ व्यक्ति तनाव, अकेलेपन और असुरक्षा से जूझ रहा है, गजेन्द्र मोक्ष की कथा मानसिक शांति और आत्मबल का स्रोत बनती है। यह हमें यह विश्वास दिलाती है कि ईश्वर सदा अपने भक्त की रक्षा करता है और उचित समय पर सहायता अवश्य करता है।

अतः गजेन्द्र मोक्ष केवल मोक्ष-प्राप्ति की कथा नहीं, बल्कि जीवन को दिशा देने वाला आध्यात्मिक मार्गदर्शन है। यह मनुष्य को शरणागति, विश्वास, धैर्य और भक्ति का महत्व समझाकर जीवन को सार्थक और संतुलित बनाने में सहायक सिद्ध होती है।

गजेन्द्र मोक्ष का महत्व

भारतीय धार्मिक एवं आध्यात्मिक साहित्य में गजेन्द्र मोक्ष का प्रसंग अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह कथा श्रीमद्भागवत पुराण के अष्टम स्कंध में वर्णित है और भगवान विष्णु की भक्तवत्सलता, करुणा तथा शरणागत-रक्षा के सिद्धांत को प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करती है। गजेन्द्र मोक्ष केवल एक पौराणिक कथा नहीं, बल्कि मानव जीवन के लिए गहन आध्यात्मिक संदेश देने वाला आदर्श उदाहरण है। गजेन्द्र मोक्ष का प्रमुख महत्व शरणागति के सिद्धांत में निहित है। गजेन्द्र ने जब तक अपने बल और सामर्थ्य पर भरोसा किया, तब तक वह बंधन में रहा; किंतु जब उसने अहंकार का त्याग कर पूर्ण रूप से भगवान की शरण ली, तभी उसे मुक्ति प्राप्त हुई। यह शिक्षा मनुष्य को यह समझाती है कि सच्ची मुक्ति केवल ईश्वर-कृपा से ही संभव है। इस कथा का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष भगवान की भक्तवत्सलता है। गजेन्द्र की करुण पुकार सुनते ही भगवान विष्णु तुरंत उसकी रक्षा के

लिए प्रकट हुए। इससे यह स्पष्ट होता है कि ईश्वर अपने भक्त के दुःख को सहन नहीं कर सकते और सच्ची भक्ति कभी निष्फल नहीं जाती। यह विश्वास भक्त के जीवन में दृढ़ता और आशा का संचार करता है।

गजेन्द्र मोक्ष का विभिन्न ग्रंथों में उल्लेख

गजेन्द्र मोक्ष भारतीय धर्म-साहित्य का एक अत्यंत प्रसिद्ध और प्रेरणादायक प्रसंग है। यह कथा भगवान विष्णु की करुणा, भक्त की शरणागति और मोक्ष-तत्त्व को स्पष्ट करती है। इसका उल्लेख अनेक पुराणों, काव्यग्रंथों तथा भक्ति-साहित्य में विभिन्न रूपों में प्राप्त होता है।

. **श्रीमद्भागवत पुराण**- गजेन्द्र मोक्ष का सबसे विस्तृत और प्रामाणिक वर्णन श्रीमद्भागवत पुराण के अष्टम स्कंध (अध्याय 2–4) में मिलता है। यहाँ गजेन्द्र की स्तुति, भगवान विष्णु का प्राकट्य और मोक्ष-प्राप्ति का वर्णन अत्यंत भावपूर्ण रूप में किया गया है। वैष्णव परंपरा में यही वर्णन सर्वाधिक मान्य है।

2. विष्णु पुराण-में भी गजेन्द्र मोक्ष की कथा संक्षिप्त रूप में वर्णित है। यहाँ इसे भगवान विष्णु की भक्तवत्सलता और शरणागतरक्षा- के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

3. पद्म पुराण- में गजेन्द्र मोक्ष का उल्लेख वैष्णव भक्ति के आदर्श प्रसंग के रूप में मिलता है। इस ग्रंथ में कथा का उपयोग नाम-स्मरण और भक्ति की महिमा को प्रतिपादित करने हेतु किया गया है।

4. अग्नि पुराण -अग्नि पुराण में यह प्रसंग नीति और धर्म के उपदेशात्मक संदर्भ में आया है। यहाँ गजेन्द्र मोक्ष को संकट में ईश्वरस्मरण की अनिवार्यता के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।-

5. नारद पुराण- नारद पुराण में गजेन्द्र मोक्ष की कथा भक्ति योग और शरणागति के सिद्धांत को स्पष्ट करने के लिए वर्णित है। यह ग्रंथ विशेष रूप से भक्तिप्रधान होने के कारण इस कथा को आदर्श - उदाहरण मानता है।

वर्तमान जीवन में गजेन्द्र मोक्ष की उपयोगिता

आधुनिक युग भौतिक प्रगति, तीव्र प्रतिस्पर्धा और मानसिक तनाव से युक्त है। साधनों की अधिकता के बावजूद मनुष्य भय, असंतोष और अकेलेपन से घिरा हुआ है। ऐसे समय में भारतीय धर्म-साहित्य में वर्णित गजेन्द्र मोक्ष का प्रसंग मानव जीवन के लिए अत्यंत मार्गदर्शक और प्रेरणादायक सिद्ध होता

है। यह कथा केवल पौराणिक आख्यान न होकर आज के जीवन की वास्तविक समस्याओं का प्रतीकात्मक समाधान प्रस्तुत करती है।

गजेन्द्र मोक्ष का प्रमुख संदेश पूर्ण शरणागति है। गजेन्द्र शक्तिशाली होने पर भी संकट के समय असहाय हो गया। यह स्थिति आधुनिक मनुष्य की अवस्था को दर्शाती है, जो धन, पद और ज्ञान के बावजूद अनेक समस्याओं के सामने विवश हो जाता है। जब मनुष्य अपने अहंकार का त्याग कर ईश्वर में विश्वास करता है, तभी उसे वास्तविक शांति और समाधान प्राप्त होता है।

वर्तमान जीवन में तनाव, रोग, भय और असुरक्षा मगरमच्छ के समान मनुष्य को जकड़ लेते हैं। गजेन्द्र मोक्ष यह शिक्षा देता है कि केवल बाह्य प्रयास ही पर्याप्त नहीं, बल्कि आंतरिक आस्था और आत्मसमर्पण भी आवश्यक है। ईश्वर-स्मरण मन को धैर्य प्रदान करता है और कठिन परिस्थितियों में भी आशा का संचार करता है।

इस कथा की उपयोगिता नैतिक जीवन के क्षेत्र में भी स्पष्ट है। गजेन्द्र ने संकट में भी धर्म का मार्ग नहीं छोड़ा और संयम बनाए रखा। इससे यह प्रेरणा मिलती है कि कठिन समय में अधैर्य, हिंसा या निराशा के स्थान पर विवेक और श्रद्धा को अपनाना चाहिए।

मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी गजेन्द्र मोक्ष अत्यंत उपयोगी है। यह कथा सिखाती है कि जब मनुष्य अपनी सीमाओं को स्वीकार करता है, तब मानसिक बोझ हल्का होता है। ईश्वर पर विश्वास व्यक्ति को आत्मबल देता है, जिससे अवसाद और चिंता में कमी आती है।

सामाजिक जीवन में यह प्रसंग करुणा और सहानुभूति का संदेश देता है। भगवान ने न केवल गजेन्द्र, बल्कि मगरमच्छ को भी मोक्ष प्रदान किया। इससे यह शिक्षा मिलती है कि ईश्वर की दृष्टि में कोई भी पूर्णतः दोषी या तिरस्कृत नहीं होता। यह भाव समाज में सहिष्णुता और मानवता को बढ़ावा देता है।

पाठ की विधि

शुद्धता: सुबह स्नान करके स्वच्छ वस्त्र पहनें।

स्थान: मंदिर या घर के पूजा स्थान पर करें, मुंह पूर्व दिशा की ओर रखें।

समय: सूर्योदय से पहले (ब्रह्म मुहूर्त) करना सबसे शुभ माना जाता है, लेकिन एकादशी या किसी भी दिन कर सकते हैं।

पूजा: भगवान विष्णु की प्रतिमा स्थापित करें, दीया जलाएं, भोग लगाएं और विधिवत पूजन करें।

पाठ: शांत और एकाग्र मन से गजेंद्र मोक्ष स्तोत्र का पाठ करें।

समापन: पाठ के बाद भगवान विष्णु की आरती करें और प्रसाद वितरण करें।

दिन: मंगलवार और शनिवार को विशेष लाभकारी माना जाता है, साथ ही एकादशी पर भी पाठ करें।

आचरण: पाठ के दौरान सात्त्विक आचरण और ब्रह्मचर्य का पालन करें, मन को शांत रखें।

संकट निवारण: बड़े से बड़े संकट, कर्ज और परेशानियों से मुक्ति मिलती है।

पाप मुक्ति: कलियुग के सभी पापों का नाश होता है और पितृ दोष से भी मुक्ति मिलती है।

मोक्ष प्राप्ति: अंत समय में परमात्मा के चरणों में प्रेम बना रहता है और मोक्ष मिलता है।

सामान्य पाठ: 1, 3, 5 बार प्रतिदिन।

विशेष लाभ के लिए: 11 बार प्रतिदिन।

गंभीर समस्याओं के लिए: 21 दिन तक 11 बार या 41 दिनों तक लगातार पाठ करना फलदायी होता है।

3.4 गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र

एवं व्यवसितो बुद्ध्या समाधाय मनो हृदि ।
जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मन्यनुशिक्षितम ॥

अर्थ: बुद्धि के द्वारा पिछले अध्याय में बताए गए रीति से अपने मन को नियंत्रित कर और हृदय को स्थिर करके गजेंद्र मन ही मन अपने पिछले जन्म में याद किए गए सर्वश्रेष्ठ और बार-बार दोहराए जाने वाले स्रोत का जाप करने लगा।

ॐ नमो भगवते तस्मै यत एतच्चिदात्मकम।
पुरुषायादिबीजाय परेशायाभिधीमहि॥

अर्थ: गजेंद्र ने मन ही मन श्री हरी का ध्यान करते हुए कहा- जिनके प्रवेश करने से शरीर और मन चेतन की तरह व्यवहार करने लगता है, 'ओम' शब्द के द्वारा लक्षित और पूरे शरीर में प्रकृति और पुरुष के रूप में प्रवेश करने वाले उस सर्व शक्तिमान देवता का मैं मन ही मन स्मरण करता हूं।

यस्मिन्निदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयं।
योस्मात्परस्माच्च परस्तं प्रपद्ये स्वयम्भुवम॥

अर्थ: जिनके सहारे ये पूरा संसार टिका हुआ है, जिनसे ये संसार अवतरित हुआ है, जिन्होने प्रकृति की रचना की और जो खुद उसके रूप में प्रकट हैं, लेकिन इसके वाबजूद भी वो इस दुनिया से सर्वोपरि और श्रेष्ठ हैं, ऐसे अपने आप और बिना किसी कारण के भगवान की मैं शरण लेता हूं।

यः स्वात्मनीदं निजमाययार्पितंक्कचिद्विभातं क्क च तत्तिरोहितम।
अविद्धदृक साक्ष्युभयं तदीक्षतेस आत्ममूलोवतु मां परात्परः॥

अर्थ: अपने संकल्प शक्ति के बल पर अपने ही स्वरूप में रचे हुए और सृष्टि काल में प्रकट और प्रलयकाल में उसी प्रकार अप्रकट रहने वाले इस शास्त्र प्रसिद्धि प्राप्त कार्य कारण रूपी संसार को जो बिना कुंठित दृष्टि के साक्ष्य रूप में देखते रहने पर भी लिप्त नहीं होते, वे चक्षु आदि प्रकाशकों के भी परम प्रकाशक प्रभु आप मेरी रक्षा करें।

कालेन पंचत्वमितेषु कृत्स्नशोलोकेषु पालेषु च सर्व हेतुषु।
तमस्तदाऽऽऽसीद गहनं गभीरंयस्तस्य पारेऽभिविराजते विभुः।।

अर्थ: विभिन्न प्रकार की शक्तियों से मुक्त, सभी प्राणियों को आत्मबुद्धि देने वाले, सभी को बिना कारण हित और अतिशय साधु स्वभाव ऋषि मुनि जन जिनके परम रूप को देखने की इच्छा के साथ वन में रहकर अखंड ब्रह्मचर्य सहित कई प्रकार के अलौकिक व्रतों का नियमों के अनुसार पालन करते हैं, ऐसे प्रभु ही मेरी गति हैं।

न यस्य देवा ऋषयः पदं विदुर्जन्तुः पुनः कोऽर्हति गन्तुमीरितुम।
यथा नटस्याकृतिभिर्विचेष्टतोदुरत्ययानुक्रमणः स मावतु॥

अर्थ: कई रूपों में नाट्य करने वाले उस अभिनेता के वास्तविक स्वरूप को जिस प्रकार से साधारण लोग नहीं पहचान पाते, उसी तरह से सत्त्व प्रधान देवता और महर्षि भी जिनके स्वरूप को नहीं जान पाते, ऐसे में कोई साधारण प्राणी उनका वर्णन कैसे कर सकता है, ऐसे दुर्गम चरित्र वाले भगवान मेरी रक्षा करें।

दिदृक्षवो यस्य पदं सुमंगलमविमुक्त संगा मुनयः सुसाधवः।
चरन्त्यलोकव्रतमव्रणं वनेभूतत्मभूता सुहृदः स मे गतिः॥

अर्थ: अनेको शक्ति से मुक्त, सभी प्राणियों को आत्मबुद्धि प्रदान करने वाले, सबके बिना कारण हित और अतिशय साधु स्वभाव ऋषि मुनि जन जिनके परम स्वरूप को देखने की इच्छा के साथ वन में

रहकर अखंड ब्रह्मचर्य तमाम अलौकिक व्रतों को नियमों के अनुसार पालन करते हैं, ऐसे प्रभु ही मेरी गति हैं।

न विद्यते यस्य न जन्म कर्म वान नाम रूपे गुणदोष एव वा।
तथापि लोकाप्ययाम्भवाय यःस्वमायया तान्युलाकमृच्छति॥

अर्थ: हमारी तरह जिनका न तो जन्म होता है और न जिनका अहंकार में कोई भी काम नहीं होता, जिनके निर्गुण रूप का न कोई नाम है और न रूप है, फिर भी वह समय के साथ इस संसार की सृष्टि और प्रलय के लिए अपनी इच्छा से जन्म को स्वीकार करते हैं।

तस्मै नमः परेशाय ब्राह्मणेऽनन्तशक्तये।
अरूपायोरुरूपाय नम आश्चर्य कर्मणे॥

अर्थ: उस अनंत शक्ति वाले परम ब्रह्मा परमेश्वर को मेरा नमस्कार है, प्राकृत आकार रहित और अनेक रूप वाले अद्भुत भगवान को मेरा बार बार नमस्कार।

नम आत्म प्रदीपाय साक्षिणे परमात्मने।
नमो गिरां विदूराय मनसश्चेतसामपि॥

अर्थ: खुद प्रकाशित सभी साक्ष्य परमेश्वर को मेरा शत् शत् नमन, वैसे देव जो नम, वाणी और चित्तवृतियों से परे हैं, उन्हें मेरा बारंबार नमस्कार है।

सत्त्वेन प्रतिलभ्याय नैष्कर्म्येण विपश्चिता।
नमः केवल्यनाथाय निर्वाणसुखसंविदे॥

अर्थ: विवेक से परिपूर्ण पुरुष के द्वारा सभी सत्त्व गुणों से परिपूर्ण, निवृति धर्म के आचरण से मिलने वाले योग्य, मोक्ष, सुख की अनुभूति रूपी भगवान को मेरा नमस्कार है।

नमः शान्ताय घोराय मूढाय गुण धर्मिणे।
निर्विशेषाय साम्याय नमो ज्ञानघनाय च॥

अर्थ: सभी गुणों को स्वीकार करके शांत, रजोगुण को स्वीकार करके घोर और तमोगुण को अपनाकर मूढ़ से प्रतीत होने वाले, बिना भेद के और हमेशा सद्भाव से ज्ञानधनी प्रभु को मेरा नमस्कार है।

क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे।
पुरुषायात्ममूलय मूलप्रकृतये नमः॥

अर्थ: शरीर के इंद्रिय के समुदाय रूप, सभी पिंडों के ज्ञाता, सबके स्वामी और साक्षी स्वरूप देव आपको मेरा नमस्कार, सबके अंतर्यामी, प्रकृति के परम कारण लेकिन स्वयं बिना कारण भगवान को मेरा शत शत नमस्कार।

सर्वेन्द्रियगुणद्रष्ट्रे सर्वप्रत्ययहेतवे।
असताच्छाययोक्ताय सदाभासय ते नमः॥

अर्थ: सभी इन्द्रियों और उनके विषयों के जानकार, सभी प्रतीतियों के कारण रूप, सम्पूर्ण जड़-प्रपंच और सबकी मूलभूता अविद्या के द्वारा सूचित होने वाले और सभी विषयों में अविद्यारूप से भासने वाले भगवान आपको मेरा नमस्कार।

नमो नमस्ते खिल कारणायनिष्कारणायद्भुत कारणाय।
सर्वागमान्मायमहार्णवायनमोपवर्गाय परायणाय॥

अर्थ: सबके कारण लेकिन स्वयं बिना कारण होने पर भी बिना किसी परिणाम के होने की वजह से, अन्य कारणों से विलक्षण कारण आपको मेरा बार बार नमस्कार, सभी वेदों और शास्त्रों के सर्वश्रेष्ठ तात्पर्य, मोक्षरूपी और श्रेष्ठ पुरुषों की परम गति देवता को मेरा बार बार नमस्कार है।

गुणारणिच्छन्न चिदूष्मपायतत्क्षोभविस्फूर्जित मान्साय।
नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागम-स्वयंप्रकाशाय नमस्करोमि॥

अर्थ: वह जो त्रिगुण रूपो में छिपे हुए ज्ञानरूपी अग्नि हैं, वैसे गुणों में हलचल होने पर जिनके मन में संसार को रचने की वृति उत्पन्न हो उठती है और जो आत्म तत्व की भावना के द्वारा विधि निषेध रूप शास्त्र से भी ऊपर उठे हों, जो महाज्ञानी महत्माओं में स्वयं प्रकाशित हो रहे हैं, ऐसे भगवान को मेरा नमस्कार।

मादृक्प्रपन्नपशुपाशविमोक्षणायमुक्ताय भूरिकरुणाय नमोऽलयाय।
स्वांशेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत प्रत्यग्दृशे भगवते बृहते नमस्ते॥

अर्थ: मेरे जैसे शरणागत, पशु के सामान जीवों की अविद्यारूप फांसी को पूर्ण रूप से काट देने वाले परम दयालु और दया दिखने में कभी भी आलस नहीं करने वाले नित्यमुक्त प्रभु को मेरा नमस्कार,

अपने अंश से सभी जीवों के मन में अंतर्यामी रूप से प्रकट होने वाले सर्व नियंता अनंत परमात्मा आपको मेरा नमस्कार है।

आत्मात्मजाप्तगृहवित्तजनेषु सक्तैर्दुष्प्रापणाय गुणसंगविवर्जिताय।
मुक्तात्मभिः स्वहृदये परिभावितायज्ञानात्मने भगवते नम ईश्वराय॥

अर्थ: जो शरीर, पुत्र, मित्र, घर, संपत्ति और कुटुंबियों में अशक्त लोगों के द्वारा कठिनाई से प्राप्त हो और मुक्त पुरुषों के द्वारा अपने हृदय में निरंतर चिंतित ज्ञानस्वरूप, सर्वसमर्थ परमेश्वर को मेरा नमस्कार है।

यं धर्मकामार्थविमुक्तिकामाभजन्त इष्टां गतिमाप्नुवन्ति।
किं त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययंकरोतु मेदभ्रदयो विमोक्षणम॥

अर्थ: वे जिन्हें धर्म, अभिलषित भोग, धन और मोक्ष की कामना से भजने वाले लोग अपनी मनचाही इच्छा पूर्ण कर लेते हैं, लेकिन जिन्हें अन्य प्रकार के अयाचित भोग और अविनाशी पार्षद शरीर भी देते हैं, वैसे अत्यंत दयालु प्रभु मुझे इस प्रकार के विपदा से हमेशा के लिए बाहर निकालें।

एकान्तिनो यस्य न कंचनार्थवांछन्ति ये वै भगवत्प्रपन्नाः।
अत्यद्भुतं तच्चरितं सुमंगलंगायन्त आनन्द समुद्रमग्नाः॥

अर्थ: वह जिनके एक से अधिक भक्त हैं, जो मुख्य रूप से एकमात्र उसी भगवान के शरण में हैं, जो धर्म, अर्थ आदि किसी भी पदार्थ को नहीं चाहते, जो केवल उन्हीं के परम मंगलमय एवं अत्यंत विलक्षण चरित्र का गुणगान करते हुए उनके आनंदमय समुद्र में गोते लगाते रहते हैं।

तमक्षरं ब्रह्म परं परेश-मव्यक्तमाध्यात्मिकयोगगम्यम।
अतीन्द्रियं सूक्ष्ममिवातिदूर-मनन्तमाद्यं परिपूर्णमीडे॥

अर्थ: उन अविनाशी, सर्वव्यापी, सर्वश्रेष्ठ, ब्रह्मादि के भी नियामक, अभक्तों के लिए भी हमेशा प्रकट होने वाले, भक्तियोग द्वारा प्राप्त, बहुत ही पास में होने पर भी माया के कारण बहुत दूर लगने वाले, इन्द्रियों के द्वारा अगम्य और अत्यंत दुर्विज्ञेय, अंतर से रहित लेकिन सभी के आदिकारक और सर्व परिपूर्ण उन भगवान की मैं स्तुति करता हूं।

यस्य ब्रह्मादयो देवा वेदा लोकाश्चराचराः।
नामरूपविभेदेन फल्ग्व्या च कलया कृताः॥

अर्थ: वो जो ब्रह्मा सहित सभी देवता, चारों वेद, समस्त चराचर जीव के नाम और आकृति भेद से जिनके अत्यंत क्षुद्र अंशों से रचयित हैं।

यथार्चिषोग्नेः सवितुर्गभस्तयोनिर्यान्ति संयान्त्यसकृत स्वरोचिषः।
तथा यतोयं गुणसंप्रवाहोबुद्धिर्मनः खानि शरीरसर्गाः॥

अर्थ: जिस तरह से जलती हुई अग्नि की लपटें और सूरज की किरणें बार बार बाहर निकलती हैं और फिर से अपने कारण में लीन हो जाती हैं, उसी प्रकार बुद्धि, मन, इन्द्रियां और नाना योनियों के शरीर जिन सभी गुणों से प्राप्त शरीर, जो स्वयं प्रकाश परमात्मा से अवतरित होकर फिर से उन्हें में लीन हो जाता है।

स वै न देवासुरमर्त्यतिर्यंगन स्त्री न षण्डो न पुमान न जन्तुः।
नायं गुणः कर्म न सन्न चासननिषेधशेषो जयतादशेषः॥

अर्थ: वह भगवान जो न तो देवता हैं, न असुर, न मनुष्य और न ही मनुष्य से नीचे किसी अन्य योनि के प्राणी, न ही वो स्त्री हैं, न पुरुष और न ही नपुंसक और न ही कोई ऐसे जीव जिनका इन तीनों ही श्रेणी में समावेश है, वो न तो गुण हैं, न कर्म, न कार्य हैं और न ही कारण, इन सभी योनियों का निषेध होने पर जो बचता है, वही उनका असली स्वरूप है, वे ही सब कुछ हैं, ऐसे प्रभु मेरा उत्थान करने के लिए प्रकट हों।

जिजीविषे नाहमिहामुया कि मन्तर्बहिश्चावृतयेभयोन्या।
इच्छामि कालेन न यस्य विप्लवस्तस्यात्मलोकावरणस्य मोक्षम॥

अर्थ: अब मैं इस मगरमच्छ के चंगुल से छूटकर जीवित नहीं रहना चाहता, क्योंकि मैं सभी तरफ से अज्ञानता से ढके इस हाथी के शरीर का क्या करूं, मैं आत्मा के प्रकाश से ढक देने वाले अज्ञानता से युक्त इस हाथी के शरीर से मुक्त होना चाहता हूं, जिसका कालक्रम से अपने आप नाश नहीं होता, बल्कि ईश्वर की दया और ज्ञान के उदय से होता है।

सोऽहं विश्वसृजं विश्वमविश्वं विश्ववेदसम।
विश्वात्मानमजं ब्रह्म प्रणतोस्मि परं पदम॥

अर्थ: इस प्रकार मोक्ष के लिए लालायित संसार के रचियता, स्वयं संसार के रूप में प्रकट और संसार से परे, संसार को एक खिलौने की भांति खेलने वाले, संसार में आत्मरूप से व्याप्त, अजन्मा,

सर्वव्यापी एवं प्राप्त्य वस्तुओं में सर्वश्रेष्ठ श्री हरी को केवल प्रणाम करता हूं और उनकी शरण में जाता हूं।

योगरन्धित कर्माणो हृदि योगविभाविते।
योगिनो यं प्रपश्यन्ति योगेशं तं नतोऽस्म्यहम॥

अर्थ: जिन्होनें भगवद्शक्ति रूपी योग के द्वारा कर्मों को जला डाला है, जिन्हें समस्त योगी, ऋषि योग के द्वारा अपने शुद्ध हृदय में प्रकट हुआ देखते हैं, उन योगेश्वर भगवान को मेरा नमस्कार है।

नमो नमस्तुभ्यमसह्यवेग-शक्तित्रयायाखिलधीगुणाय।
प्रपन्नपालाय दुरन्तशक्तयेकदिन्द्रियाणामनवाप्यवर्त्मने॥

अर्थ: वह जिनके त्रिगुणात्मक शक्तियों का राग, रूप वेग और असह्य है, जो सभी इन्द्रियों के विषयरूप में मौजूद हैं, वह जिनकी इन्द्रियां समस्त विषयों में ही बसी रहती हैं, ऐसे लोगों जिनका मार्ग मिलना भी असंभव है, उन शरणागत एवं अपार शक्तिशाली वाले भगवान आपको मेरा बार बार नमस्कार है।

नायं वेद स्वमात्मानं यच्छक्त्याहंधिया हतम।
तं दुरत्ययमाहात्म्यं भगवन्तमितोऽस्म्यहम॥

अर्थ: वह जिनकी अविद्या नामक शक्ति के कार्यरूप अहंकार से ढंके हुए हैं, वह जिनके रूप को जीव समझ नहीं पाते है, ऐसे अपार महिमा वाले भगवान की मैं शरण लेता हूं।

एवं गजेन्द्रमुपवर्णितनिर्विशेषंब्रह्मादयो विविधलिंगभिदाभिमानाः।
नैते यदोपससृपुर्निखिलात्मकत्वाततत्राखिलामर्मयो हरिराविरासीत॥

अर्थ: वह जिसने पहले की तरह से भगवान के भेदरहित सभी निराकार रूप का वर्णन किया था, उस गजराज के करीब जब ब्रह्माजी साथ में अन्य कोई देवता नहीं आये, जो अपने विभिन्न प्रकार के विशिष्ट विग्रहों को ही अपना रूप मानते हैं, ऐसे में साक्षात विष्णु जी, जो सभी के आत्मा होने के कारण सर्वदेवस्वरूप हैं, तब वहां प्रकट हुए।

तं तद्वदार्त्तमुपलभ्य जगन्निवासःस्तोत्रं निशम्य दिविजैः सह संस्तुवद्भिः।
छन्दोमयेन गरुडेन समुह्यमानश्चक्रायुधोऽभ्यगमदाशु यतो गजेन्द्रः॥

अर्थ: गजराज को इस तरह दुखी देखकर और उसके पढ़े गए स्तुति को सुनकर चक्रधारी प्रभु इच्छानुसार वेग वाले गरुड़ की पीठ पर सवार होकर सभी देवों के साथ उस स्थान पर पहुंचे जहां वह गज था।

सोऽन्तस्सरस्युरुबलेन गृहीत आर्त्तो दृष्ट्वा गरुत्मति हरि ख उपात्तचक्रम।
उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छान्नारायणिखलगुरो भगवान नम्स्ते॥

अर्थ: सरोवर के अंदर महाबली मगरमच्छ द्वारा पकड़े जाने के बाद दुखी उस हाथी ने आसमान में गरुड़ की पीठ पर बैठे और हाथों में चक्र लिए भगवान विष्णु को आते हुए जब देखा, तो वह अपनी सूंड में पहले से ही उनकी पूजा के लिए रखे कमल के फूल को श्री हरी पर बरसाते हुए कहा- सर्वपूज्य भगवान नारायण आपको मेरा प्रणाम।

तं वीक्ष्य पीडितमजः सहसावतीर्यसग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार।
ग्राहाद विपाटितमुखादरिणा गजेन्द्रंसम्पश्यतां हरिरमूमुचदुस्त्रियाणाम॥

अर्थ: लाचार हाथी को देखकर भगवान श्री हरी गरुड़ से नीचे उतरकर सरोवर में उतर आये और बेहद दुखी होकर मगरमच्छ सहित उस हाथी को तुरंत ही सरोवर से बहार निकाल लाये और देखते ही देखते अपने चक्र से मगरमच्छ के गर्दन को काट दिया और हाथी को उस पीड़ा से बहार निकाल लिया।

बोध प्रश्न-

1. गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र से क्या शिक्षा मिलती है?

(क) संकट में धैर्य खो देना चाहिए

(ख) केवल बल पर भरोसा करना चाहिए

(ग) ईश्वर की शरण सभी के लिए समान है

(घ) पशु योनि में भक्ति संभव नहीं

2. गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र किस भावना को प्रमुखता से व्यक्त करता है?

(क) अहंकार

(ख) वीरता

(ग) भक्ति और विनम्रता

(घ) प्रतिशोध

3. भगवान विष्णु किस वाहन पर सवार होकर गजेन्द्र की सहायता के लिए आए?

(क) नंदी

(ख) गरुड़

(ग) ऐरावत

(घ) अश्व

4. गजेन्द्र ने किस भगवान की स्तुति की?

(क) भगवान शिव

(ख) भगवान ब्रह्मा

(ग) भगवान विष्णु (नारायण)

(घ) भगवान इंद्र

5. गजेन्द्र को किस जीव ने पकड़ा था?

(क) सर्प

(ख) सिंह

(ग) ग्राह (मगरमच्छ)

(घ) शार्दूल

3.5 सारांश

गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की विषय-वस्तु भारतीय भक्ति परंपरा में शरणागति, ईश्वर की करुणा और भक्तवत्सलता के आदर्श को अत्यंत प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करती है। यह स्तोत्र श्रीमद्भागवत पुराण के अष्टम स्कंध में वर्णित गजेन्द्र मोक्ष प्रसंग से जुड़ा हुआ है, जिसमें एक हाथी द्वारा संकट की घड़ी में भगवान विष्णु की स्तुति और उससे प्राप्त मोक्ष का वर्णन मिलता है। यह कथा केवल एक पौराणिक आख्यान नहीं है, बल्कि मानव जीवन के गहन आध्यात्मिक सत्य को उद्घाटित करती है। गजेन्द्र एक शक्तिशाली और गौरवशाली हाथी था, जो अपने बल, वैभव और सामर्थ्य पर गर्व करता था। एक दिन सरोवर में स्नान करते समय उसे ग्राह (मगरमच्छ) पकड़ लेता है। लंबे समय तक संघर्ष करने के बाद भी गजेन्द्र स्वयं को मुक्त नहीं कर पाता। उसके सभी साथी और साधन असफल हो जाते हैं। यह स्थिति मानव जीवन के उस क्षण का प्रतीक है, जब व्यक्ति संसारिक शक्तियों, संबंधों और साधनों पर निर्भर रहकर भी स्वयं को असहाय अनुभव करता है। इसी असहाय अवस्था में गजेन्द्र के भीतर आत्मबोध जागृत होता है। गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की विषय-वस्तु का केंद्रीय भाव यह है कि सच्ची भक्ति अहंकार के त्याग से प्रारंभ होती है। संकट में फँसकर गजेन्द्र को यह अनुभूति होती है कि केवल शारीरिक बल या सांसारिक उपाय उसे नहीं बचा सकते। तब वह अपने पूर्वजन्मों के

संस्कारों के प्रभाव से भगवान नारायण का स्मरण करता है और उन्हें समर्पित भाव से स्तुति करता है। उसकी स्तुति में ईश्वर को जगत का पालनकर्ता, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान और करुणासागर बताया गया है। यह स्तुति केवल शब्दों का संग्रह नहीं, बल्कि पूर्ण आत्मसमर्पण की अभिव्यक्ति है। इस स्तोत्र की विषय-वस्तु यह स्पष्ट करती है कि भगवान की भक्ति जाति, योनि या स्थिति से बंधी नहीं है। गजेन्द्र एक पशु योनि में होने के बावजूद सच्ची भक्ति और शरणागति के कारण ईश्वर की कृपा का पात्र बनता है। इससे यह संदेश मिलता है कि भगवान के लिए भक्त की भावना ही सर्वोपरि है, न कि उसका बाह्य स्वरूप या सामाजिक स्तर। जब गजेन्द्र पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ भगवान को पुकारता है, तब भगवान विष्णु तुरंत गरुड़ पर सवार होकर प्रकट होते हैं और ग्राह का संहार कर गजेन्द्र को मुक्त करते हैं। गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की विषय-वस्तु का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष मोक्ष की अवधारणा है। यहाँ मोक्ष का अर्थ केवल शारीरिक संकट से मुक्ति नहीं है, बल्कि जन्म-मरण के बंधन से छुटकारा भी है। भगवान गजेन्द्र को न केवल ग्राह से बचाते हैं, बल्कि उसे दिव्य स्वरूप प्रदान कर परम गति देते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि सच्ची भक्ति का अंतिम लक्ष्य आत्मिक उद्धार और ईश्वर की प्राप्ति है। यह स्तोत्र मानव जीवन को यह शिक्षा देता है कि संकट और दुःख ईश्वर की ओर उन्मुख होने का अवसर बन सकते हैं। जब मनुष्य अपने अहंकार, आसक्ति और मिथ्या अभिमान का त्याग कर पूर्ण विश्वास के साथ ईश्वर की शरण लेता है, तब वही दुःख मोक्ष का द्वार बन जाता है। गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र इस दृष्टि से आशा, विश्वास और आध्यात्मिक चेतना का प्रेरक ग्रंथ है। समग्र रूप से, गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की विषय-वस्तु भक्ति, करुणा, शरणागति और मोक्ष के सनातन सिद्धांतों को सरल किंतु गहन रूप में प्रस्तुत करती है। यह स्तोत्र आज भी मानव को यह प्रेरणा देता है कि ईश्वर की सच्ची भक्ति और आत्मसमर्पण से जीवन के सबसे गहरे संकटों से भी मुक्ति संभव है।

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ग 2. ग 3. ख 4.ग 5.ग

3 .7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः
2. स्तोत्ररत्नाकरः
3. स्तोत्ररत्नावली

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की समकालीन प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए।
2. गजेन्द्र मोक्ष स्तोत्र की कथा का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

इकाई - 4 शिवताण्डव

इकाई की संरचना –

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 शिव तांडव स्तोत्र परिचय
4.4 शिव तांडव स्तोत्र
4.5 सारांश
4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई विविध स्तोत्र पाठ नामक पुस्तक के शिव तांडव नामक शीर्षक से है। शिव तांडव स्तोत्र संस्कृत साहित्य और भक्ति परंपरा का अत्यंत प्रभावशाली और प्रसिद्ध स्तोत्र है। इसका रचनाकार रावण, जिसे केवल लंका का सम्राट ही नहीं बल्कि अत्यंत विद्वान और भक्त भी माना जाता है, ने किया था। यह स्तोत्र भगवान शिव के तांडव नृत्य उनके महा-शक्ति, विराट रूप और संहारात्मक ऊर्जा का अत्यंत गहन और भावपूर्ण चित्रण प्रस्तुत करता है। शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव की महिमा, उनकी शक्ति, उनके स्वरूप और उनके दिव्य गुणों का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि पाठक या श्रोता उसके उच्चारण मात्र से ही आध्यात्मिक उत्साह और मानसिक ऊर्जा का अनुभव करता है। शिव तांडव स्तोत्र का प्रमुख उद्देश्य भगवान शिव के तांडव रूप की स्तुति करना है। तांडव नृत्य शिव का विराट और संहारात्मक रूप प्रस्तुत करता है, जिसमें सृष्टि के निर्माण, पालन और संहार की प्रक्रिया का प्रतीकात्मक रूप से वर्णन होता है। यह स्तोत्र केवल उनके शक्ति रूप का ही विवरण नहीं देता, बल्कि उनके सौंदर्य, ध्यान, भक्ति, करुणा और अनंत गहन ज्ञान का भी अनुभव कराता है। रावण ने अपनी गहन श्रद्धा और भक्ति भाव से शिव तांडव का यह स्तोत्र रचा, जिसमें प्रत्येक श्लोक शिव के अनंत गुणों और उनके तांडव नृत्य की गति, लय और भाव को प्रभावशाली रूप से व्यक्त करता है। शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव के स्वरूप, उनके जटाओं में गंगा का प्रवाह, चंद्रमा का शोभायमान होना, नागों की माला, त्रिशूल और डमरू जैसे दिव्य प्रतीकों का विस्तृत वर्णन मिलता है। ये सभी प्रतीक उनकी शक्ति, अनंत ज्ञान और संहारक ऊर्जा का परिचायक हैं। इसके अलावा, स्तोत्र में शिव की करुणा, भक्तवत्सलता और सभी प्राणियों के कल्याण में उनकी संलग्नता को भी अत्यंत प्रभावशाली ढंग से दर्शाया गया है। इस स्तोत्र की विशिष्टता इसकी लय और छंद में है। प्रत्येक श्लोक की अलंकारिक भाषा और मधुर लय शिव के तांडव नृत्य की गति की अनुभूति कराती है। इसे उच्चारित करने से मानसिक, आध्यात्मिक और शारीरिक ऊर्जा का संचार होता है। पाठक को न केवल भगवान शिव के विराट रूप का अनुभव होता है, बल्कि उनके भक्तत्व और अनंत शक्ति के प्रति श्रद्धा और भक्ति भाव भी जाग्रत होती है। यह स्तोत्र केवल भक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना का भी अत्यंत प्रभावशाली साधन है। यह मानव जीवन में सकारात्मक ऊर्जा, मानसिक शांति, आध्यात्मिक चेतना और सृजनात्मक शक्ति का संचार करता है। इस प्रकार शिव तांडव स्तोत्र भगवान शिव की महिमा, उनकी शक्ति और तांडव रूप का अनुपम काव्यात्मक चित्रण प्रस्तुत करता है और भक्त को ईश्वर के निकट लाता है।

4.2 उद्देश्य

- ❖ शिव तांडव स्तोत्र के महत्व को समझ सकेंगे।
- ❖ शिव तांडव स्तोत्र के मंत्रों के अर्थ को सरल रूप में जान पायेंगे।

- ❖ शिव तांडव स्तोत्र की उपादेयता को जान पायेंगे।
- ❖ भगवान शिव के स्वरूपों के गुणों को समझ सकेंगे।

4.3 शिव तांडव स्तोत्र परिचय

भारतीय सनातन धर्म में मंत्र,तंत्र और स्तोत्र का अपना विशेष महत्व है। शास्त्रों में मंत्र पाठ, जाप और स्तोत्र के नियमित पाठ के द्वारा अपने इष्ट को प्रसन्न करने का विधान है। साधक प्रतिदिन पूजा और आरती के समय मंत्रों और स्त्रोतों का पाठ कर अपने आराध्य देवों को प्रसन्न करते हैं। भगवान शिव के अनन्य भक्त लंकापति रावण ने एक विशेष स्तुति की रचना करी थी, जो शिव तांडव स्तोत्र के नाम से जाना जाता है। धार्मिक मान्यता यह है कि शिवतांडव स्तोत्र का पाठ करने से भोलेनाथ नृत्य, चित्रकला, लेखन, योग, ध्यान, समाधी आदि सिद्धियों को प्रदान करने वाले हैं। साथ ही रोग,शोक,दुःख,दारिद्र आदि का भी शमन करते है। ऐसे में शिव तांडव स्तोत्र का पाठ करने से इन सभी विषयों में विशेष सफलता प्राप्त होती है। शिव तांडव स्तोत्र का पाठ करने या सुनने से व्यक्ति को अनन्य शक्ति, सौंदर्य और मानसिक शक्ति में सफलता प्राप्त होती है। शिवताण्डव स्तोत्र एक स्तोत्रकाव्य है। यह भगवान शिव का अत्यंत आनंददायक स्तोत्र है, यह पंचचामर छन्द में आबद्ध है। इसकी काव्य-शैली बहुत ही प्रभावशाली है, इसको जब संगीतमय प्रवाह से गाया व सुन्जा जाता है तो मन में रोमांच व उमंग की अनुभूति का नया संचार मनुष्य में प्रवाहित होता है। शिव तांडव स्तोत्र संस्कृत भक्ति साहित्य की अत्यंत प्रसिद्ध और प्रभावशाली रचना है। इसका रचनाकार रावण था, जो केवल लंका का सम्राट ही नहीं, बल्कि एक महान विद्वान, संगीतमय कवि और शिवभक्त भी था। इस स्तोत्र में भगवान शिव के तांडव रूप का वर्णन अत्यंत भावपूर्ण और अलंकारिक भाषा में किया गया है। "तांडव" शब्द शिव के अनंत शक्ति-स्वरूप और संहारात्मक नृत्य को दर्शाता है, जो सृष्टि के निर्माण, पालन और संहार की प्रक्रिया का प्रतीक है। शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव के विराट रूप, उनके शक्तिशाली ललाट, जटाओं में गंगा का प्रवाह, चंद्रमा का शोभायमान होना, नागों की माला, त्रिशूल और डमरू जैसी दिव्य पहचान चिन्हों का अत्यंत सुंदर चित्रण किया गया है। स्तोत्र में शिव के तांडव के प्रत्येक अंग की गति, लय और भाव का वर्णन इतनी जीवंतता और संगीतमयता के साथ किया गया है कि इसे उच्चारित करने मात्र से ही पाठक या श्रोता के हृदय में आध्यात्मिक ऊर्जा और उत्साह का संचार होता है। रावण ने इस स्तोत्र को अपनी गहन भक्ति और श्रद्धा से रचा था। इसमें प्रत्येक श्लोक भगवान शिव के अनंत गुणों, उनकी विराट शक्ति और करुणा को प्रस्तुत करता है। यह स्तोत्र केवल शिव की महिमा का बखान नहीं करता, बल्कि उनके भक्तों के कल्याण, जीवन में सकारात्मक ऊर्जा और मानसिक शांति का माध्यम भी है। शास्त्रों में उल्लेख है कि रावण अपने भक्ति भाव और इस स्तोत्र के पाठ के माध्यम से शिव की कृपा प्राप्त करने में सफल हुआ। शिव तांडव स्तोत्र में शिव की लीलाओं का भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान

है। इसमें उनके संहारक और सृजनशील स्वरूप के साथ-साथ उनकी करुणामयी और भक्तवत्सल प्रकृति का भी वर्णन है। उनके तांडव नृत्य में समस्त ब्रह्मांड की गति, ऊर्जा और जीवन के चक्र का प्रतीकात्मक चित्रण है। यह स्तोत्र शिव के भक्ति-संवाद और भक्त के बीच गहन संबंध को प्रकट करता है।

वर्तमान परिपेक्ष में शिव तांडव स्तोत्र का महत्व-

आधुनिक युग में, जब जीवन में तनाव, मानसिक दबाव और अस्थिरता का अनुभव अधिक होता है, तब शिव तांडव स्तोत्र का पाठ और अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक बन जाता है। इसका महत्व न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से है, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तिगत विकास के दृष्टिकोण से भी अत्यधिक है।

मानसिक शांति और ऊर्जा का स्रोत:
शिव तांडव स्तोत्र में शब्दों की लय, उच्चारण की मधुरता और भावनात्मक शक्ति मन को स्थिर करती है। इसका नियमित पाठ करने से व्यक्ति में मानसिक शांति, तनाव मुक्त मन और सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।

आध्यात्मिक चेतना का विकास:

यह स्तोत्र भक्त को भगवान शिव की विराट शक्ति, करुणा और भक्तवत्सलता के प्रति जागरूक करता है। शिव के तांडव नृत्य के माध्यम से जीवन के निर्माण और संहार के चक्र को समझने की क्षमता विकसित होती है, जिससे व्यक्ति जीवन में स्थिरता और संतुलन का अनुभव करता है।

सृजनात्मक और प्रेरक शक्ति:

शिव तांडव स्तोत्र में निहित लय, शक्ति और भावनात्मक ऊर्जा व्यक्ति को सृजनात्मक कार्यों में प्रेरित करती है। यह मानसिक उत्साह बढ़ाने और जीवन में सक्रियता बनाए रखने में मदद करता है।

भक्ति और प्रेम की अनुभूति:

इस स्तोत्र के माध्यम से भक्त भगवान शिव के प्रति अपनी भक्ति और प्रेम की गहन अनुभूति करता है। यह भक्ति भय या दंड पर आधारित नहीं, बल्कि आत्मीय प्रेम और श्रद्धा पर आधारित होती है। आधुनिक जीवन में जहां भौतिक तनाव और समस्याएँ अधिक हैं, वहां यह भक्ति मन और हृदय को संतुलित करती है।

संस्कृति और साहित्य में योगदान:

शिव तांडव स्तोत्र केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि संस्कृत काव्य और संगीत की धरोहर भी है। इसकी भाषा, अलंकार और छंद आधुनिक साहित्य, संगीत और कला के अध्ययन में भी अत्यंत मूल्यवान हैं।

आध्यात्मिक साधना का साधन:

यह स्तोत्र जप, स्मरण और ध्यान का उत्कृष्ट माध्यम है। शिव तांडव का पाठ करते समय व्यक्ति के मन में न केवल भक्ति जागृत होती है, बल्कि आध्यात्मिक ऊर्जा और सकारात्मक चेतना का अनुभव भी होता है।

शिव तांडव स्तोत्र केवल भगवान शिव की महिमा का बखान नहीं करता, बल्कि यह जीवन में मानसिक, आध्यात्मिक और सृजनात्मक शक्ति का संचार करने वाला एक अनुपम साधन है। आधुनिक जीवन में इसकी प्रासंगिकता अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह व्यक्ति को मानसिक शांति, आध्यात्मिक चेतना, प्रेम और भक्ति की अनुभूति प्रदान करता है। इस प्रकार यह स्तोत्र न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि सांस्कृतिक, साहित्यिक और मानसिक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से भी अत्यंत मूल्यवान है।

शिव तांडव स्तोत्र पाठ की विधि-

शिव तांडव स्तोत्र का पाठ करने के लिए पहले नित्य नैमितिक कार्य से निवृत होकर उसके बाद स्वच्छ वस्त्र धारण करना चाहिए।

शिव तांडव स्तोत्र का पाठ ब्रह्म मुहूर्त में करना विशेष लाभकर होता है ।

शिव तांडव स्तोत्र का पाठ शुरू करते से पहले शिव का ध्यान करके श्रद्धाभाव से दीप, धूप, गंगाजल और नैवेद्य से भोलेनाथ का पूजन करें। फिर पाठ को शुरू करें। वहीं पाठ पूर्ण हो जाने के बाद भगवान शिव का ध्यान करना चाहिए।

जिन लोगों की कुण्डली में सर्प योग, कालसर्प योग या पितृ दोष लगा हुआ हो, या जो लोग बहुत परेशानी में हों उन्हें भी शिव तांडव स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। क्योंकि यह पाठ अत्यंत शक्तिशाली और ऊर्जावान है

5.4 शिव तांडव स्तोत्र

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम् ।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्।।1।।

शिवताण्डवस्तोत्रम् के रचयिता दशानन रावण ने पन्द्रह श्लोकों के इस ताण्डव स्तोत्र का शुभारम्भ भगवान शिव के ताण्डव-रत रूप की अभ्यर्थना (प्रार्थना) करते हुए किया है। शिव की घनी रुक्ष (रूखी) जटा को घने जंगल की उपमा देते हुए वह कहता है कि जटा रुपी सघन वन से निकलती हुई गंगा के प्रवाह से पवित्र किये हुए स्थल पर, गले में विशाल सपों की माला पहने हुए और डमरू से डम डम डम-डम का महाघोष करते हुए शिव ने प्रचंड ताण्डव किया, वे शिव हमारा कल्याण करें, हमारे हितों की रक्षा करें। रावण ताण्डव नृत्य करते हुए अपने आराध्य पर मुग्ध है और भलीभांति जानता है कि विकराल सर्पमाल धारण करने से भयंकर दिखने वाले भगवान शिव वास्तव में शुभंकर हैं, शंकर (शुभ करने वाले) हैं।

जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनी।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम।।2।।

इस श्लोक में रावण ने शिव के सौम्य और रौद्र रूप का वर्णन किया है। यहाँ शिव की जट्टा को एक कड़ाह (कड़ाही जैसा एक बड़ा पात्र) की उपमा देते हुए वह कहता है कि जटा में बड़ी द्रुत (तेज) गति से चक्कर लगाती हुई देवनदी गंगा की चंचल लहरें लता की तरह (लिपटी हुई बेल की भांति) लग रहीं हैं व उनके शीश (सिर) पर प्रदीप्त हो रही हैं। दूसरी ओर उनके भाल-पट पर अर्थात् माथे पर धक धक करती हुई भीषण अग्नि प्रज्वलित हो रही है। अपने शीश (सिर) पर वे बाल-चन्द्रमाँ (अर्ध-चन्द्र) धारण किये हुए हैं। स्तुतिकार कहता है कि ऐसे भगवान शंकर में हर पल मेरी प्रीति बनी रहे। जिससे हमारी प्रीति होती है, हम सदा उसके बारे में सोचा करते हैं, उसी का चिंतन किया करते हैं। शिवजी रावण के आराध्य हैं। इस श्लोक के द्वारा वह दो बातें विशेष रूप से कहना चाहता है, एक तो यह कि भगवान शिव के स्वरूप में सभी विरोधाभासी तत्वों का समन्वय और संतुलन पाया जाता है, जैसे अग्नि भाल पर, चन्द्रमाँ कपाल पर। और दूसरी बात यह कि वह हमेशा उनके चिंतन में रत रहने का इच्छुक है।

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे।
कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि।।3।।

इस श्लोक में रावण अपने आराध्य भगवान शिव की महिमा का गान करते हुए कहता है कि उनकी एक कृपादृष्टि भर से निरंतर आने वाली दुस्सह (जिसे सहन करना अति कठिन हो) विपत्तियों का - सार्थवाह (कारवां) रुक जाता है। शिव तथा शक्ति दोनों एक ही हैं। वे पर्वतराज पुत्री पार्वती केसुन्दर और सनातन लीला सहचर है, उमाकांत हैं, देवी की विलासलीला में उनके साथी हैं। देवी उल्लसित - हो रही है और सभी दिशाओं में दूर दूर तक उनके उल्लास की छटा विस्तार से फैली है जिसे देख कर शिव का मन प्रमुदित हो रहा हैं। रावण अभिलाषा करता है कि धराधरेन्द्रनन्दिनी यानि पर्वतेश पुत्री पार्वती के चारु हासविलास से दिशाओं को प्रकाशित होते देख जिनका मन आनंदित हो रहा है-, जिनकी कृपादृष्टि मात्र से निरंतर आने वाली दुस्सह आपदाएं नष्ट हो जाती हैं, ऐसे किसी दिगंबर तत्व में अर्थात् महादेव में मेरा मन विनोद प्राप्त करे।

जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभा-
कदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे।
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे
मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि।।4।।

अपने आराध्य भगवान शिव के लिए रावण के मन में इतनी निष्ठां है कि वह सदा उनके चिंतन में मग्न रहना चाहता है और भक्तों के मनरंजन एवं मनभावन भूतनाथ, जिनकी जटा में सर्प कुंडलित रहता है, के बारे में वह कहता है कि जटा से लिपटे मणिधारी सर्प की मणि के पीले प्रकाश से दिशाएं इस तरह परिव्याप्त हो गई हैं, मानो दिशा कोई सुंदरी स्त्री हो और उस दिशा रुपी सुंदरी के मुख पर केशर-चन्दन-हल्दी का अनुलेप मल दिया गया हो और वह पीली प्रभा से जगमगा उठी हो। भगवान शंकर के शरीर से लिपटा हुआ विशाल सर्प वासुकि मणिधारी महासर्प है। एक ओर तो शिवजी का ऐसा अनुपम ऐश्वर्य है, और दूसरी ओर वे गजचर्म का उत्तरीय ओढ़े हुए हैं तथा उनकी मस्ती में वह उत्तरीय (उपरना या पटुका) लहरा रहा है, जो गजासुर की मेदुर (चर्बीयुक्त या वसायुक्त) त्वचा से बना हुआ है, जिसे शिवजी ने मार दिया था। रावण कहता है कि ऐसे महिमामय भूतनाथ में मेरा मन अद्भुत विनोद प्राप्त करता रहे। वह स्तुति करता है, हे भूतनाथ! मेरे मन को अपनी अद्भुत छवि के अनुपम आनन्द से भर दो।

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः।
भुजङ्गराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः।।5।।

भगवान शिव इंद्र आदि समस्त देवताओं द्वारा पूजित एवं नमस्कृत हैं। इंद्र आदि सभी देवता जब शिवजी के चरणस्पर्श के लिए उनके कदमों में झुकते हैं-, तब देवताओं के मुकुटों पर सजे हुए पुष्पों से फूलों का पराग झड़ झड़ कर उनके चरणों को पुष्परज (पराग) से रंजित कर देता है। शिव के पदतल सदैव देव-मुकुट के पुष्पों की पराग से पिंगल रंग के हो जाते हैं। वे अपनेकेशों को ऊपर उठा कर उनकी जटा बनाते हैं और उस उठी हुई जटा को बांधने के लिये वे सर्परान (वासुकि) को लपेट कर कसलेते हैं। बड़ा मनोरम स्वरूप है शिवजी का। रावण स्तवन (स्तुति) करते हुए कहता है कि इस प्रकार पुष्परज से धूसरित पादपृष्ठ वाले तथा भुजंगराज से बंधी हुईजटा वाले भगवान चंद्रशेखर मेरी लक्ष्मी पर कृपा करें, जिससे वह चिर काल (दीर्घ काल) तक बनी रहे, अक्षुण्ण रहे। सप्तद्वीपाधिपति रावण की स्वर्ण लंका में अकूत सम्पत्ति थी, अथाह वैभव था, उसके पास पुष्पक विमान भी था। लक्ष्मी चंचल होती है, अतः वह अभ्यर्थना करता है कि वह वैभव चिर काल तक बना रहे।

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गभा-
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालि सम्पदे शिरो जटालमस्तु नः।।6।।

शिवजी के भाल पर स्थित तीसरा नेत्र अग्नि का निवास स्थान है। रावण का कहना है कि भाल के फलक पर जलती हुई अग्नि की लपटों में जिन्होंने कामदेव को भस्म कर दिया तथा इंद्र (निलिम्पनायक) का गर्व से भरा हुआ शीश झुका दिया (क्योंकि देवराज इंद्र ने शिवजी को मोहित करने व उनके तपोभंग की योजना बनाई थी तथा इस आशय से कामदेव को उनके सम्मुख भेजा था), चन्द्रमाँ की अमृतवर्षी शीतल किरणों से जिनका शीश सुशोभित है, साथ ही जो महामुण्डमाली हैं, जटाजूटधारी हैं, ऐसे भगवान शिव से में प्रार्थना करता हूँ कि वे हमारी श्री, हमारा विपुल वैभव सदा बनाये रखें।

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-

प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम।।7।।

विकराल भालपट की धग धग् धधकती अग्नि में जिन्होंने प्रचंड पुष्पशर (पुष्प है धनुष जिसका - अर्थात् कामदेव) को आहुति बना डाला, भस्मीकृत कर दिया, जो गिरिराजनन्दिनी पर्वतराज पुत्री) पार्वतीके अंगों पर (, उनके वक्षकक्ष पर सुगन्धित द्रव्यों तथा वन-धातुओं से श्रृंगारिक चित्र-रचना - करने वाले चतुर चितेरे हैं, कुशल शिल्पी हैं, उन भगवान त्रिनयन में मेरा प्रेम, मेरी धारणा सदा बनी रहे। एक ओर कामदेव को भस्मीभूत करना व दूसरी ओर 'धराधरेंद्रनन्दिनी अर्थात् पार्वती के साथ श्रृंगारलीला करना-, दोनों में यद्यपि विरोधाभास दिखाई देता है, किन्तु इससे अभिप्राय यह प्रकट करने से है कि शिव गृहस्थ होते हुए भी, श्रृंगारलीला में रत दिखते हुए भी इन सभी भावों से निर्लिप्त रहते हैं, वे मायापति हैं, माया को वश में रखते हैं, उसमें लिप्त नहीं होते। वे माया से अतीत हैं।

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुर-
त्कुहूनिशीथिनीतम:प्रबन्धबद्धकन्धर:।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुर:
कलानिधानबन्धुर: श्रियं जगद्धुरन्धर:।।8।।

सागर-मंथन के समय सागर से निकले कालकूट विष का पान करने वाले भगवान नीलकण्ठ के गले की श्यामलता (कालिमा) की उपमा रावण ने मेघाच्छादित अमावस्या की अर्ध-रात्रि से दी है, जब आकाश में काली पटा के छा जाने से अंधियारा और भी घना हो जाता है। रावण इस श्लोक में शिवजी के नीलकण्ठ का चित्रण करते हुए स्तुति करता है कि नवीन मेघमाला (बादल-समूह) से आच्छादित, अमावस्या के अर्धकालीन सघन अंधकार की सी कालिमा जिनके गठीले (सुपुष्ट) गले पर अंकित है (अर्थात् गले का रंग गहरा नीला है) और जिन्होंने देवसरिता गंगा को धारण किया है, जो गजचर्म से सुसज्जित हैं तथा चन्द्रकला के सुन्दर आगार (आश्रयस्थान) हैं व जगत के आधार हैं, वे शिव मेरी लक्ष्मी का विस्तार करें।

प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम्।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे।।9।।

यहाँ इस श्लोक में रावण ने भगवान शिव के नीले कण्ठ का एक अन्य चित्रण प्रस्तुत किया है। शिव के गले की श्यामलता की उपमा नीलकमल के पुष्पों के समूह की सांवली आभा से दी है। इसके

अलावा शिवजी को विविध नामों से पुकारते हुए उनका स्तवन किया है। इन नामों का आधार है करुणासिन्धु भगवान शिव के द्वारा किये गए वे कृपापूर्ण कार्य, जिनसे देवताओं तथा मनुष्यों की बाधाएं नष्ट हुई एवं भय दूर हुए। शिव के नीले गले की महिमा गाते हुए रावण कहता है कि जिनकी ग्रीवा (गर्दन) को सुशोभित करती है, कण्ठनाल गले का कोमल भाग), जो कौआ कहलाता हैपर (छाई हुई विकसित नीलकमल समूह कीश्यामल आभा, अर्थात् जिनकी ग्रीवा अपने कण्ठनाल की प्रगाढ़ नीलश्यामल दीप्ति से सुशोभित है-, उन भगवान शिव को मैं भजता हूं। तथा जो स्मर यानि कामदेव, त्रिपुर तथा भव (जन्म-मरण रुपी संसार), के भय व बंधन को समाप्त करने वाले हैं, जो दक्ष द्वारा पापबुद्धि के साथ कि-ये गए यज्ञ के नष्टकर्ता हैं, जो गजासुर, अंधकासुर का संहार करने वाले हैं, तथा यमराज के भय अर्थात् मृत्युभय को भी नष्ट करने वाले हैं, ऐसे भगवान शिव की में आराधना करता हूँ।

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी-
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे।।10।।

दशवें श्लोक में भगवान शिव के लोकरंजक, लोकमंगल रूप को वर्णित किया गया है। दसर्वे श्लोक में भगवान शिव के लोकरंजक, लोकमंगल रूप को वर्णित किया गया है, साथ ही पार्वतीपति के रूप में शिव को अपना पली महामहिमामयी देवी पार्वती के कला कौशल्य की प्रचुरता व प्रखरता का रसिक भी बताया है। रावण का कहना है कि शिव महीयसी सर्वमंगला (जो कि पार्वती का ही एक नाम है) के कलाविलास की माधुरी का परागप्रेमी भँवरे की तरह छक कर रसपान करते हैं। यहाँ समाज का मंगल करने वाली, भव्य कलाओं की उपमा मंजरी (अविकसित फूलों या पल्लव के गुच्छों) से की है। जैसे भ्रमर मंजरी के मकरंद का पान करने के लिए अपना मुंह खोले हुए तत्पर रहते हैं, कुछ इसी तरह भगवान शिव कला रुपी मंजरी का रसपान करने के लिए तत्पर रहते है। भाव यह है कि भव्य कलाएं, लोकहितकारी कलाएं उन्हें प्रसन्न करती हैं व उनका वरद आशीष पा कर कुसुमित होती हैं। नाट्य-संगीत-अभिनय सहित समस्त कलाओं के वे आदि गुरु हैं। अतः उन्हें कला रुपी मंजरी के पराग की मिठास का रसपान करने वाला रसिक बताते हुए आगे उनके मंगलकर्ता को रूप प्रकाशित करते हुए रावण कहता है कि वे कामदेव, भवभय, त्रिपुर, दक्ष-यज्ञ, गजासुर, अंधकासुर व यमराज के भी अंतक अर्थात् अंत करने वाले प्रभु हैं, में उनकी आराधना करता हैं।

जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजङ्गमश्वस-
द्विनिर्गमत्क्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट्।

धिमिद्धिमिद्धिमिद्ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गल-
ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डव: शिव:।।11।।

इस श्लोक में ताण्डवनृत्य करते हुए भगवान शिव का चित्रण है, जो इस प्रकार है। जिनके मस्तक पर बड़े वेग से सर्प कुंडलाकार चक्कर लगा रहा है और उसके फुफ़कारने से, जिनके ललाट अर्थात् भाल की अग्नि और भी अधिक प्रचंडतर हो कर धधक उठती है, जो घिम घिम की ध्वनि से बजते हुए मृदंग के गंभीर घोष की ताल से ताल मिला कर प्रचंड ताण्डव कर रहे हैं, उन भगवान शिव की जय हो।

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्ठयो: सुहृद्विपक्षपक्षयो:।
तृणारविन्दचक्षुषो: प्रजामहीमहेन्द्रयो:
समप्रवृत्तिक: कदा सदाशिवं भजाम्यहम्।।12।।

भगवान शिव की भक्ति में रत रावण जानता है कि वे सभी के प्रति समभाव रखते हैं, सबसे प्रेम करते हुए भी सबसे निलिप्त रहते हैं। उसके मन में यह अभिलाषा जागृत होती है कि उन्हें पाने के लिए, उनका सानिध्य पाने के लिए में भी उनके जैसा समभाव सब के प्रति रख पाउँ तो कितना अच्छा हो। इसलिए वह सोचता है कि मैं कब पत्थर की शय्या और सुन्दर बिछौनों में, सर्पमाला और मोतियों की माला में अंतर न करते हुए उन दोनों के प्रति एक ही अनासक्त दृष्टि और निलिप्त भाव रखूंगा ! कब मित्र एवं शत्रु को समतुल्य समझ कर उनसे अप्रभावित अंतःकरण वाला बनूँगा तथा कमलनयनी रमणियों को तृणवत् (पास की तरह) तुच्छ समझेंगा। हृदय में उठती हुई कामनाओं से में कब ऊपर उठ पाउँगा ! क्या मैं किसी साधारण प्रजाजन और पृथ्वी के किसी चक्रवर्ती सम्राट के प्रति एक-सी दृष्टि, एक सा भाव रख पाउँगा ? मेरे आराध्य के लिए तो दोनों ही समतुल्य हैं, तो फिर में कब इन सभी में समान भावना रखते हुए अपने भगवान सदाशिव की आराधना करूंगा।

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मति: सदा शिर:स्थमञ्जलिं वहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नक:
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्।।13।।

रावण के भक्त-मन की यह साध है कि मैं भगवान शिव को निरंतर भजता रहूं। बस गंगाजी की गोद में, गंगा के कछारों में, किसी वन-उपवन में तृण-लताओं से आच्छादित छोटा सा कुटीर हो, जहाँ में सब कुछ बिसार कर केवल शिव-मन्त्र के जाप का सुख पाऊं ! अपने हृदय की इसी कामना को, अपनी आत्मा की इसी पुकार को रावण इस प्रकार इस श्लोक में ध्वनित करता है। वह कहता है कि कब निलिम्पनिर्झरी यानि सुरसरिता गंगा के तटवर्ती किसी कुंजबन में, पर्णकुटीर में निवास करता हुआ में अपने मन में उठने वाले दुर्विचारों को छोड़ पाउंगा तथा अपने माथे से अंजलि लगा कर शिव

को भजूँगा ! इधर उधर घूमते नेत्रों वाला, चंचल नेत्रों वाला मैं कब अपने माथे पर पवित्र तिलक (त्रिपुण्ड्र तिलक) अंकित करूंगा, जो भाल पर भूषण- सा प्रतीत होगा। और फिर शिव का मंत्रोच्चार करता हुआ मैं कब सुखी होऊंगा ! अपने आराध्य शिव की निकटता उसे सुलभ हो, वही उसका सुख है।

इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं
पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम्।
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं
विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिन्तनम्।।14।।

इस श्लोक में रावण ने शिव-चितन की गरिमा तथा महिमा पर प्रकाश डाला है। वह कहता है कि जो कोई भी व्यक्ति नियमित रूप से इस उत्तम स्तवन का पाठ अथवा स्मरण करता है, या इसे श्रवण करता है, वह सदैव परम शुद्ध व निर्मल रहता है। समस्त जगत के गुरु भगवान हर यानि शंकर की कृपा से अपनी निर्मल भक्ति में वह अविलम्ब (जल्दी) प्रगति करता है। शम्भु उसे अपनी शरण में ले लेते हैं। शिवनिष्ठ व्यक्ति अथवा शिवभक्त की अन्य गति या दुर्गति नहीं होती। यह बात निश्चित है कि श्रीशंकर का चिंतन मनुष्य की मोहमाया की हर लेता है, देहधारी यानि मनुष्य का मोह दूर करता है एवं शिवभक्त इस प्रकार मायाजाल से मुक्त हो कर, निष्पाप हो कर, अंत में शिव-शरणागति पाता है।

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं
यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां
लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः।।15।।

शिवताण्डव स्तोत्र के अंतिम श्लोक में रावण इस स्तोत्र या स्तवन की महत्ता बताते हुए कहता है कि प्रदोषकाल में अर्थात् संध्या के समय, पूजन के उपरांत (पूजा के बाद) इस शिवभक्तिमय स्तोत्र का पाठ जो कोई पूजापरायण व्यक्ति करता है, उस भक्त को शिवजी श्रेष्ठ हाथी-घोड़ों से युक्त रथ तथा सदैव अचल रहने वाली, सुमुखी और स्थिर लक्ष्मी प्रदान करते हैं, चंचला लक्ष्मी भी उसके पास अचंचल अर्थात् अचल बन कर स्थिर रहती है। तात्पर्य यह है कि वह व्यक्ति विपुल वैभव दीर्घ काल तक भोगता है तथा लोक में सम्मानित होता है। लक्ष्मी को सुमुखी कहने से अभिप्राय है लक्ष्मी के सानुकूल रहने से। लक्ष्मी अनुकूल न रह कर यदि प्रतिकूल रहती है, तो व्यक्ति को धनवान तो बनाती है, किन्तु उसकी शुभ बुद्धि को हर लेती है तथा अंत में पीड़ादायिनी बनती है। इसलिए स्थिर और सुमुखी लक्ष्मी के प्रदान करने की महिमा गाई है।

बोध प्रश्न-

1. शिव तांडव स्तोत्र के रचयिता कौन हैं?

(क) वाल्मीकि
(ख) रावण
(ग) वेदव्यास
(घ) तुलसीदास

2. शिव तांडव स्तोत्र किस देवता की स्तुति में रचित है?

(क) भगवान शिव
(ख) भगवान विष्णु
(ग) भगवान ब्रह्मा
(घ) भगवान गणेश

3. "तांडव" शब्द का आशय क्या है?

(क) शांति और ध्यान
(ख) संहारात्मक नृत्य
(ग) भक्तिपूर्ण जप
(घ) ज्ञान और शिक्षा

4. शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव के किस अंग का वर्णन प्रमुख रूप से किया गया है?

(क) नेत्र और जटा
(ख) मुख और हृदय
(ग) हाथ और पैर
(घ) केवल शृंग

5. शिव तांडव स्तोत्र में कौनसा वाद्य विशेष रूप से उल्ले-खित है?

(क) वीणा
(ख) ढोलक
(ग) डमरू
(घ) बांसुरी

6. शिव तांडव स्तोत्र का मुख्य उद्देश्य क्या है?

(क) भगवान शिव की महिमा का वर्णन
(ख) भक्ति और ध्यान का अभ्यास
(ग) मानसिक शांति और आध्यात्मिक ऊर्जा का संचार
(घ) उपरोक्त सभी

7. शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव के तांडव नृत्य का प्रतीक क्या है?

(क) केवल संहार
(ख) सृष्टि का चक्र
(ग) ध्यान और साधना
(घ) भक्ति का मार्ग

8. शिव तांडव स्तोत्र किस छंद में रचित है?

(क) शार्दूलविक्रीड़ित
(ख) त्रिपदी
(ग) द्रुत छंद
(घ) द्विपद छंद

4.5 सारांश

शिव तांडव स्तोत्र संस्कृत साहित्य और भक्ति परंपरा की एक अद्वितीय रचना है। इसका रचनाकार रावण था, जो केवल लंका का सम्राट ही नहीं, बल्कि एक महान विद्वान, संगीतज्ञ और परम भक्त भी था। इस स्तोत्र में भगवान शिव के तांडव रूप उनकी विराट शक्ति, संहारात्मक ऊर्जा और दिव्य करुणा का अत्यंत भावपूर्ण चित्रण किया गया है। शिव तांडव स्तोत्र में शिव के रूप, गुण, ललाट, जटाओं में गंगा, चंद्रमा की शोभा, नागों की माला, त्रिशूल और डमरू जैसी दिव्य प्रतीकों का वर्णन है। प्रत्येक श्लोक शिव के तांडव नृत्य की गति, लय और भाव को जीवंत रूप में प्रस्तुत करता है, जिससे पाठक या श्रोता के हृदय में भक्ति, श्रद्धा और आध्यात्मिक ऊर्जा जागृत होती है। स्तोत्र में शिव के तांडव नृत्य को केवल संहार का प्रतीक नहीं बल्कि सृष्टि के निर्माण और पालन के चक्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रावण ने अपनी गहन भक्ति और श्रद्धा से यह स्तोत्र रचा, जिसमें शिव के सौंदर्य, शक्ति, करुणा और भक्तवत्सलता का अद्वितीय वर्णन है। प्रत्येक श्लोक में शिव के अंगों, उनके नृत्य की गति और उनके दिव्य स्वरूप की विशिष्टता का अलंकारिक और काव्यात्मक चित्रण मिलता है। शिव तांडव स्तोत्र में भगवान शिव की शक्ति और करुणा के संतुलन को भी दर्शाया गया है। उनका तांडव न केवल संहारक है, बल्कि उनके भक्तों के कल्याण और जीवन में

सकारात्मक ऊर्जा का स्रोत भी है। इसमें शिव की महिमा, उनका विराट रूप, उनकी दिव्यता और उनके भक्तों के प्रति अनुकंपा का वर्णन है। उनके रूप और लीलाओं का स्मरण भक्त को भक्ति और आत्मिक आनंद की अनुभूति कराता है। आज के आधुनिक युग में शिव तांडव स्तोत्र का महत्व अत्यंत प्रासंगिक है। जीवन में तनाव, मानसिक दबाव और अस्थिरता के समय इसका पाठ मानसिक शांति और ऊर्जा प्रदान करता है। स्तोत्र का पाठ केवल धार्मिक कर्म नहीं बल्कि आध्यात्मिक साधना का एक साधन भी है। यह पाठक को भगवान शिव की महिमा, शक्ति और करुणा के निकट ले जाता है और मानसिक संतुलन तथा सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है। इस स्तोत्र की लय, छंद और शब्दों की मधुरता पाठ में विशेष अनुभव कराती है। उच्चारण के समय शिव के तांडव नृत्य का अनुभव पाठक के मन में जागृत होता है। यह न केवल भक्ति को बढ़ाता है, बल्कि मानसिक शांति, आत्मिक उन्नति और आध्यात्मिक जागरूकता भी प्रदान करता है। शिव तांडव स्तोत्र भगवान शिव की महिमा, उनकी शक्ति, करुणा और तांडव रूप का अद्वितीय काव्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करता है। यह भक्त के हृदय में भक्ति, श्रद्धा और आध्यात्मिक आनंद का संचार करता है और जीवन में मानसिक, आध्यात्मिक और सृजनात्मक ऊर्जा का स्रोत बनता है।

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.ख 2.क 3.ख 4.क 5. ग 6.घ 7. ख 8.क

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः
2. स्तोत्ररत्नाकरः
3. स्तोत्ररत्नावली

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शिव तांडव स्तोत्र का विस्तृत वर्णन कीजिए।

2. शिव तांडव स्तोत्र का अर्थ सहित व्याख्या कीजिए।

इकाई - 5 मधुराष्टकम्

इकाई की संरचना –

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मधुराष्टकम् स्तोत्र परिचय
5.4 मधुराष्टकम् स्तोत्र
5.5 सारांश
5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई विविध स्तोत्र पाठ नामक पुस्तक के मधुराष्टकम् नामक शीर्षक से है। मधुराष्टकम् स्तोत्र संस्कृत भक्ति साहित्य का एक अत्यंत लोकप्रिय और भावपूर्ण स्तोत्र है, जिसकी रचना महाभागवत श्री वल्लभाचार्य जी ने की थी। यह स्तोत्र भगवान श्रीकृष्ण के मधुर, सौम्य और आकर्षक स्वरूप का काव्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करता है। 'मधुर' शब्द यहाँ केवल मिठास का द्योतक नहीं है, बल्कि प्रेम, करुणा, सौंदर्य और आनंद के समन्वित भाव को व्यक्त करता है। इस स्तोत्र में भगवान श्रीकृष्ण के रूप, गुण, वाणी, लीला, वेश, चरण, मुस्कान तथा उनके समस्त कार्यों को मधुर कहा गया है। मधुराष्टकम् की विशेषता यह है कि इसमें भगवान के प्रत्येक पक्ष को प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखा गया है, जिससे भक्त के हृदय में अनुराग, भक्ति और आत्मिक आनंद की अनुभूति होती है। यह स्तोत्र पुष्टि मार्ग की भक्ति भावना को सशक्त रूप में प्रस्तुत करता है, जहाँ ईश्वर को भय या दायित्व से नहीं, बल्कि प्रेम और आत्मीयता से पूजने की परंपरा है। यह रचना भक्त और भगवान के मधुर संबंध को प्रतिष्ठित करती है। यह स्तोत्र मानव को यह संदेश देता है कि जब ईश्वर के प्रति प्रेम पूर्णतः निश्छल और भावनात्मक होता है, तब जीवन स्वयं मधुरता से भर उठता है। इस प्रकार मधुराष्टकम् न केवल एक स्तुति काव्य है, बल्कि भक्ति, सौंदर्य और रसात्मक अनुभूति का अनुपम संगम भी है।

4.2उद्देश्य

- ❖ मधुराष्टकम् के महत्व को समझ सकेंगे।
- ❖ मधुराष्टकम् की पाठ विधि को जान पायेंगे।
- ❖ वर्तमान में मधुराष्टकम् की उपयोगिता को समझ सकेंगे।
- ❖ सरल रूप में मधुराष्टकम् के अर्थ को जान पायेंगे।

4.3 मधुराष्टकम् स्तोत्र का परिचय

मधुराष्टकम् का महत्व-

मधुराष्टकम् संस्कृत साहित्य और भक्ति परंपरा का एक अनुपम स्तोत्र है। इसके रचयिता महाप्रभु वल्लभाचार्य हैं, जो पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक और श्रीकृष्ण-भक्ति के महान आचार्य माने जाते हैं। यह स्तोत्र भगवान श्रीकृष्ण के माधुर्य रूप का अत्यंत सरस, सरल और गहन वर्णन करता है।

मधुराष्टकम् में कुल आठ श्लोक हैं, और प्रत्येक श्लोक में श्रीकृष्ण के विभिन्न अंगों, गुणों और लीलाओं को "मधुर" अर्थात् मधुर, मनोहर और आनंददायक बताया गया है। उनके अधर मधुर हैं, मुख मधुर है, नेत्र मधुर हैं, वाणी मधुर है, चाल मधुर है, वेश मधुर है—यहाँ तक कि उनका नाम, उनकी लीला और उनका सर्वस्व मधुर बताया गया है। इस प्रकार यह स्तोत्र श्रीकृष्ण की सर्वांगीण माधुर्य भावना को उजागर करता है। इस स्तोत्र का आध्यात्मिक महत्व अत्यंत गहन है। मधुराष्टकम् केवल स्तुति नहीं, बल्कि भक्त और भगवान के बीच मधुर संबंध की अभिव्यक्ति है। इसमें ज्ञान या वैराग्य की कठोरता नहीं, बल्कि प्रेम, सरलता और आत्मसमर्पण की कोमल भावना है। यह भक्त को यह अनुभूति कराता है कि ईश्वर भय या दूरी का विषय नहीं, बल्कि प्रेम और आनंद का साक्षात् स्वरूप हैं। दार्शनिक दृष्टि से मधुराष्टकम् पुष्टिमार्ग की मूल भावना को स्पष्ट करता है, जहाँ भगवान की कृपा से जीव का उद्धार होता है। यहाँ भक्ति किसी साधना का बोझ नहीं, बल्कि स्वाभाविक प्रेम का प्रवाह है। "सर्वं मधुरम्" का भाव यह सिखाता है कि जब दृष्टि भक्तिमय हो जाती है, तब संसार और ईश्वर—दोनों मधुर प्रतीत होते हैं। सांस्कृतिक और साहित्यिक दृष्टि से भी मधुराष्टकम् का विशेष स्थान है। इसकी भाषा सरल, लयात्मक और काव्यात्मक है, जिससे यह जन-जन में लोकप्रिय हुआ। भजन, कीर्तन और मंदिरों में इसका नियमित पाठ होता है, जिससे श्रद्धालुओं के मन में शांति, आनंद और भक्तिभाव का संचार होता है।

श्रीकृष्ण की कृपा प्राप्ति: इसका पाठ करने से भगवान कृष्ण प्रसन्न होते हैं और उनकी कृपा बरसती है, जिससे भक्त को उनका आशीर्वाद मिलता है।

मन की शांति और एकाग्रता: यह मन को शांत करता है, नकारात्मक विचारों को दूर करता है, और एकाग्रता बढ़ाता है, जिससे आध्यात्मिक साधना में मदद मिलती है।

भक्ति और प्रेम का संचार: यह भगवान कृष्ण के प्रति प्रेम और भक्ति को गहरा करता है, जिससे भक्त कृष्ण के साथ एक अंतरंग और व्यक्तिगत संबंध महसूस करता है।

दिव्य आनंद की अनुभूति: यह जीवन में आनंद, मधुरता और प्रेम भर देता है, और कृष्ण के सभी अंगों (होंठ, चेहरा, आँखें, चलना, आदि) की मधुरता का वर्णन करता है।

आध्यात्मिक विकास: यह एक शक्तिशाली आध्यात्मिक साधन है जो कृष्ण के अस्तित्व के हर पहलू में दिव्य माधुर्य का बोध कराता है और आध्यात्मिक विकास में सहायक है।

इच्छाओं की पूर्ति: माना जाता है कि इसके पाठ से भगवान कृष्ण भक्तों की इच्छाएँ पूरी करते हैं।

सकारात्मकता और सांत्वना: कृष्ण की शाश्वत सुंदरता और मधुरता पर ध्यान केंद्रित करने से जीवन में शांति और गहरी सांत्वना मिलती है।

वर्तमान जीवन में मधुराष्टकम् की उपयोगिता-

आधुनिक जीवन तीव्र गति, प्रतिस्पर्धा, तनाव और असंतोष से युक्त हो गया है। भौतिक उपलब्धियों की अधिकता के बावजूद मनुष्य मानसिक शांति और आंतरिक आनंद से वंचित दिखाई देता है। ऐसे समय में भारतीय भक्ति साहित्य के अमूल्य ग्रंथ मानव जीवन को संतुलन और मधुरता प्रदान करने में अत्यंत सहायक सिद्ध होते हैं। मधुराष्टकम्, श्री वल्लभाचार्य द्वारा रचित, ऐसा ही एक दिव्य स्तोत्र है जिसकी प्रासंगिकता आज भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी अपने रचना-काल में थी। मधुराष्टकम् का केंद्रीय भाव "सर्वं मधुरम्" है। यह भाव वर्तमान जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण को विकसित करता है। जब मनुष्य जीवन की प्रत्येक स्थिति को ईश्वर की कृपा मानकर स्वीकार करना सीखता है, तब तनाव, निराशा और क्रोध का स्थान संतोष और शांति ले लेते हैं। यह स्तोत्र हमें सिखाता है कि दृष्टि के परिवर्तन से ही जीवन मधुर बन सकता है। आज के युग में संबंधों में कटुता, असहिष्णुता और अहंकार बढ़ता जा रहा है। मधुराष्टकम् व्यक्ति के स्वभाव में कोमलता, प्रेम और विनम्रता का विकास करता है। श्रीकृष्ण के मधुर व्यवहार, वाणी और आचरण का स्मरण करते हुए व्यक्ति स्वयं भी मधुर बोलने, सहनशील रहने और करुणामय बनने की प्रेरणा प्राप्त करता है। इससे पारिवारिक, सामाजिक और व्यावसायिक संबंधों में सौहार्द स्थापित होता है। मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी मधुराष्टकम् अत्यंत उपयोगी है। इसके नियमित पाठ और श्रवण से मन एकाग्र होता है, नकारात्मक विचारों में कमी आती है और भावनात्मक संतुलन विकसित होता है। संगीतात्मक लय और भक्तिपूर्ण भाव मन को शांत कर ध्यान और आत्मचिंतन की ओर प्रेरित करते हैं, जो आधुनिक जीवन की चिंता और अवसाद से मुक्ति में सहायक है। कर्मयोग और भक्ति के समन्वय की शिक्षा भी मधुराष्टकम् देता है। यह हमें यह अनुभव कराता है कि जीवन के समस्त कर्म—यदि ईश्वर को समर्पित हों—तो वे बोझ नहीं, बल्कि आनंद का स्रोत बन जाते हैं। इससे व्यक्ति अपने दायित्वों का निर्वहन प्रसन्नता और निष्ठा के साथ करता है। वर्तमान जीवन की जटिलताओं में मधुराष्टकम् का चिंतन और अनुकरण मानव जीवन को सार्थक, सुखद और आध्यात्मिक रूप से समृद्ध बना सकता है।

मधुराष्टकम् का ग्रंथों में उल्लेख

मधुराष्टकम् स्वयं एक स्वतंत्र स्तोत्र है, फिर भी इसके भाव, दर्शन और प्रभाव का उल्लेख अथवा प्रतिबिंब अनेक वैष्णव, भक्तिकाव्य तथा पुष्टिमार्गीय ग्रंथों में प्राप्त होता है। यह स्तोत्र भारतीय भक्ति परंपरा में माधुर्य-भक्ति का प्रतिनिधि ग्रंथ माना जाता है।

सर्वप्रथम मधुराष्टकम् का स्थान पुष्टिमार्गीय साहित्य में अत्यंत महत्वपूर्ण है। श्री वल्लभाचार्य द्वारा रचित सिद्धांत-रहस्य, पुष्टिप्रवाहमर्यादा तथा अनुभाष्य जैसे ग्रंथों में प्रतिपादित भक्ति-दर्शन वही है जो मधुराष्टकम् में काव्यात्मक रूप में प्रकट होता है। इन ग्रंथों में भगवान श्रीकृष्ण के अनुग्रह, सौंदर्य और माधुर्य को ही साधना का केंद्र माना गया है।

पुष्टिमार्ग के उत्तरवर्ती आचार्यों—विशेषतः श्री विट्ठलनाथ (गुसाईंजी) तथा अष्टछाप के कवियों—के साहित्य में मधुराष्टकम् के भावों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। सूरदास, नंददास, कुंभनदास आदि के पदों में श्रीकृष्ण के रूप, लीला और व्यवहार की मधुरता का जो वर्णन मिलता है, वह मधुराष्टकम् की "सर्वं मधुरम्" भावना से पूर्णतः साम्य रखता है।

वैष्णव भक्ति के व्यापक संदर्भ में देखा जाए तो भागवत पुराण मधुराष्टकम् की भावभूमि का मूल स्रोत माना जा सकता है। यद्यपि भागवत पुराण में मधुराष्टकम् का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता, किंतु श्रीकृष्ण की बाल, गोप और रास-लीलाओं में जिस माधुर्य, सौंदर्य और रस की अभिव्यक्ति है, वही तत्व मधुराष्टकम् में संक्षिप्त और स्तोत्रात्मक रूप में प्रकट होता है।

इसी प्रकार भक्ति-रसामृत-सिन्धु (श्री रूप गोस्वामी) जैसे ग्रंथों में वर्णित माधुर्य रस की अवधारणा मधुराष्टकम् के भाव से गहरे रूप में जुड़ी हुई है। इन ग्रंथों में भक्ति को रसात्मक अनुभव माना गया है, और माधुर्य रस को सर्वोच्च स्थान दिया गया है—जो मधुराष्टकम् की मूल आत्मा है।

इसके अतिरिक्त, विभिन्न स्तोत्र-संग्रहों, वैष्णव प्रार्थना ग्रंथों तथा मंदिर-परंपराओं में मधुराष्टकम् का नियमित पाठ और संदर्भ प्राप्त होता है। अनेक टीकाकारों और विद्वानों ने अपने भक्ति-ग्रंथों में मधुराष्टकम् को माधुर्य भक्ति के आदर्श उदाहरण के रूप में उद्धृत किया है।

अतः यह कहा जा सकता है कि मधुराष्टकम् का उल्लेख केवल प्रत्यक्ष उद्धरणों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका भावात्मक, दार्शनिक और काव्यात्मक प्रभाव भारतीय भक्ति साहित्य के अनेक ग्रंथों

में व्यापक रूप से व्याप्त है। यह स्तोत्र माधुर्य भक्ति की ऐसी अमूल्य धरोहर है, जिसने वैष्णव परंपरा को गहराई, सरसता और आध्यात्मिक सौंदर्य प्रदान किया है।

5.4 मधुराष्टकम् स्तोत्र

मधुराष्टकम्

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥१॥

भावार्थ- हे कृष्ण आपके होंठ मधुर हैं, आपका मुख मधुर है, आपकी आंखें मधुर हैं, आपकी मुस्कान मधुर है, आपका हृदय मधुर है, आपका जाना भी मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है

व्याख्या- इस श्लोक में कवि भगवान के बाह्य सौंदर्य के साथ उनके आंतरिक सौंदर्य का भी वर्णन करता है। केवल रूप ही नहीं, अपितु उनका हृदय और स्वभाव भी प्रेममय है। भक्त की दृष्टि में भगवान का प्रत्येक अंग आकर्षण और आनंद का स्रोत है।

वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम् ।
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥२॥

भावार्थ- आपका बोलना मधुर है, आपका चरित्र मधुर हैं, आपके वस्त्र मधुर हैं, आपका मुड़कर देखना भी मधुर है, आपका चलना मधुर है, आपका गायों के पीछे भटकना मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ।।2।

व्याख्या- यहाँ श्रीकृष्ण के व्यवहार और आचरण की मधुरता का वर्णन है। वे जो कहते हैं, जैसे रहते हैं और जैसे चलते हैं—सब भक्तों के लिए आनंददायक है। यह श्लोक आदर्श जीवन-व्यवहार की प्रेरणा देता है।

वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरः पाणिर्मधुरः पादौ मधुरौ ।
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥३॥

भावार्थ- आपकी बांसुरी मधुर है, आपके लगाए हुए पुष्प मधुर हैं, आपके हाथ मधुर हैं, आपके चरण मधुर हैं, आपका नृत्य मधुर है, आपकी मित्रता मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है। ।।3।।

व्याख्या- यह श्लोक श्रीकृष्ण की लीलाओं का चित्र प्रस्तुत करता है। उनकी बाँसुरी जीवात्मा को ईश्वर की ओर आकर्षित करती है। उनका सखा-भाव दर्शाता है कि भगवान भक्तों से स्नेहपूर्ण और समानता का संबंध रखते हैं।

गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।४।।

भावार्थ- आपके गीत मधुर हैं, आपका पीना मधुर है, आपका खाना मधुर है, आपका सोना मधुर है, आपका रूप मधुर है, आपका टीका मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ।।4।।

व्याख्या- यहाँ भगवान की मानवीय लीलाओं की मधुरता दिखाई गई है। वे सामान्य जीवन की क्रियाओं के माध्यम से भक्तों को यह अनुभूति कराते हैं कि ईश्वर जीवन से अलग नहीं, बल्कि जीवन के हर क्षण में व्याप्त हैं।

करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं रमणं मधुरम् ।
वमितं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।५।।

भावार्थ- आपके कार्य मधुर हैं, आपका तैरना मधुर है, आपका हरण करना मधुर है(हरण करना याने खींच लेना हमारे अभिमान या पाप का हरण करना) ,आपका प्यार करना मधुर है, आप जो हमें सूर्य का प्रकाश, वर्षा आदि बिना किसी भेदभाव से दे रहे है, वह मधुर हैं (वमितं मधुरं)(वैसे तो वमन का अर्थ: उदगार-डकार -वमन होता है.. पर यहां वमन यानि एक अभ्यास के रुप में लिया है.. भगवान प्रकृति दे रहे हैं, वैसा अर्थ लिया है), आपका शांत रहना मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ।।5।।

व्याख्या- यह श्लोक बताता है कि भगवान के कठोर प्रतीत होने वाले कार्य भी करुणा से भरे होते हैं। वे दंड देते हुए भी कल्याण करते हैं। ईश्वर के प्रत्येक कर्म में कृपा और प्रेम निहित है।

गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीची मधुरा ।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥६॥

भावार्थ- आपका भक्तों से प्रेम करना और उनके बारे में चिंतन करना मधुर है (गुंजा मधुरा), आपकी माला मधुर है, आपकी यमुना मधुर है, उसकी लहरें मधुर हैं, उसका पानी मधुर है, उसके कमल मधुर हैं, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ॥6॥

व्याख्या- यह श्लोक दर्शाता है कि भगवान की उपस्थिति से प्रकृति भी मधुर हो जाती है। ईश्वर के संस्पर्श से सृष्टि का प्रत्येक अंश सौंदर्य और पवित्रता से भर उठता है।

गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं मुक्तं मधुरम् ।
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥७॥

भावार्थ- आपकी गोपियां मधुर हैं, आपकी लीला मधुर है, आप उनके साथ मधुर हैं, आप उनके बिना मधुर हैं, आपके दर्शन मधुर है, आपकी शिष्टता मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ॥7॥

व्याख्या- यहाँ माधुर्य-भक्ति की पराकाष्ठा दिखाई देती है। मिलन और विरह दोनों ही भक्ति के रूप हैं। भक्त के लिए हर अनुभव भगवान की कृपा से मधुर बन जाता है।

गोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा ।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥८॥

भावार्थ: आपके गोप मधुर हैं, आपकी गायें मधुर हैं, आपकी छड़ी मधुर है (आपके हाथों में जो लाठी है वह मधुर है, वह आपको आधार दे रही है- भगवान जीव से कह रहे हैं कि मेरे पास आधार है, शक्ति है, बल है) , आपकी सृष्टि मधुर है, आपका अलग रहना, वियोग मधुर है (दलितं का अर्थ है अलग रहना, द्वेत अर्थात् आप का द्वेत भी मधुर है), आपका वर देना मधुर है, मधुरता के ईश हे श्रीकृष्ण! आपका सब कुछ मधुर है ॥8॥

व्याख्या- अंतिम श्लोक में कवि यह प्रतिपादित करता है कि भगवान की दृष्टि से सृष्टि का हर परिवर्तन कल्याणकारी है। सृजन, विनाश और फल—सब ईश्वर की लीला के अंग हैं और भक्त के लिए मधुर हैं।

बोध प्रश्न-

1. मधुराष्टकम् स्तोत्र के रचयिता कौन हैं?

(क) सूरदास
(ख) जयदेव
(ग) श्री वल्लभाचार्य
(घ) तुलसीदास

2. मधुराष्टकम् स्तोत्र किस देवता की स्तुति में रचित है?

(क) भगवान शिव
(ख) भगवान विष्णु
(ग) भगवान श्रीकृष्ण
(घ) भगवान राम

3. मधुराष्टकम् स्तोत्र में कुल कितने श्लोक हैं?

(क) चार
(ख) छह
(ग) दश
(घ) आठ

4. मधुराष्टकम् स्तोत्र का केंद्रीय भाव क्या है?

(क) मधुरता और प्रेम
(ख) करुण रस
(ग) क्रोध
(घ) श्रृंगार रस

5. मधुराष्टकम् स्तोत्र किस भक्ति मार्ग से संबंधित है?

(क) ज्ञान मार्ग

(ख) कर्म मार्ग

(ग) योग मार्ग

(घ) पुष्टि मार्ग

6. मधुराष्टकम् स्तोत्र में भगवान श्रीकृष्ण के किस वाद्य का उल्लेख है?

(क) शंख

(ख) मुरली

(ग) वीणा

(घ) ढोल

7. मधुराष्टकम् स्तोत्र में भगवान के किस पक्ष को मधुर कहा गया है?

(क) केवल रूप को

(ख) केवल वाणी को

(ग) केवल लीला को

(घ) उनके समस्त रूप, गुण और कर्म को

5.5 सारांश

मधुराष्टकम् स्तोत्र संस्कृत भक्ति साहित्य की एक अत्यंत प्रसिद्ध और भावप्रधान रचना है, जिसकी रचना आचार्य श्री वल्लभाचार्य जी ने की थी। यह स्तोत्र भगवान श्रीकृष्ण की मधुरता, सौंदर्य और प्रेममय स्वरूप का काव्यात्मक चित्रण प्रस्तुत करता है। मधुराष्टकम् के आठ श्लोकों में भगवान के रूप, गुण, वाणी, लीला और व्यवहार की मधुरता को इस प्रकार वर्णित किया गया है कि भक्त का हृदय सहज ही प्रेम और भक्ति से भर उठता है। यह स्तोत्र पुष्टि मार्ग की भक्ति परंपरा का सशक्त उदाहरण है, जहाँ ईश्वर को आनंद और प्रेम के रूप में स्वीकार किया गया है। मधुराष्टकम् की मूल भावना यह है कि भगवान श्रीकृष्ण का प्रत्येक अंग, प्रत्येक कर्म और प्रत्येक भाव मधुर है। स्तोत्र का आरंभ ही इस विचार से होता है कि श्रीकृष्ण का मुख मधुर है, उनकी मुस्कान मधुर है और उनकी वाणी भी मधुर है। इससे यह संकेत मिलता है कि भगवान की बाह्य सुंदरता के साथ-साथ उनका आंतरिक स्वरूप भी करुणा और प्रेम से परिपूर्ण है। भक्त जब इन गुणों का स्मरण करता है, तो

उसके मन में स्वाभाविक रूप से अनुराग और श्रद्धा उत्पन्न होती है।इस स्तोत्र में श्रीकृष्ण की बाल और किशोर लीलाओं का भी मधुर वर्णन मिलता है। उनकी मुरली की ध्वनि, उनके चरणों की गति, गोपियों के साथ की गई लीलाएँ तथा यमुना तट पर उनका विहार—सब कुछ मधुरता से ओतप्रोत बताया गया है। यहाँ मधुरता केवल इंद्रिय सुख तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आध्यात्मिक आनंद का प्रतीक है। यह आनंद भक्त को संसार की कटुता और दुःखों से ऊपर उठाकर दिव्यता की ओर ले जाता है। मधुराष्टकम् का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें भगवान और भक्त के बीच के संबंध को अत्यंत आत्मीय और प्रेमपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें दास्य या भय का भाव नहीं, बल्कि सखा और प्रियतम का भाव प्रमुख है। यह स्तोत्र यह संदेश देता है कि जब भक्त ईश्वर को अपने हृदय से निकट मानकर प्रेम करता है, तब भक्ति सहज और आनंदमयी हो जाती है। यही पुष्टि मार्ग की विशेषता है, जहाँ ईश्वर की कृपा को सर्वोपरि माना गया है। इस स्तोत्र में यह भी स्पष्ट किया गया है कि भगवान श्रीकृष्ण का प्रत्येक कर्म लोककल्याण के लिए है। उनकी लीलाएँ भले ही बाल सुलभ प्रतीत हों, परंतु उनमें गहरा आध्यात्मिक अर्थ निहित है। मधुराष्टकम् भक्त को यह अनुभव कराता है कि ईश्वर का स्मरण केवल पूजा या अनुष्ठान तक सीमित नहीं है, बल्कि उनके गुणों और लीलाओं का प्रेमपूर्वक चिंतन ही सच्ची भक्ति है। मधुराष्टकम् स्तोत्र का सार यह है कि भक्ति जीवन को मधुर बनाती है। जब मनुष्य भगवान श्रीकृष्ण के मधुर स्वरूप का ध्यान करता है, तो उसके भीतर की कठोरता, क्रोध और नकारात्मकता स्वतः समाप्त होने लगती है। यह स्तोत्र मन को शांति, संतोष और आनंद प्रदान करता है तथा जीवन को सकारात्मक दिशा देता है। यही कारण है कि इसका पाठ न केवल आध्यात्मिक साधना के रूप में, बल्कि मानसिक शांति के साधन के रूप में भी किया जाता है। समग्र रूप से, मधुराष्टकम् स्तोत्र प्रेम, सौंदर्य और भक्ति का अनुपम संगम है। यह स्तोत्र भक्त को यह सिखाता है कि ईश्वर की उपासना प्रेम और आनंद के साथ की जाए, न कि भय और बंधन के साथ। भगवान श्रीकृष्ण की सर्वव्यापक मधुरता का स्मरण कर यह रचना मानव जीवन को आध्यात्मिक रूप से समृद्ध और आनंदमय बनाने की प्रेरणा देती है।

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.ग 2.ग 3.घ 4.क 5. घ 6 . ख 7. घ

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः
2. स्तोत्ररत्नाकरः

3. स्तोत्ररत्नावली

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मधुराष्टकम् स्तोत्र का विस्तृत परिचय दीजिए।

2. मधुराष्टकम् स्तोत्र में भगवान श्रीकृष्ण की मधुरता के विभिन्न पक्षों का वर्णन कीजिए।

खण्ड -2

स्तोत्र पाठ

इकाई -1 सूर्य स्तोत्र

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उदेश्य

1.3 विषय परिचय

1.3.1 पाँच देवता निम्नलिखित हैं -

1.3.2 पौराणिक दृष्टि -

1.3.3.1 सम्प्रदायों में एक रूपता

1.3.4 स्थापित करना

1.3.5 स्थापित करना

1.3.6 पूजा-उपासना करना

1.4 सूर्य उपासना

1.4.1 सूर्य स्तुति

1.5 आदित्य हृदय स्तोत्र पाठ

1.6 सूर्य अथर्वशीर्ष स्तोत्र

1.7 चक्षु उपनिषद पाठ

1.8 सूर्य स्तुति

1.9 बोधात्मक प्रश्न

1.10 सारांश

1.11 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1.12 सहायक पाठ्य सामग्री

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियों यह इकाई BAKA (N) 350 के विविध स्तोत्र पाठ के द्वितीय खण्ड से है जिसका शीर्षक सूर्य स्तोत्र है। इस इकाई के अन्तर्गत हम सूर्य से समन्धित समस्त स्तोत्रों के विषय में जानेंगे साथ ही उन स्तोत्रों का वैशिष्ट्य से भी परिचित हो सकेंगे। भारतीय सनातनी परम्परा में पंचदेव उपासना का बड़ा महत्व है ,वैदिक साहित्य एवं पुराणों में अनेक आख्यान मिलते हैं। पंच देव उपासना का अर्थ पाँच देवताओं की उपासना से है।

1.2 उदेश्य

- ❖ इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप कर्मकाण्ड के सिद्धांत से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ स्तोत्र पाठ के महत्व से परिचय हो सकेंगे।
- ❖ भगवान् सूर्य की उपासना विधि से परिचय हो सकेगा।
- ❖ सूर्य के स्तोत्र पाठों के मत्व से परिचय होगा।
- ❖ स्तोत्र पाठ का क्या वैशिष्ट्य है इस इकाई में बोध होगा।

1.3 विषय परिचय

पञ्च देव उपासना पद्वति सनातन धर्म में शास्त्र निहित है ,ये पांच प्रमुख देवता इस प्रकार हैं - शिव, विष्णु, शक्ति (देवी), सूर्य (सूर्य देव) और गणेश – प्रत्येक देवता की पूजा – उपासना किसी विशेष हेतु व प्रयोजन के लिए की जाती है ,। जैसे गणेश की पूजा करने से विघ्नों का शमन होता है। शिव की उपासना और पूजा विद्या को प्राप्त करने तथा काम को जीतने के लिए किया जाता है।इसी प्रकार विष्णु भक्ति और सुख-शान्ति के लिए , दुर्गा की शक्ति और कामनाओं की सिद्धि हेतु तथा **"आरोग्यं भाष्करादिच्छेत"**।

उपासना – पूजा में देवताओं की स्तुति के लिए विभिन्न स्तोत्रों को हमारे पुराणों वेदों में उल्लेख किया गया है , जिनके पाठ –जाप से मानव के समस्त मनोरथों की पूर्ति होती है।

इसी क्रम में जो –जो कामना हम अपने ईष्ट से व इन देवताओं से करते हैं ;उनकी सिद्धि हेतु उनके विभिन्न स्तोत्र पाठों व मन्त्रों का जाप किया जाता है।

सनातन धर्म के विविधता में एकता पर जोर देती है। आदि गुरुशंकराचार्य द्वारा स्मार्तों के लिए प्रचलित इस अनुष्ठान में इन देवताओं को पंचकोणीय क्रम में रखकर, प्रायः साधारण पत्थरों या प्रतीकों का प्रयोग करके, भक्तों को अपने चुने हुए इष्ट देवता पर ध्यान केन्द्रित करने का अवसर दिया जाता है, तथा साथ ही अन्य देवताओं को भी स्वीकार किया जाता है, जिससे आध्यात्मिक सद्भाव को बढ़ावा मिलता है तथा ईश्वर की एकता को समझने में सहायता मिलती है।

1.3.1 पाँच देवता निम्नलिखित हैं -

- शिव**:** पृथ्वी तत्व (पृथ्वी तत्त्व)का प्रतिनिधित्व करता है।
- विष्णु**:** आकाश/ईथर तत्व (आकाश तत्व)का प्रतिनिधित्व करता है।
- शक्ति **(दुर्गा/अम्बिका):** अग्नितत्व का प्रतिनिधित्व करता है।
- सूर्य **(सूर्य देव):** वायुतत्व का प्रतिनिधित्व करता है।
- गणेश**:** प्रायः इसे केन्द्रीय देवता या नेता के रूप में रखा जाता है, जो सभी तत्वों से जुड़ा होता है, तथा बाधाओं को दूर करने का प्रतीक होता है।

1.3.2 पौराणिक दृष्टि -

- **ईश्वर की एकता:** केंद्रीय विचार यह है कि ये पांचों अलग-अलग देवता नहीं हैं, बल्कि एक ही निराकार ब्रह्म (परम वास्तविकता) के विभिन्न पहलू या रूप हैं।
- पंचायतन**:** इस व्यवस्था को पंचायतन कहा जाता है, जिसका अर्थ है पांच वेदियों वाला मंदिर, जो अक्सर मंदिरों और घरों में देखा जाता है।
- **आध्यात्मिक विज्ञान:** यह अभ्यास पांच महान तत्वों (पंच महाभूतों) के साथ संरेखित होता है जो ब्रह्मांड और मानव शरीर की रचना करते हैं, तथा आध्यात्मिक पूजा को प्राकृतिक विज्ञान पर आधारित करते हैं।

1.3.3 सम्प्रदायों में एक रूपता -

सनातनी परम्परा में साधना-उपासना के मार्ग में विविध सम्प्रदाय हैं , जैसे शिवोपासना करने वाले शैव , दुर्गा जी कि साधना – उपासना वाले शक्ति , विष्णु के वैष्णव आदि हैं , यह मार्ग पूजा के लिए

एक संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करके विभिन्न परंपराओं (वैष्णववाद, शैववाद, शाक्तवाद, आदि) के बीच एक सेतु के रूप में कार्य करता है।

1. **3.5 स्थापित करना:** -गणेश, शिव, विष्णु, सूर्य और शक्ति के चित्रण (मूर्तियाँ, प्रतीक या पत्थर) को एक वर्ग में व्यवस्थित करें, जिसमें एक मध्य में और चार कोनों पर हों।

1.3.6 पूजा-उपासना करना: - बाधाओं को दूर करने के लिए प्रायः गणेश जी से शुरुआत करते हुए प्रत्येक देवता को प्रार्थना, मंत्र, फूल, धूप और दीप अर्पित करें। सभी की पूजा करते समय, भक्त अपने व्यक्तिगत पसंदीदा (इष्ट देवता) पर अधिक ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। इन रूपों की अंतर्निहित एकता और अंततः निराकार ब्रह्म को समझना, मूर्ति पूजा से आगे बढ़कर निराकार सत्य (निर्गुण ब्रह्म) तक पहुंचना।

1.4 सूर्य उपासना

सूर्य भगवान् पञ्च देवताओं में से एक हैं साथ ही यह नवग्रहों में ग्रहों का मुखिया या राजा भी है । जपाकुसुम के समान इनका रक्त वर्ण है । दोनों हाथों में कमल धारण किये हुए , सिन्दूर रंग के वस्त्र , आभुषण और माला धारण किये हैं । जगमगाते हुए हीरे या अग्नि के समान इनका तेज है । इनका प्रकाश विश्व के अंधकारों को दूर करने वाला है । सात घोड़े के रथ पर आरूढ़ होकर ये भुवनों की परिक्रमा करते हैं । इनके अधिदेवता शिव और प्रत्याधि देवता अग्नि हैं ।

1.4.1 सूर्य स्तुति

सूर्य स्तुति का अर्थ है सूर्यदेव की प्रार्थना, जिसमें उनके गुणों का वर्णन , उनके स्वरुप का वर्णन तथा उनसे कृपा की याचना की जाती है उनके प्रन्नता हेतु । इसके पाठ से आरोग्य, सौभाग्य, धन, यश और आत्मविश्वास की प्राप्ति होती है और सभी प्रकार के पाप व बाधाएं दूर होती हैं।

सूर्य स्तुति के लाभ: - भगवान् सूर्य की स्तुति से विभिन्न लाभ होते हैं ।

- **स्वास्थ्य और आरोग्य:** सूर्य स्तुति के नित्य पाठ से शरीर रोगमुक्त होता है और दीर्घायु प्राप्त होती है।
- **धन और समृद्धि:** यह स्तुति धन-धान्य, ऐश्वर्य और यश प्रदान करती है।

- **मानसिक और आध्यात्मिक लाभ:** मन शुद्ध होता है, आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।
- **पापों का नाश:** मानसिक, वाचिक और शारीरिक दुष्कर्मों से मुक्ति मिलती है।
- **बाधाओं का अंत:** सभी प्रकार की बाधाएं और कष्ट समाप्त हो जाते हैं।

कुछ प्रमुख सूर्य स्तुतियों के उदाहरण:

1. सूर्य गायत्री मंत्र:

- **मंत्र:** ॐ आदित्याय विद्महे, दिवाकराय धीमहि। तन्न: सूर्य: प्रचोदयात।।
- **अर्थ:** हम सूर्य को जानते हैं, दिवाकर का ध्यान करते हैं। हे सूर्यदेव, हमें प्रेरित कीजिए।

2. श्री सूर्याष्टकम् (एक श्लोक):

- **श्लोक:** बन्धूकपुष्प संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
  तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्।।
- **अर्थ:** मैं दोपहर के पुष्प के समान लाल वर्ण वाले, कश्यप के पुत्र, महान तेजस्वी, अंधकार के शत्रु, और सभी पापों को नष्ट करने वाले सूर्यदेव को प्रणाम करता हूँ।

3. सूर्य प्रार्थना (एक श्लोक):

- **श्लोक:** रूपं हि मंडलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि।
  किरणं सामवेद:।
- **अर्थ:** जिसका मंडल ऋग्वेद है, शरीर यजुर्वेद है, और किरणें सामवेद हैं।

1.5 आदित्य हृदय स्तोत्र पाठ

आदित्यहृदय स्तोत्र'

विनियोग

ॐ अस्य आदित्य हृदयस्तोत्रस्यागस्त्यऋषिरनुष्टुपछन्दः, आदित्यहृदयभूतो

भगवान ब्रह्मा देवता निरस्ताशेषविघ्नतया ब्रह्मविद्यासिद्धौ सर्वत्र जयसिद्धौ च विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ अगस्त्यऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुपछन्दसे नमः, मुखे। आदित्यहृदयभूतब्रह्मदेवतायै नमः हृदि।

ॐ बीजाय नमः, गुह्ये। रश्मिमते शक्तये नमः, पादयोः। ॐ तत्सवितुरित्यादिगायत्रीकीलकाय नमः नाभौ।

करन्यास

ॐ रश्मिमते अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ समुद्यते तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ देवासुरनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ विवस्वते अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ भास्कराय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ भुवनेश्वराय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि अंगन्यास

ॐ रश्मिमते हृदयाय नमः। ॐ समुद्यते शिरसे स्वाहा। ॐ देवासुरनमस्कृताय शिखायै वषट्।

ॐ विवस्वते कवचाय हुम्। ॐ भास्कराय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ भुवनेश्वराय अस्त्राय फट्।

इस प्रकार न्यास करके निम्नांकित मंत्र से भगवान सूर्य का ध्यान एवं नमस्कार करना चाहिए-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

आदित्यहृदय स्तोत्र

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् ।
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥1॥
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् ।
उपगम्याब्रवीद् राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥2॥

उधर श्री रामचन्द्रजी युद्ध से थककर चिन्ता करते हुए रणभूमि में खड़े थे। इतने में रावण भी युद्ध के लिए उनके सामने उपस्थित हो गया। यह देख भगवान अगस्त्य मुनि, जो देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिए आये थे, श्रीराम के पास जाकर बोले।

राम राम महाबाहो श्रृणु गुह्यं सनातनम् ।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे ॥3॥

'सबके हृदय में रमण करने वाले महाबाहो राम ! यह सनातन गोपनीय स्तोत्र सुनो। वत्स ! इसके जप से तुम युद्ध में अपने समस्त शत्रुओं पर विजय पा जाओगे।'

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥4॥
सर्वमंगलमागल्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥5॥

'इस गोपनीय स्तोत्र का नाम है 'आदित्यहृदय'। यह परम पवित्र और सम्पूर्ण शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसके जप से सदा विजय की प्राप्ति होती है। यह नित्य अक्ष्य और परम कल्याणमय स्तोत्र है। सम्पूर्ण मंगलों का भी मंगल है। इससे सब पापों का नाश हो जाता है। यह चिन्ता और शोक को मिटाने तथा आयु को बढ़ाने वाला उत्तम साधन है।'

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् ।
पुजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥6॥

'भगवान सूर्य अपनी अनन्त किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्) हैं। ये नित्य उदय होने वाले (समुद्यन्), देवता और असुरों से नमस्कृत, विवस्वान् नाम से प्रसिद्ध, प्रभा का विस्तार करने वाले (भास्कर) और संसार के स्वामी (भुवनेश्वर) हैं। तुम इनका (रश्मिमते नमः, समुद्यते नमः, देवासुरनमस्कताय नमः, विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, भुवनेश्वराय नमः इन नाम मंत्रों के द्वारा) पूजन करो।'

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावन: ।
एष देवासुरगणांल्लोकान् पाति गभस्तिभि: ॥7॥

'सम्पूर्ण देवता इन्हीं के स्वरूप हैं। ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत को सत्ता एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं। ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवता और असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं।'

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिव: स्कन्द: प्रजापति: । महेन्द्रो धनद: कालो यम: सोमो ह्यापां पतिः ॥8॥

पितरो वसव: साध्या अश्विनौ मरुतो मनु: । वायुर्वहिन: प्रजा प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकर: ॥9॥

'ये ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, प्रजापति, इन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरूण, पितर, वसु, साध्य, अश्विनीकुमार, मरुदगण, मनु, वायु, अग्नि, प्रजा, प्राण, ऋतुओं को प्रकट करने वाले तथा प्रभा के पुंज हैं।'

आदित्य: सविता सूर्य: खग: पूषा गभस्तिमान् ।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकर: ॥10॥
हरिदश्व: सहस्त्रार्चि: सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ।
तिमिरोन्मथन: शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान् ॥11॥
हिरण्यगर्भ: शिशिरस्तपनोऽहस्करो रवि: ।
अग्निगर्भोऽदिते: पुत्रः शंखः शिशिरनाशन: ॥12॥
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजु:सामपारग: ।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः ॥13॥
आतपी मण्डली मृत्यु: पिगंल: सर्वतापन:।
कविर्विश्वो महातेजा: रक्त:सर्वभवोद् भव: ॥14॥

नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावन: ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तु ते ॥15॥

'इन्हीं के नाम आदित्य (अदितिपुत्र), सविता (जगत को उत्पन्न करने वाले), सूर्य (सर्वव्यापक), खग (आकाश में विचरने वाले), पूषा (पोषण करने वाले), गभस्तिमान् (प्रकाशमान), सुर्वणसदृश, भानु (प्रकाशक), हिरण्यरेता (ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बीज), दिवाकर (रात्रि का अन्धकार दूर करके दिन का प्रकाश फैलाने वाले), हरिदश्व (दिशाओं में व्यापक अथवा हरे रंग के घोड़े वाले), सहस्रार्चि (हजारों किरणों से सुशोभित), तिमिरोन्मथन (अन्धकार का नाश करने वाले), शम्भू (कल्याण के उदगमस्थान), त्वष्टा (भक्तों का दुःख दूर करने अथवा जगत का संहार करने वाले), अंशुमान (किरण धारण करने वाले), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शिशिर (स्वभाव से ही सुख देने वाले), तपन (गर्मी पैदा करने वाले), अहरकर (दिनकर), रवि (सबकी स्तुति के पात्र), अग्निगर्भ (अग्नि को गर्भ में धारण करने वाले), अदितिपुत्र, शंख (आनन्दस्वरूप एवं व्यापक), शिशिरनाशन (शीत का नाश करने वाले), व्योमनाथ (आकाश के स्वामी), तमोभेदी (अन्धकार को नष्ट करने वाले), ऋग, यजुः और सामवेद के पारगामी, घनवृष्टि (घनी वृष्टि के कारण), अपां मित्र (जल को उत्पन्न करने वाले), विन्ध्यीथीप्लवंगम (आकाश में तीव्रवेग से चलने वाले), आतपी (घाम उत्पन्न करने वाले), मण्डली (किरणसमूह को धारण करने वाले), मृत्यु (मौत के कारण), पिंगल (भूरे रंग वाले), सर्वतापन (सबको ताप देने वाले), कवि (त्रिकालदर्शी), विश्व (सर्वस्वरूप), महातेजस्वी, रक्त (लाल रंगवाले), सर्वभवोदभव (सबकी उत्पत्ति के कारण), नक्षत्र, ग्रह और तारों के स्वामी, विश्वभावन (जगत की रक्षा करने वाले), तेजस्वियों में भी अति तेजस्वी तथा द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों में अभिव्यक्त) हैं। (इन सभी नामों से प्रसिद्ध सूर्यदेव !) आपको नमस्कार है।'

नम: पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नम: ।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नम: ॥16॥

'पूर्वगिरी उदयाचल तथा पश्चिमगिरि अस्ताचल के रूप में आपको नमस्कार है। ज्योतिर्गणों (ग्रहों और तारों) के स्वामी तथा दिन के अधिपति आपको प्रणाम है।'

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नम: ।
नमो नम: सहस्त्रांशो आदित्याय नमो नम: ॥17॥

'आप जय स्वरूप तथा विजय और कल्याण के दाता है। आपके रथ में हरे रंग के घोड़े जुते रहते हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। सहस्रों किरणों से सुशोभित भगवान सूर्य ! आपको बारंबार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र होने के कारण आदित्य नाम से प्रसिद्ध है, आपको नमस्कार है।'

नम उग्राय वीराय सारंगाय नमो नम: ।
नम: पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥18॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सुरायादित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नम: ॥19॥

'(परात्पर रूप में) आप ब्रह्मा, शिव और विष्णु के भी स्वामी हैं। सूर आपकी संज्ञा हैं, यह सूर्यमण्डल आपका ही तेज है, आप प्रकाश से परिपूर्ण हैं, सबको स्वाहा कर देने वाला अग्नि आपका ही स्वरूप है, आप रौद्ररूप धारण करने वाले हैं, आपको नमस्कार है।'

तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नम: ॥20॥

'आप अज्ञान और अन्धकार के नाशक, जड़ता एवं शीत के निवारक तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं, आपका स्वरूप अप्रमेय है। आप कृतघ्नों का नाश करने वाले, सम्पूर्ण ज्योतियों के स्वामी और देवस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है।'

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥21॥

'आपकी प्रभा तपाये हुए सुवर्ण के समान है, आप हरि (अज्ञान का हरण करने वाले) और विश्वकर्मा (संसार की सृष्टि करने वाले) हैं, तम के नाशक, प्रकाशस्वरूप और जगत के साक्षी हैं, आपको नमस्कार है।'

नाशयत्येष वै भूतं तमेष सृजति प्रभु: ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभि: ॥22॥

'रघुनन्दन ! ये भगवान सूर्य ही सम्पूर्ण भूतों का संहार, सृष्टि और पालन करते हैं। ये ही अपनी किरणों से गर्मी पहुँचाते और वर्षा करते हैं।'

एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठित: ।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥23॥

'ये सब भूतों में अन्तर्यामीरूप से स्थित होकर उनके सो जाने पर भी जागते रहते हैं। ये ही अग्निहोत्र तथा अग्निहोत्री पुरुषों को मिलने वाले फल हैं।'

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतुनां फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमं प्रभु: ॥24॥

'(यज्ञ में भाग ग्रहण करने वाले) देवता, यज्ञ और यज्ञों के फल भी ये ही हैं। सम्पूर्ण लोकों में जितनी क्रियाएँ होती हैं, उन सबका फल देने में ये ही पूर्ण समर्थ हैं।'

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुष: कश्चिन्नावसीदति राघव ॥25॥

'राघव ! विपत्ति में, कष्ट में, दुर्गम मार्ग में तथा और किसी भय के अवसर पर जो कोई पुरुष इन सूर्यदेव का कीर्तन करता है, उसे दुःख नहीं भोगना पड़ता।'

पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्।

एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि ॥26॥

'इसलिए तुम एकाग्रचित होकर इन देवाधिदेव जगदीश्वर की पूजा करो। इस आदित्य हृदय का तीन बार जप करने से तुम युद्ध में विजय पाओगे।'

अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि ।
एवमुक्ता ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥27॥

'महाबाहो ! तुम इसी क्षण रावण का वध कर सकोगे।' यह कहकर अगस्त्य जी जैसे आये थे, उसी प्रकार चले गये।

एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत् तदा ॥
धारयामास सुप्रीतो राघव प्रयतात्मवान् ॥28॥
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् ।
त्रिराचम्य शूचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥29॥
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागतम् ।
सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत् ॥30॥

उनका उपदेश सुनकर महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी का शोक दूर हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर शुद्धचित्त से आदित्यहृदय को धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान सूर्य की ओर देखते हुए इसका तीन बार जप किया। इससे उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। फिर परम पराक्रमी रघुनाथजी ने धनुष उठाकर रावण की ओर देखा और उत्साहपूर्वक विजय पाने के लिए वे आगे बढ़े। उन्होंने पूरा प्रयत्न करके रावण के वध का निश्चय किया।

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमना: परमं प्रहृष्यमाण: ।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥31॥

उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुए भगवान सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी की ओर देखा और निशाचराज रावण के विनाश का समय निकट जानकर हर्षपूर्वक कहा 'रघुनन्दन ! अब जल्दी करो'।

इति श्रीवाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डे अगस्त्यप्रोक्तमादित्यहृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

इस स्तोत्र के नित्य पाठ से शत्रुओं के मध्य व वाद-विवाद में विजेता प्राप्त होती है ऐसी शास्त्रीय मान्यता है ।

1.6 सूर्य अथर्वशीर्ष स्तोत्र

सूर्य अथर्वशीर्ष एक पवित्र स्तोत्र है जो सूर्य देव की उपासना के लिए है और इसे प्रतिदिन जपने से कई लाभ मिलते हैं, जैसे असाध्य रोगों से मुक्ति, धन और यश की प्राप्ति। इसमें ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छंद है, और सूर्य देवता की शक्ति का वर्णन है।

षटस्वरारुढ बीजेन षडंगं रक्तांबुजसंस्थं

सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं

चतुर्भुजं पद्मद्वयाभय वरदहस्तं

कालचक्र प्रणेतारं च श्रीसूर्यनारायणं !!

य एवं वेद स वै ब्राह्मण: !

ॐ भू: ॐ भुव: ॐ स्व: ॐ मह: ॐ जन:

ॐ तप: ॐ सत्यं तत्सवितुर वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात्

परोरजसे सावदोम ॐ आपो ज्योती रसोमृतं ब्रह्म भूर्भव: स्वरोम !!

सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषुश्च !

सूर्याद्वैखल्विमानि भूतानि जायंते !

सूर्याद्यज्ञा: पर्जन्योऽन्नमात्मा !

नमस्ते आदित्याय त्वमेव केवलं कर्तासि !

त्वमेव प्रत्यक्षं विष्णुरसि !

त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि !

त्वमेव प्रत्यक्षं रुद्रोऽसि !

त्वमेव प्रत्यक्षं ऋगसि !

त्वमेव प्रत्यक्षं यजुरसि !

त्वमेव प्रत्यक्षं सामासि !

त्वमेव प्रत्यक्षं अथर्वसि !

त्वमेव सर्वं छंदोसि !

आदित्याद वायुर्जायते !

आदित्याद भूमिर्जायते !

आदित्याद आपोजायते !

आदित्याद ज्योतिर्जायते !

आदित्याद व्योम दिशो जायंते !

आदित्याद वेदा जायंते !

आदित्याद देवा जायंते !

आदित्यो वा एष एतन मंडलंपति !

असावादित्यो ब्रह्म !

आदित्यो अंत:करण मनोबुद्धि चित्त अहंकारा: !

आदित्यो वै व्यान समानोदानापान प्राणा: !

आदित्यो वै श्रोत्र त्वक चक्षु रसनानासा: !

आदित्यो वै वाक पाणि पाद उपस्थ पायूनि !

आदित्यो वै शब्द स्पर्श रूप रस गंधा: !

आदित्यो वै वचना दान गमनानंद विसर्गा:!

आनंदमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय आदित्य: !

नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि भ्राजिष्णवे विश्वहेतवे नम: !

सूर्योद्वे भूतानि सूर्येण पालितानि तु !

सूर्य लयं प्रानुवंति य सूर्य: सोहमेव च !

चक्षुर्नो देव: सविता !

चक्षुर्न उत पर्वत: !

चक्षुर्धाता दधातु न: !

आदित्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि तन्न: सूर्य: प्रचोदयात् !

सविता पश्चात्तात !

सविता पुरस्तात !

सविता उत्तरात्तात !

सविता धरात्तात !

सविता न: सुवतु सर्वतातिम !

सवितानोरासतांधीर्घमायु: !

ॐ इति एकाक्षरं ब्रह्म घृणिरिति द्वे अक्षरे

सूर्य इति अक्षर द्वयं ! आदित्य इति !

त्रीणि अक्षराणि एतद द्वै सूर्यास्य अष्टाक्षरमनुम " ॐ घृणि: सूर्य आदित्य: " इति मंत्र: !

य: सदाहर हर्जषति !

सो अब्रह्मण्यो ब्राह्मणो भवति !

सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधि भयात प्रमुच्यते !

अलक्ष्मीर्नश्यति अभक्ष्य भक्षणात पूतो भवति !

अपेयपानात पूतो भवति !

अगम्या गमनात पूतो भवति !

व्रात्य संभाषणात पूतो भवति !

मध्यान्हे सूर्याभिमुख: पठेत सद्य: पंचमहापापात प्रमुच्यते !

सैषा सावित्री विद्या न कस्यचिद प्रशंसेत !

एतन्महाभाग: प्रात: पठति स भाग्यवान जायते !

पशून विदति वेदार्थं लभते !

त्रिकालं जप्त्वा क्रतु शतफलं प्राप्नोति !

हस्तादित्ये जपति स महामृत्युं तरति !

य एवं वेद !

! इति सूर्याथर्वशीर्षम !

1.7 चक्षु उपनिषद पाठ

चक्षु उपनिषद पाठ में मुख्य रूप से सूर्य देव से नेत्रों की रक्षा और रोग मुक्ति की प्रार्थना की गई है। इसमें विनियोग, चाक्षुषी मंत्र और सूर्य देव से संबंधित कई अन्य मंत्र शामिल हैं, जो आँखों के रोगों को दूर करने और दृष्टि को तेज करने में सहायक माने जाते हैं।

विनियोग

- **ॐ अस्याश्चाक्षुषीविद्याया अहिर्बुध्न्य ऋषिः, गायत्री छन्दः, सूर्यो देवता, चक्षुरोग निवृत्तये जपे विनियोगः।**

चाक्षुषी मंत्र

- **ॐ चक्षुः चक्षुः चक्षुः तेजः स्थिरो भव। मां पाहि पाहि। त्वरितं चक्षुरोगान् शमय शमय। मम जातरूपं तेजो दर्शय दर्शय। यथाऽहं अन्धो न स्यां तथा कल्पय कल्पय। कल्याणं कुरु कुरु। यानि मम पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुः प्रतिरोधकदुष्कृतानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय।**

सूर्य देव को नमस्कार

- **ॐ नमः चक्षुस्तेजोदात्रे दिव्याय भास्कराय। ॐ नमः करुणाकरायामृताय। ॐनमः सूर्याय। ॐ नमो भगवते सूर्यायाक्षितेजसे नमः।**
- **ॐ खेचराय नमः। महते नमः। रजसे नमः। तमसे नमः।**

उपसंहार मंत्र

- **असतो मा सद्मय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय।**
- **उष्णो भगवाञ्छचिरूपः। हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः।**

1.8 ।। सूर्य स्तुति ।।

जो भी साधक हर रोज उगते सूर्य के सामने बैठकर भगवान सूर्य की इस स्तुति का पाठ अर्थ सहित करता है, भगवान श्री सूर्य नारायण की कृपा से उसकी सभी इच्छाएं पूरी हो जाती है।

श्रणुष्व मुनिशार्दूल सूर्यस्य कवचं शुभम्।

शरीरारोग्दं दिव्यं सव सौभाग्य दायकम्।।

अर्थात, यह सूर्य कवच शरीर को आरोग्य देने वाला है तथा संपूर्ण दिव्य सौभाग्य को देने वाला है।

देदीप्यमान मुकुटं स्फुरन्मकर कुण्डलम।

ध्यात्वा सहस्त्रं किरणं स्तोत्र मेततु दीरयेत्।।

अर्थात, चमकते हुए मुकुट वाले डोलते हुए मकराकृत कुंडल वाले हजार किरण (सूर्य) को ध्यान करके यह स्तोत्र प्रारंभ करें।

शिरों में भास्कर: पातु ललाट मेडमित दुतिः।

नेत्रे दिनमणि: पातु श्रवणे वासरेश्वर:।।

अर्थात, मेरे सिर की रक्षा भास्कर करें, अपरिमित कांति वाले ललाट की रक्षा करें। नेत्र (आंखों) की रक्षा दिनमणि करें तथा कान की रक्षा दिन के ईश्वर करें।

घ्राणं धर्म धृणि: पातु वदनं वेद वाहन:।

जिव्हां में मानद: पातु कण्ठं में सुर वन्दित:।।

अर्थात, मेरी नाक की रक्षा धर्मघृणि, मुख की रक्षा देववंदित, जिव्हा की रक्षा मानद् तथा कंठ की रक्षा देव वंदित करें।

सूर्य रक्षात्मकं स्तोत्रं लिखित्वा भूर्ज पत्रके।

दधाति य: करे तस्य वशगा: सर्व सिद्धय:।।

अर्थात, सूर्य रक्षात्मक इस स्तोत्र को भोजपत्र में लिखकर जो हाथ में धारण करता है तो संपूर्ण सिद्धियां उसके वश में होती है।

सुस्नातो यो जपेत् सम्यग्योधिते स्वस्थ: मानस:।

सरोग मुक्तो दीर्घायु सुखं पुष्टिं च विदंति।।

अर्थात, स्नान करके जो कोई स्वच्छ चित्त से कवच पाठ करता है वह रोग से मुक्त हो जाता है, दीर्घायु होता है, सुख तथा यश प्राप्त होता है।

अगर इस स्तुति का पाठ कोई साधक लगातार एक माह तक करता है उसके जीवन में कभी समस्या रूपी अंधकार नहीं आ सकता।

।। ॐ नमो भगवते सूर्यदेवाय ।।

1.9 बोधात्मक प्रश्न

1. पञ्च देवों उपासना क्रम में कौन नहीं हैं।

क. भैरव ख. दुर्गा ग. शिव घ. गणेश

2. आयु आरोग्य के लिए किस देवता की स्तुति की जाती है।

क. सूर्य ख. गणेश ग. दुर्गा घ. विष्णु

3. सूर्य के अधिदेवता कौन हैं।

क. शिव ख. विष्णु ग. दुर्गा घ. कोई नहीं

4. ग्रहों का राजा किस देवता को कहा गया है।

क. सूर्य ख. गणेश ग. चन्द्र घ. गुरु

1.10 सारांश

सूर्य उपासना का भारतीय संस्कृति व सनातन धर्म में बड़ा महत्व है। सूर्य देव को **'जगत की आत्मा'** कहा गया है। यह प्रत्यक्ष देवता के रूप में माने जाते हैं। जिनके दर्शन हमें प्रतिदिन होते हैं। सूर्य उपासना करने वाला मनुष निरोगी तथा जयी – प्रतापी होता है। पुराणों – शास्त्रों में वर्णन आता है कि आरोग्य को प्रदान करने वाले देवता भगवान् सूर्य ही कहलाते हैं।

सूर्य उपासना के विविध लाभ-**शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य:** सूर्य की उपासना से कई रोगों से मुक्ति मिलती है और शरीर में ऊर्जा का संचार होता है। यह मानसिक शांति और जीवन में संतुलन बनाए रखने की प्रेरणा देता है। **तेज, बुद्धि और यश की प्राप्ति:** धार्मिक मान्यताओं के अनुसार, सूर्य की विधिवत पूजा से बुद्धि, साहस और प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है, जिससे जीवन में सफलता मिलती है। **सकारात्मक ऊर्जा:** सूर्य देव को अर्घ्य देना कृतज्ञता (gratitude) का प्रतीक है। यह हमें दिनभर की रोशनी, ऊर्जा और जीवन देने के लिए उनका धन्यवाद करने का अवसर देता है, जिससे जीवन में सकारात्मकता आती है। **समस्याओं का निवारण:** सूर्य उपासना सभी प्रकार की समस्याओं और कष्टों को दूर करने में सहायक मानी जाती है, जिससे जीवन खुशहाल बनता है, साथ ही ग्रहों की पीड़ा का हारण भी भगवान् सूर्य करते हैं ;क्यूंकि ये ग्रहों के राजा भी हैं। **आध्यात्मिक लाभ:** पंचदेवों (भगवान शिव, विष्णु, गणपति, शक्ति और सूर्य) की उपासना में सूर्य की आराधना से उपासक को सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों तरह के लाभ होते हैं। छठ पूजा और मकर संक्रांति जैसे पर्व पूरी तरह से सूर्य देव की उपासना को ही समर्पित हैं, जो भारतीय जनमानस में उनके गहरे महत्व को दर्शाते हैं।

1.11 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1.क 2.क 3.क 4. क

1.11 सहायक पाठ्यसामग्री

1. स्तोत्र रत्नावली – गीताप्रेश गौरखपुर
2.वृहत स्तोत्र रत्नावली- गीताप्रेश गौरखपुर
3. कर्मठगुरु
4.नित्यकर्म विधि
5. स्तोत्र संग्रह
6. विकिपीडिया

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.पञ्च देव उपासना से क्या अभिप्राय है विस्तार पूर्वक लिखिए।

2.सूर्य भगवान् के स्वरूप तथा उपसना का महत्व लिखिए।

3. श्री आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ लिखिते हुए महत्व का भी वर्णन कीजिए।

4. सूर्य उपसना के क्या लाभ हैं विस्तार पूर्वक लिखिए।

इकाई -2 गणेश स्तोत्र

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उदेश्य

2.3 विषय परिचय

2.4 पुराणों के अनुसार गणेश जी की उत्पत्ति की कथा

2.5 गणेश जी की पूजा का विधान

2 .6 गणपति स्तोत्र

2.6 .1 गणपति अथर्वशीर्ष

2.6.2 श्रीगणेशपञ्चरत्नम्

2 .7 बोधात्मक प्रश्न

2.8 गणेश नामाष्टक स्तोत्र

2 .9 श्री गणपति द्वादश नाम स्तोत्रम्

2.9.1 ॥ अथ श्री गणपति द्वादश नाम स्तोत्रम् ॥

2.10 सारांश

2.11 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

2.12 संदर्भित पाठ्य ग्रन्थ

2.13 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियों यह इकाई **BAKA (N) 350** के विविध स्तोत्र पाठ के द्वितीय खण्ड की द्वितीय इकाई है जिसका शीर्षक **"गणेश स्तोत्र है"** । इस इकाई के अन्तर्गत हम गणेश भगवान् से समन्धित समस्त स्तोत्रों के विषय में जानेंगे साथ ही उन स्तोत्रों का वैशिष्ट्य से भी परिचित हो सकेंगे। भारतीय सनातनी परम्परा में व पूजा में सर्व प्रथम गणेश जी की पूजा का विधान आता है , इस सन्दर्भ में अनेकों पौराणिक कथाएं भी हैं। गणेश जी की पूजा का महत्व जीवन से **बाधाओं (विघ्न) को दूर करने, बुद्धि, ज्ञान, सुख, समृद्धि और सौभाग्य** पाने के लिए है; उन्हें **प्रथम पूज्य** माना जाता है और किसी भी शुभ कार्य की शुरुआत उनकी पूजा से ही होती है, ताकि कार्य निर्विघ्न संपन्न हो और सकारात्मक ऊर्जा का संचार हो, साथ ही यह शिक्षा, करियर और ग्रहों के दोषों (जैसे राहु-केतु) को शांत करने में भी सहायक है। गणेश जी कि स्तुति और पूजा का विधान साथ ही कैसे उनकी स्तुतियों का गायन- वाचन करने से हम अपने मनोरथों की पूर्ति करेंगे इन सभी विषयों को विस्तार से हम इस इकाई के अन्तर्गत आध्ययन करेंगे।

2.2 उदेश्य

- ❖ इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप कर्मकाण्ड के सिद्धांत से परिचय हो सकेगा।
- ❖ गणेश जी की उपासना – साधना के महत्व का बोध होगा।
- ❖ सनातन धर्म में गणेश जी की प्रथम पूजा का क्या विधान है इससे परिचय हो सकेगा।
- ❖ गणेश की विविध स्तुतियों से परिचय हो सकेगा।
- ❖ गणेश की पूजा-अर्चना की विधि से परिचय हो सकेगा।

2.3 विषय परिचय

प्रिय शिक्षार्थियों जैसे कि हमने पूर्व की इकाई में पंचदेव पूजा के क्रम को जाना उसके अन्तर्गत पंचदेवों में सर्व प्रथम पूजित देवता विघ्नों का हार्न करने वाले अमंगलों को दूर करने वाले भगवान् गणेश जी हैं जिनको बुद्धि –विधाता भी कहा गया है। **गणेश** जिनको **गणपति** एवं **विनायक** भी कहते है, हिन्दू धर्म के सबसे लोकप्रिय तथा सर्वाधिक पूजे जाने वाले देवता है। वे

भगवान शिव तथा पार्वती के पुत्र है तथा कैलाशलोक उनका निवासस्थान है। गणेशजी विघ्नों के विनाशक तथा सुख, समृद्धि,बुद्धि,विद्या, सफलता,शांति और मोक्षदाता भगवान है।

भारतीय संस्कृति में हर कार्य गणेशपूजा के बिना अधूरा है। अभ्यास,व्यापार,विवाह,पूजा आदि सभी शुभ कार्यों तथा अवसरों के आरंभ में सर्वप्रथम गणेशजी की ही पूजा करने का प्रावधान होने के कारण उन्हें प्रथमपूज्य देवता भी कहते है। रिद्धि (बुद्धि) और सिद्धि गणेशजी की शाश्वत संगिनी हैं। गणेशजी के शुभ तथा लाभ नमक दो पुत्र भी है। इनकी उत्पत्ति के सन्दर्भ में अनेक पौराणिक कथाएं हैं। पुराणों में गणेश जी के विषय में विस्तार वर्णन आता है। विशेषत:गणेश पुराण , शिव महापुराण आदि में गणेश जी का विशद वर्णन आता है। गणेश जी की उत्पत्ति मुख्य रूप से माता पार्वती के शरीर के उबटन (मैल) से हुई, जब उन्होंने स्नान करते समय इस बालक में प्राण फूंक दिए और उसे द्वारपाल बनाया; बाद में भगवान शिव ने उनका सिर काट दिया और देवताओं के कहने पर हाथी के बच्चे का सिर जोड़कर उन्हें पुनर्जीवित किया, जिससे वे 'गजानन' (हाथी के मुख वाले) कहलाए और उन्हें गणों का अध्यक्ष (गणेश) बनाया गया।

2.4 पुराणों के अनुसार गणेश जी की उत्पत्ति की कथा

भारतीय मनीषा की चेतना ज्ञान राशि वेद और पुराण हैं । इन्हीं पुराणों में गणेश जी की प्राकट्य की गाथा विशद रूप से लिखी है आइये जानते हैं शिव महापुराण में किस प्रकार गणेश जी के जन्म का वृतान्त आता है - एक बार माता पार्वती ने अपने शरीर के उबटन (मैल) से एक पुतला बनाया और उसमें जान डालकर एक बालक को जन्म दिया, क्योंकि वे चाहती थीं कि उनका अपना पुत्र हो जो उनकी आज्ञा का पालन करे और उनकी रक्षा करे, खासकर जब वे स्नान कर रही हों, पार्वती जी ने इस बालक को द्वार पर खड़ा कर दिया और कहा कि जब तक वे स्नान न कर लें, तब तक किसी को अंदर न आने दें। जब भगवान शिव लौटे, तो बालक गणेश ने उन्हें अंदर जाने से रोक दिया. इससे क्रोधित होकर शिवजी ने उनका सिर धड़ से अलग कर दिया ।माता पार्वती जी के विलाप और देवताओं के कहने पर, शिवजी ने अपने गणों को उत्तर दिशा में जाकर किसी सोते हुए प्राणी का सिर लाने का आदेश दिया. एक हथिनी अपने बच्चे के साथ मिली, जिसका सिर काटकर बालक के धड़ से जोड़ दिया गया, जिससे गणेश जी का 'गजमुख' रूप प्रकट हुआ। शिवजी ने उन्हें अपने गणों का प्रमुख (गणेश) बनाया और वरदान दिया कि किसी भी कार्य की शुरुआत में उनकी पूजा पहले होगी, जिससे वे 'विघ्नहर्ता' (विघ्न हरने वाले) वे जीवन की सभी परेशानियों और बाधाओं को दूर करते हैं, जिससे कार्य सफल होते हैं। गणेश जी ज्ञान के देवता हैं; उनकी पूजा से एकाग्रता बढ़ती है, स्मरण

शक्ति तेज होती है और सही निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है, खासकर छात्रों के लिए लाभकारी।

2.5 गणेश जी की पूजा का विधान

भारतीय सनातनी परम्परा में किसी भी पूजा – पाठ अनुष्ठान का अपना वैशिष्ट्य व नियम है ।जैसे कि आप को विदित होंगा कि कर्मकाण्ड पद्वति में पूजन का सांगोपांग विधियों के द्वारा पूजा करने का विधान है जैसे षोडशोपचार पूजा व पंचोपचार विधि से पूजा किया जाता है । गणेश जी की पूजा विधि में स्नान के बाद स्वच्छ वस्त्र पहनकर, गणपति की मूर्ति स्थापित करना, कलश रखना, चंदन, फूल, दूर्वा और मोदक अर्पित करना, मंत्रों का जाप करना और आरती करना शामिल है, जिसमें 'ॐ गं गणपतये नमः' जैसे मंत्रों का जाप और दूर्वा (घास) चढ़ाना महत्वपूर्ण है, इसके बाद प्रसाद बांटकर पूजा संपन्न होती है । यह सामान्य विधि है । सुख-समृद्धि उनकी पूजा से धन, सुख और सौभाग्य आता है, और आर्थिक स्थिति मजबूत होती है । नकारात्मक विचारों को दूर करके सकारात्मक ऊर्जा और आत्मविश्वास बढ़ाते हैं । बुध, राहु और केतु जैसे ग्रहों के दोषों को शांत करने का प्रभावी उपाय है । गणेश जी की पूजा वैसे तो नित्य प्रतिदिन होती है परन्तु विशेषत: चतुर्थी तिथि बुधवार का दिन विशेष रूप से शुभ माना जाता है । सामान्य जीवन में किसी भी नए काम, व्यापार, शिक्षा या यात्रा से पहले उनकी पूजा आवश्यक है । दूर्वा (घास) और मोदक प्रिय हैं; दूर्वा को लपेटकर चढ़ाने से विशेष लाभ होता है, और घी-गुड़ का भोग धन संबंधी समस्याओं को दूर करता है । गणेश जी की पूजा सिर्फ एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि जीवन में आने वाली चुनौतियों का सामना करने और सफलता, ज्ञान, शांति और खुशहाली प्राप्त करने का एक आध्यात्मिक मार्ग है । हमारे सनातन धर्म में पंचदेव उपासना का बड़ा महत्व है ,वैदिक साहित्य एवं पुराणों में अनेक आख्यान मिलते हैं । पञ्च देव उपासना का अर्थ पाँच देवताओं की उपासना से है ।

2 .6 गणपति स्तोत्र

श्री संकटनाशन गणेश स्तोत्रम्

यह स्तोत्र भगवान गणेश के 12 नामों का वर्णन करता है और सभी बाधाओं को दूर करने वाला माना जाता है।

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।

भक्तावासं स्मेरनित्यम् आयःकामार्थसिद्धये॥1॥
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्॥2॥
लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टकम्॥3॥
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्॥4॥
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिं करं प्रभो॥5॥

2.6 .1 गणपति अथर्वशीर्ष

ॐ नमस्ते गणपतये।
त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि
त्वमेव केवलं कर्ताऽसि
त्वमेव केवलं धर्ताऽसि
त्वमेव केवलं हर्ताऽसि
त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्माऽसि
त्वं साक्षादात्माऽसि नित्यम्॥1॥
ऋतं वच्मि। सत्यं वच्मि ॥2॥
अव त्व मां। अव वक्तारं।
अव श्रोतारं। अव दातारं।
अव धातारं। अवानूचानमव शिष्यं।
अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्।
अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्।
अवचोर्ध्वात्तात्॥ अवाधरात्तात्॥
सर्वतो माम् पाहि-पाहि समंतात्॥3॥
त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः।
त्वमानंदमसयस्त्वं ब्रह्ममयः।
त्वं सच्चिदानंदाद्वितीयोऽसि।

त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्माऽसि।
त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि।।4।।
सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते।
सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति।
सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति।
सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति।
त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभ:।
त्वं चत्वारि वाक्पदानि।।5।।
त्वं गुणत्रयातीत:।
त्वं देहत्रयातीत:। त्वं कालत्रयातीत:।
त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यं।
त्वं शक्तित्रयात्मक:।
त्वां योगिनो ध्यायंति नित्यं।
त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं
त्वं रुद्रस्त्वं इंद्रस्त्वं अग्निस्त्वं
वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चंद्रमास्त्वं
ब्रह्मभूर्भुव:स्वरोम्।।6।।
गणादि पूर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनंतरं।
अनुस्वार: परतर:। अर्धेन्दुलसितं।
तारेण ऋद्धं। एतत्तव मनुस्वरूपं।
गकार: पूर्वरूपं। अकारो मध्यमरूपं।
अनुस्वारश्चान्त्यरूपं। बिन्दुरुत्तररूपं।
नाद: संधानं। स हितासंधि:
सैषा गणेश विद्या। गणकऋषि:
निचृद्गायत्रीच्छंद:। गणपतिर्देवता।
ॐ गं गणपतये नम:।।7।।
एकदंताय विद्‌महे।
वक्रतुण्डाय धीमहि।

तन्नो दंती प्रचोदयात्।।8।।

एकदंतं चतुर्हस्तं पाशमंकुशधारिणम्।

रदं च वरदं हस्तैर्विभ्राणं मूषकध्वजम्।

रक्तं लंबोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्।

रक्तगंधाऽनुलिप्तांगं रक्तपुष्पै: सुपुजितम्।।

भक्तानुकंपिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।

आविर्भूतं च सृष्टयादौ प्रकृते पुरुषात्परम्।

एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वर:।।9।।

नमो व्रातपतये। नमो गणपतये।

नम: प्रमथपतये।

नमस्तेऽस्तु लंबोदरायैकदंताय।

विघ्ननाशिने शिवसूताय।

श्रीवरदमूर्तये नमो नम:।।10।।

उक्त गणपति अथर्वशीर्ष का नित्य पाठ करने से वाक् सिद्धि और विद्या – बुद्धि तीक्ष्ण होती है।

2.6.2 श्रीगणेशपञ्चरत्नम्

मुदा करात्तमोदकं सदा विमुक्तिसाधकं

कलाधरावतंसकं विलासलोकरक्षकम्।

अनायकैकनायकं विनाशितेभदैत्यकं

नताशुभाशुनाशकं नमामि तं विनायकम्।।1।।

नतेतरातिभीकरं नवोदितार्कभास्वरं

नमत्सुरारिनिर्जरं नताधिकापदुद्धरम्।

सुरेश्वरं निधीश्वरं गजेश्वरं गणेश्वरं

महेश्वरं तमाश्रये परात्परं निरन्तरम्।।2।।

समस्तलोकशङ्करं निरस्तदैत्यकुंजरं

दरेतरोदरं वरं वरेभवक्त्रमक्षरम्।

कृपाकरं क्षमाकरं मुदाकरं यशस्करं

मनस्करं नमस्कृतां नमस्करोमि भास्वरम्॥3॥

अकिंचनार्तिमार्जनं चिरन्तनोक्तिभाजनं

पुरारिपूर्वनन्दनं सुरारिगर्वचर्वणम्।

प्रपंचनाशभीषणं धनंजयादिभूषणं

कपोलदानवारणं भजे पुराणवारणम्॥4॥

नितान्तकान्तदन्तकान्तिमन्तकान्तकात्मजं

अचिन्त्यरूपमन्तहीनमन्तरायकृन्तनम्।

हृदन्तरे निरन्तरं वसन्तमेव योगिनां

तमेकदन्तमेव तं विचिन्तयामि सन्ततम्॥5॥

महागणेशपंचरत्नमादरेण योऽन्वहं

प्रजल्पति प्रभातके हृदि स्मरन् गणेश्वरम्।

अरोगतां अदोषतां सुसाहितीं सुपुत्रतां

समीहितायुरष्टभूतिमभ्युपैति सोऽचिरात्॥6॥

2 .7 बोधात्मक प्रश्न

1.गणेश जी विघ्न हरण कहलाते हैं।

क. सत्य ख. असत्य

2. गणेश जी की उत्पत्ति माता पार्वती के मैल से हुई है।

क. सत्य ख. असत्य

3.गजानन नाम से भी पूजित हैं –

क. गणेश ख. कार्तिकेय ग. नरसिंह घ. कोई नहीं।

4.पुराणों में वर्णन है कि गणेश जी की पूजा सर्वप्रथम की जाती है।

क. सत्य ख. असत्य

2.8 गणेश नामाष्टक स्तोत्र

भगवान विष्णु द्वारा वर्णित श्रीगणेश का नामाष्टक स्तोत्र

ब्रह्मवैवर्तपुराण के गणपतिखण्ड (४४।८७-९८) में श्रीगणेश के नामाष्टक स्तोत्र का भगवान विष्णु ने पार्वतीजी को वर्णन किया है। यह स्तोत्र सभी स्तोत्रों का सारभूत और सम्पूर्ण विघ्नों का निवारण करने वाला है। भगवान विष्णु ने कहा–तुम्हारे पुत्र के गणेश, एकदन्त, हेरम्ब, विघ्ननायक, लम्बोदर, शूर्पकर्ण, गजवक्त्र और गुहाग्रज–ये आठ नाम हैं। इन आठ नामों के उच्चारण करने से व सुनने से सभी विघ्नों का नाश होता है ऐसी शास्त्रीय मान्यताएं है।

ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचक:।
तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम्।।

'ग' ज्ञानार्थवाचक और 'ण' निर्वाणवाचक है। इन दोनों (ग+ण) के जो ईश हैं; उन परमब्रह्म **'गणेश'** को मैं प्रणाम करता हूँ।

एकशब्द: प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचक:।
बलं प्रधानं सर्वास्मादेकदन्तं नमाम्यहम्।।

'एक' शब्द प्रधानार्थक है और 'दन्त' बलवाचक है; अत: जिनका बल सबसे बढ़ कर है; उन **'एकदन्त'** को मैं नमस्कार करता हूँ।

दीनार्थवाचको हेश्च रम्ब: पालकवाचक:।
दीनानां परिपालकं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्।।

'हे' दीनार्थवाचक और 'रम्ब' पालक का वाचक है; अत: दीनों का पालन करने वाले **'हेरम्ब'** को मैं शीश नवाता हूँ।

विपत्तिवाचको विघ्नो नायक: खण्डनार्थक:।
विपत्खण्डनकारकं नमामि विघ्ननायकम्।।

'विघ्न' विपत्तिवाचक और 'नायक' खण्डनार्थक है, इस प्रकार जो विपत्ति के विनाशक हैं; उन **'विघ्ननायक'** को मैं अभिवादन करता हूँ।

विष्णुदत्तैश्च नैवेद्यर्यस्य लम्बोदरं पुरा।
पित्रा दत्तैश्च विविधैर्वन्दै लम्बोदरं च तम्।।

पूर्वकाल में विष्णु द्वारा दिये गये नैवेद्यों तथा पिता द्वारा समर्पित अनेक प्रकार के मिष्टान्नों के खाने से जिनका उदर लम्बा हो गया है; उन **'लम्बोदर'** की मैं वन्दना करता हूँ।

शूर्पाकारौ च यत्कर्णौं विघ्नवारणकारणौ।
सम्पदौ ज्ञानरूपौ च शूर्पकर्णं नमाम्यहम्।।

जिनके कर्ण शूर्पाकार, विघ्न-निवारण करने वाले, सम्पदा के दाता और ज्ञानरूप हैं; उन **'शूर्पकर्ण'** को मैं सिर झुकाता हूँ।

विष्णुप्रसादपुष्पं च यन्मूर्ध्नि मुनिदत्तकम्।
तद् गजेन्द्रवक्त्रयुक्तं गजवक्त्रं नमाम्यहम्।।

जिनके मस्तक पर मुनि द्वारा दिया गया विष्णु का प्रसादरूप पुष्प वर्तमान है और जो गजेन्द्र के मुख से युक्त हैं; उन **'गजवक्त्र'** को मैं नमस्कार करता हूँ।

गुहस्याग्रे च जातोऽयमाविर्भूतो हरालये।
वन्देगुहाग्रजं देवं सर्वदेवाग्रपूजितम्।।

जो गुह (स्कन्द) से पहले जन्म लेकर शिव-भवन में आविर्भूत हुए हैं तथा समस्त देवगणों में जिनकी अग्रपूजा होती है; उन **'गुहाग्रज'** देव की मैं वन्दना करता हूँ।

एतन्नामाष्टकं दुर्गे नामभि: संयुतं परम्।
पुत्रस्य पश्य वेदे च तदा कोपं तथा कुरु।।

दुर्गे! अपने पुत्र के नामों से संयुक्त इस उत्तम नामाष्टक स्तोत्र को पहले वेद में देख लो, तब ऐसा क्रोध करो।

नामाष्टक स्तोत्र के पाठ का फल

एतन्नामाष्टकं स्तोत्रं नानार्थसंयुतं शुभम्।
त्रिसंध्यं य: पठेन्नित्यं स सुखी सर्वतो जयी।।
ततो विघ्ना: पलायन्ते वैनतेयाद् यथोरगा:।
गणेश्वरप्रसादेन महाज्ञानी भवेद् ध्रुवम्।।
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी विपुलां स्त्रियम्।
महाजड: कवीन्द्रश्च विद्यावांश्च भवेद् ध्रुवम्।।

विशेष : जो मनुष्य गणेश के नामों के अर्थ वाले इस स्तोत्र का तीनों संध्याओं के समय पाठ करता है, वह सुखी रहता है और उसे सभी कार्यों में विजय मिलती है। उसके पास से विघ्न उसी तरह से भाग जाते हैं जैसे गरुड़ के पास से सर्प। भगवान गणेश की कृपा से वह ज्ञानी हो जाता है। पुत्र की इच्छा रखने वाले को पुत्र, पत्नी की कामना रखने वाले को उत्तम पत्नी मिल जाती है। मूर्ख व्यक्ति भी विद्वान और श्रेष्ठ कवि बन जाता है । इस प्रकार पार्वतीजी को समझा-बुझाकर भगवान विष्णु ने परशुराम से कहा–'तुम सचमुच अपराधी हो, तुमने क्रोधवश शिवपुत्र गणेश का दांत तोड़कर अपराध किया है। अत: मेरे द्वारा बतलाये गए स्तोत्र से गणपति का स्तवन करो।'तभी अपराध क्षमा होगा । अत: इसका नित्य पाठ करने वाला व्यक्ति सर्वत्र विजयी होता है ।

2 .9 श्री गणपति द्वादश नाम स्तोत्रम्

सनातनी कर्मकाण्डीय पद्धति में किसी भी शुभ कार्यों की शुरुवात करते समय व पूजन आदि विधान में सर्वप्रथम भगवान् गणपति का आह्वाहन और स्थापन किया जाता है । ऐसी शास्त्रीय मत भी है, मान्यता है कि यदि पूर्ण एकाग्रचित्त से संकल्पयुक्त होकर गणपति की पूजा -अर्चना की जाए तो

उसके बहुत शुभ फल प्राप्त होते हैं। यदि अन्य स्तुतियाँ – स्तोत्रों का पाठ करने का समय ना हो तो भगवान गणेश जी को प्रणाम इन्हीं द्वादश नामों से किया जाता है। भगवान विघ्न बली महागणपति निश्चित ही अपने भक्तों पर प्रश्न होकर कृपा करते हैं।

2.9.1 ।। अथ श्री गणपति द्वादश नाम स्तोत्रम् ।।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।।

अर्थात: सुन्दर मुख वाले, एकदन्त, कपिल, गजकर्णक, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाश, विनायक, धूम्रकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन – गणपति के इन बारह नामों का विद्यारम्भकाल में, विवाह के समय, प्रवेश के समय, प्रस्थान के समय, संग्राम के समय अथवा संकट के समय जो व्यक्ति पठन अथवा श्रवण करता है उसके समक्ष कभी किसी प्रकार का विघ्न नहीं उपस्थित होता।

2.10 सारांश

उक्त इकाई में हमने गणेश जी के विविध स्तोत्र पाठों के विषय में जाना कि भगवान गणेश को प्रसन्न करने के लिए व अभीष्ट कामनाओं की सिद्धि के लिए कौन सा स्तोत्र पाठ करना चाहिए। हमारे वैदिक व पौराणिक मान्यतों में पंचदेव उपासना पद्वति में भगवान् गणेश विघ्नहर्ता- विद्या- बुद्धि और सर्वारंभ ,शुभारंभ के देवता माने जाते हैं। गणेश भगवान् की पूजा - उपासना से जीवन के सभी अमंगल बाधाएँ दूर होती हैं और कार्यों में सफलता प्राप्त होती है।इअलिए हमारे शास्त्राचार में गणपति को प्रथम पूजित करने के निर्देश मिलते हैं। भगवान् गणेश की प्रसन्नता के लिए विविध मन्त्रों , स्तोत्रों का वर्णन शास्त्रों में दियागया है , उनमे से प्रमुख स्तोत्रों का वर्णन हमने यहाँ उल्लेख किया। गणेश स्तोत्रों का पाठ मन को एकाग्र करता है और नकारात्मक विचारों को दूर करता है। गणेश स्तोत्र, संकटनाशन गणेश स्तोत्र, अथर्वशीर्ष आदि का नियमित पाठ बुद्धि, विवेक, आत्मविश्वास और स्मरण शक्ति को बढ़ाता है। स्तोत्र पाठ से मानसिक शांति, धैर्य और सकारात्मक

ऊर्जा का संचार होता है। इस प्रकार गणेश उपासना और स्तोत्र पाठ आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ सांसारिक जीवन में सुख, समृद्धि और सफलता प्रदान करने वाले माने जाते हैं।

2.11 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. क , 2. क, 3. क , 4. क,

2 .12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्तोत्र रत्नावली – गीताप्रेश गौरखपुर
2.वृहत स्तोत्र रत्नावली- गीताप्रेश गौरखपुर
3. कर्मठगुरु
4.नित्यकर्म विधि
5. स्तोत्र संग्रह
6. विकिपीडिया
7. गणेश पुराण
8. स्तुति संचय
9.कर्मठगुरु

2.13 निबन्धातामक प्रश्न

1. गणेश जी की पूजा सर्व प्रथम की जाती है इस पर शास्त्रीय कारण क्या है उल्लेख कीजिए।

2. गणेश जी के अथर्वशीर्ष पाठ को विधि सहित उल्लेख कीजिए साथ में पाठ फल क्या है बतायें।

3. गणेश जी की उत्पत्ति के विषय में विस्तार पूर्वक लिखिए।

4. `सनातनी परम्परा में पञ्च देव उपासना के महत्व को विस्तारपूर्वक लिखिए ।

इकाई - 3 नवग्रह

इकाई प्रारूप

3.1 प्रस्तावना
3.2 उदेश्य
3.3 विषय परिचय
3.4 नवग्रह स्तोत्र एवं नवग्रह पूजन का महत्व
3.4.1 नवग्रहों का परिचय
3.4.2 नवग्रहों का महत्व
3.4.3 नवग्रह स्तोत्र पाठ के लाभ
3.5 नवग्रह पूजन का महत्व
3.5.1नवग्रह पूजन का धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व
3.6 नवग्रह स्तोत्र पाठ
3.6.1 सूर्य स्तोत्र
3.6.2 चन्द्र स्तोत्र
3.6.3 भौम स्तोत्र
3.5.1 भौम स्तोत्र
3.5.2 बुध स्तोत्र
3.7 गुरु स्तोत्र
3.7.1 शुक्र स्तोत्र
3.7.2 बोधात्मक प्रश्न
3.8 शनि स्तोत्र
3.8.1 राहू स्तोत्र
3.8.2 केतू स्तोत्र
3.9 सारांश
3.10 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर
3.11 संदर्भित पाठ्य सामग्री
3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियों यह इकाई BAKA (N) 350 के विविध स्तोत्र पाठ के द्वितीय खण्ड से है जिसका शीर्षक **"नवग्रह स्तोत्र"** है। इस से पूर्व की इकाईयों के अन्तर्गत हमने सूर्य से समन्धित समस्त स्तोत्रों के विषय में जाना इसी क्रम में अब हम नवग्रहों के स्तोत्र पाठ को पड़ेगे। साथ ही नव ग्रहों के स्तोत्र पाठ से क्या लाभ होता है , तथा जीवन में जुड़ी किन-किन बाधाओं का शमन होता है आदि समस्त विषयों का विधिवत अध्ययन करेंगे। कर्मकाण्ड सनातन धर्म में वेदों से उत्पन्न हुआ है , जैसे कि आपको ज्ञात होगा कि – वेदों का लक्ष्य ईष्ट प्रप्ति और अनिष्ट का परिहार करना है ; इसी हेतु कर्मकाण्ड का प्रणयन हुआ। कर्मकाण्ड के अन्तर्गत हमारे समस्त आध्यात्मिक अभीष्ट प्राप्ति के साधन बताये गए हैं पोजा- अनुष्ठान – उपासना आदि के द्वारा इन सभी विषयों का भी यहाँ हम विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

भारतीय सनातनी परम्परा में पंचदेव उपासना का बड़ा महत्व है ,वैदिक साहित्य एवं पुराणों में अनेक आख्यान मिलते हैं। पंच देव उपासना का अर्थ पाँच देवताओं की उपासना से है।

3.2 उदेश्य

- ❖ इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप कर्मकाण्ड के सिद्धांत से परिचित हो सकेंगे
- ❖ स्तोत्र पाठ के महत्व से परिचय हो सकेंगे।
- ❖ साथ ही उन स्तोत्रों का वैशिष्ट्य से भी परिचित हो सकेंगे।
- ❖ भगवान् सूर्य की उपासना विधि से परिचय हो सकेगा।
- ❖ सूर्य के स्तोत्र पाठों के मत्व से परिचय होगा।
- ❖ स्तोत्र पाठ का क्या वैशिष्ट्य है इस इकाई में बोध होगा।

3.3 विषय परिचय

भारतीय वैदिक सनातन परंपरा में नवग्रहों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। "नव" का अर्थ है नौ और "ग्रह" का अर्थ है वह शक्ति जो मानव जीवन को प्रभावित करती है। वैदिक ज्योतिष के अनुसार ये नौ ग्रह—सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु—मनुष्य के जीवन, स्वभाव, स्वास्थ्य, शिक्षा, धन, विवाह और कर्मफल पर गहरा प्रभाव डालते हैं। इन्हीं ग्रहों की शांति और कृपा प्राप्त करने के लिए नवग्रह स्तोत्र का पाठ तथा नवग्रह पूजन किया जाता है। ज्योतिष शास्त्र में

यदि कोई ग्रह अशुभ या पापी है तथा उसके कारण जीवन में यदि समस्याएँ उत्पन्न हो रही हो तो शास्त्र का निर्देश ग्रहोपचार का मिलता है , जिसमें प्रत्येक ग्रह के मन्त्र स्तोत्र पाठ आदि करने से ग्रह पीड़ा का शमन होता है। साथ ही

नवग्रहों को केवल खगोलीय पिंड न मानकर **दैवीय शक्तियों का स्वरूप** माना गया है। नवग्रह पूजन से मनुष्य अपने कर्मों के प्रति जागरूक होता है और धर्म, संयम व सदाचार के मार्ग पर अग्रसर होता है। यह पूजन हमें यह सिखाता है कि ग्रह हमारे शत्रु नहीं, बल्कि कर्मों के अनुसार फल देने वाले मार्गदर्शक हैं।

3.4 नवग्रह स्तोत्र एवं नवग्रह पूजन का महत्व

भारतीय सनातन परंपरा में **नवग्रहों** का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। "नव" का अर्थ है नौ और "ग्रह" का अर्थ है वह शक्ति जो मानव जीवन को प्रभावित करती है। वैदिक ज्योतिष के अनुसार ये नौ ग्रह—**सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु**—मनुष्य के जीवन, स्वभाव, स्वास्थ्य, शिक्षा, धन, विवाह और कर्मफल पर गहरा प्रभाव डालते हैं। इन्हीं ग्रहों की शांति और कृपा प्राप्त करने के लिए **नवग्रह स्तोत्र का पाठ** तथा **नवग्रह पूजन** किया जाता है।

3.4.1 नवग्रहों का परिचय

1. **सूर्य** – आत्मा, तेज, स्वास्थ्य और नेतृत्व का कारक
2. **चंद्र** – मन, भावना और मानसिक शांति का प्रतीक
3. **मंगल** – साहस, पराक्रम और ऊर्जा का द्योतक
4. **बुध** – बुद्धि, वाणी और व्यापार का कारक
5. **गुरु (बृहस्पति)** – ज्ञान, धर्म और सद्बुद्धि का प्रतीक
6. **शुक्र** – प्रेम, सौंदर्य, कला और भोग-विलास का कारक
7. **शनि** – कर्म, अनुशासन, न्याय और संघर्ष का द्योतक
8. **राहु** – भ्रम, आकस्मिक परिवर्तन और सांसारिक आकर्षण
9. **केतु** – वैराग्य, आध्यात्म और मोक्ष का प्रतीक

3.4.2 नवग्रह स्तोत्र का महत्व

नवग्रह स्तोत्र नौ ग्रहों की स्तुति में रचित संस्कृत स्तोत्र है। इसका नियमित पाठ करने से ग्रहों के अशुभ प्रभाव शांत होते हैं और शुभ फल प्राप्त होते हैं।

3.4.3 नवग्रह स्तोत्र पाठ के लाभ:

- ग्रह दोषों में कमी आती है
- मानसिक शांति और आत्मबल बढ़ता है
- जीवन की बाधाएँ दूर होती हैं
- रोग, भय और तनाव में राहत मिलती है
- शिक्षा, करियर और पारिवारिक जीवन में संतुलन आता है

शास्त्रों के अनुसार श्रद्धा और नियमपूर्वक किया गया स्तोत्र पाठ व्यक्ति के **कर्मफल को सकारात्मक दिशा** प्रदान करता है।

3.5 नवग्रह पूजन का महत्व

नवग्रह पूजन एक विशेष धार्मिक अनुष्ठान है जिसमें सभी ग्रहों का विधिपूर्वक पूजन किया जाता है। यह पूजन विशेष रूप से जन्मकुंडली में ग्रहों की अशुभ स्थिति, साढ़ेसाती, कालसर्प दोष या अन्य ग्रह बाधाओं के निवारण हेतु किया जाता है।

3.5.1 नवग्रह पूजन के लाभ:

- ग्रहों की कृपा प्राप्त होती है
- जीवन में स्थिरता और सफलता आती है
- दुर्भाग्य और नकारात्मकता दूर होती है
- स्वास्थ्य, धन और समृद्धि में वृद्धि होती है
- आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है

3.5.1 नवग्रह पूजन का धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व

नवग्रहों को केवल खगोलीय पिंड न मानकर **दैवीय शक्तियों का स्वरूप** माना गया है। नवग्रह पूजन से मनुष्य अपने कर्मों के प्रति जागरूक होता है और धर्म, संयम व सदाचार के मार्ग पर अग्रसर होता है। यह पूजन हमें यह सिखाता है कि ग्रह हमारे शत्रु नहीं, बल्कि कर्मों के अनुसार फल देने वाले मार्गदर्शक हैं।

3.6 नवग्रह स्तोत्रम्

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥१॥

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥२॥

धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥३॥

प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥४॥

देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसन्निभम् ।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥५॥

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥६॥

नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥७॥

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥८॥

पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥९॥

3.6.1 सूर्य स्तोत्र

प्रात: स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यंरूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषी। सामानि यस्य किरणा: प्रभवादिहेतुं ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यचिन्त्यरूपम् ॥1॥

प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाऽमनोभि ब्रह्मेन्द्रपूर्वकसुरैनतमर्चितं च। वृष्टि प्रमोचन विनिग्रह हेतुभूतं त्रैलोक्य पालनपरंत्रिगुणात्मकं च॥2॥

प्रातर्भजामि सवितारमनन्तशक्तिं पापौघशत्रुभयरोगहरं परं चं। तं सर्वलोककनाकात्मककालमूर्ति गोकण्ठबंधन विमोचनमादिदेवम् ॥3॥

ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्ने:। आप्रा धावाप्रथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥4॥

सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मत्योन योषामभ्येति पश्वात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम् ॥5॥

आदित्यहृदय स्तोत्र'

विनियोग

ॐ अस्य आदित्य हृदयस्तोत्रस्यागस्त्यऋषिरनुष्टुपछन्दः, आदित्यहृदयभूतो

भगवान ब्रह्मा देवता निरस्ताशेषविघ्नतया ब्रह्मविद्यासिद्धौ सर्वत्र जयसिद्धौ च विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ अगस्त्यऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुपछन्दसे नमः, मुखे। आदित्यहृदयभूतब्रह्मदेवतायै नमः हृदि।

ॐ बीजाय नमः, गुह्ये। रश्मिमते शक्तये नमः, पादयो:। ॐ तत्सवितुरित्यादिगायत्रीकीलकाय नमः नाभौ।

करन्यास

ॐ रश्मिमते अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ समुद्यते तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ देवासुरनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ विवस्वते अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ भास्कराय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ भुवनेश्वराय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि अंगन्यास

ॐ रश्मिमते हृदयाय नमः। ॐ समुद्यते शिरसे स्वाहा। ॐ देवासुरनमस्कृताय शिखायै वषट्।

ॐ विवस्वते कवचाय हुम्। ॐ भास्कराय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ भुवनेश्वराय अस्त्राय फट्।

इस प्रकार न्यास करके निम्नांकित मंत्र से भगवान सूर्य का ध्यान एवं नमस्कार करना चाहिए-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

आदित्यहृदय स्तोत्र

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् ।
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥1॥
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् ।
उपगम्याब्रवीद् राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥2॥

उधर श्री रामचन्द्रजी युद्ध से थककर चिन्ता करते हुए रणभूमि में खड़े थे। इतने में रावण भी युद्ध के लिए उनके सामने उपस्थित हो गया। यह देख भगवान अगस्त्य मुनि, जो देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिए आये थे, श्रीराम के पास जाकर बोले।

राम राम महाबाहो श्रृणु गुह्यं सनातनम् ।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे ॥3॥

'सबके हृदय में रमण करने वाले महाबाहो राम ! यह सनातन गोपनीय स्तोत्र सुनो। वत्स ! इसके जप से तुम युद्ध में अपने समस्त शत्रुओं पर विजय पा जाओगे।'

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥4॥
सर्वमंगलमागल्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥5॥

'इस गोपनीय स्तोत्र का नाम है 'आदित्यहृदय'। यह परम पवित्र और सम्पूर्ण शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसके जप से सदा विजय की प्राप्ति होती है। यह नित्य अक्ष्य और परम कल्याणमय स्तोत्र है। सम्पूर्ण मंगलों का भी मंगल है। इससे सब पापों का नाश हो जाता है। यह चिन्ता और शोक को मिटाने तथा आयु को बढ़ाने वाला उत्तम साधन है।'

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् ।
पुजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥6॥

'भगवान सूर्य अपनी अनन्त किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्) हैं। ये नित्य उदय होने वाले (समुद्यन्), देवता और असुरों से नमस्कृत, विवस्वान् नाम से प्रसिद्ध, प्रभा का विस्तार करने वाले (भास्कर)

और संसार के स्वामी (भुवनेश्वर) हैं। तुम इनका (रश्मिमते नमः, समुद्यते नमः, देवासुरनमस्कताय नमः, विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, भुवनेश्वराय नमः इन नाम मंत्रों के द्वारा) पूजन करो।'

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावन: ।
एष देवासुरगणांल्लोकान् पाति गभस्तिभि: ॥7॥

'सम्पूर्ण देवता इन्हीं के स्वरूप हैं। ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत को सत्ता एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं। ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवता और असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं।'

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिव: स्कन्द: प्रजापति: । महेन्द्रो धनद: कालो यम: सोमो ह्यापां पतिः ॥8॥

पितरो वसव: साध्या अश्विनौ मरुतो मनु: । वायुर्वहिन: प्रजा प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकर: ॥9॥

'ये ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, प्रजापति, इन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरूण, पितर, वसु, साध्य, अश्विनीकुमार, मरुदगण, मनु, वायु, अग्नि, प्रजा, प्राण, ऋतुओं को प्रकट करने वाले तथा प्रभा के पुंज हैं।'

आदित्य: सविता सूर्य: खग: पूषा गभस्तिमान् ।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकर: ॥10॥
हरिदश्व: सहस्त्रार्चि: सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ।
तिमिरोन्मथन: शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान् ॥11॥
हिरण्यगर्भ: शिशिरस्तपनोऽहस्करो रवि: ।
अग्निगर्भोऽदिते: पुत्रः शंखः शिशिरनाशन: ॥12॥
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजु:सामपारग: ।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः ॥13॥
आतपी मण्डली मृत्यु: पिगंल: सर्वतापन:।
कविर्विश्वो महातेजा: रक्त:सर्वभवोद् भव: ॥14॥
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावन: ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तु ते ॥15॥

'इन्हीं के नाम आदित्य (अदितिपुत्र), सविता (जगत को उत्पन्न करने वाले), सूर्य (सर्वव्यापक), खग (आकाश में विचरने वाले), पूषा (पोषण करने वाले), गभस्तिमान् (प्रकाशमान), सुर्वणसदृश, भानु (प्रकाशक), हिरण्यरेता (ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बीज), दिवाकर (रात्रि का अन्धकार दूर करके दिन का प्रकाश फैलाने वाले), हरिदश्व (दिशाओं में व्यापक अथवा हरे रंग के घोड़े वाले), सहस्रार्चि (हजारों किरणों से सुशोभित), तिमिरोन्मथन (अन्धकार का नाश करने वाले), शम्भू (कल्याण के उदगमस्थान), त्वष्टा (भक्तों का दुःख दूर करने अथवा जगत का संहार करने वाले), अंशुमान (किरण धारण करने वाले), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शिशिर (स्वभाव से ही सुख देने वाले), तपन (गर्मी पैदा करने

वाले), अहरकर (दिनकर), रवि (सबकी स्तुति के पात्र), अग्निगर्भ (अग्नि को गर्भ में धारण करने वाले), अदितिपुत्र, शंख (आनन्दस्वरूप एवं व्यापक), शिशिरनाशन (शीत का नाश करने वाले), व्योमनाथ (आकाश के स्वामी), तमोभेदी (अन्धकार को नष्ट करने वाले), ऋग, यजुः और सामवेद के पारगामी, घनवृष्टि (घनी वृष्टि के कारण), अपां मित्र (जल को उत्पन्न करने वाले), विन्ध्यीथीप्लवंगम (आकाश में तीव्रवेग से चलने वाले), आतपी (घाम उत्पन्न करने वाले), मण्डली (किरणसमूह को धारण करने वाले), मृत्यु (मौत के कारण), पिंगल (भूरे रंग वाले), सर्वतापन (सबको ताप देने वाले), कवि (त्रिकालदर्शी), विश्व (सर्वस्वरूप), महातेजस्वी, रक्त (लाल रंगवाले), सर्वभवोदभव (सबकी उत्पत्ति के कारण), नक्षत्र, ग्रह और तारों के स्वामी, विश्वभावन (जगत की रक्षा करने वाले), तेजस्वियों में भी अति तेजस्वी तथा द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों में अभिव्यक्त) हैं। (इन सभी नामों से प्रसिद्ध सूर्यदेव !) आपको नमस्कार है।'

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः ।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥16॥

'पूर्वगिरी उदयाचल तथा पश्चिमगिरि अस्ताचल के रूप में आपको नमस्कार है। ज्योतिर्गणों (ग्रहों और तारों) के स्वामी तथा दिन के अधिपति आपको प्रणाम है।'

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः ।
नमो नमः सहस्त्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥17॥

'आप जय स्वरूप तथा विजय और कल्याण के दाता है। आपके रथ में हरे रंग के घोड़े जुते रहते हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। सहस्रों किरणों से सुशोभित भगवान सूर्य ! आपको बारंबार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र होने के कारण आदित्य नाम से प्रसिद्ध है, आपको नमस्कार है।'

नम उग्राय वीराय सारंगाय नमो नमः ।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥18॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सुरायादित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥19॥

'(परात्पर रूप में) आप ब्रह्मा, शिव और विष्णु के भी स्वामी हैं। सूर आपकी संज्ञा हैं, यह सूर्यमण्डल आपका ही तेज है, आप प्रकाश से परिपूर्ण हैं, सबको स्वाहा कर देने वाला अग्नि आपका ही स्वरूप है, आप रौद्ररूप धारण करने वाले हैं, आपको नमस्कार है।'

तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥20॥

'आप अज्ञान और अन्धकार के नाशक, जड़ता एवं शीत के निवारक तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं, आपका स्वरूप अप्रमेय है। आप कृतघ्नों का नाश करने वाले, सम्पूर्ण ज्योतियों के स्वामी और देवस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है।'

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥21॥

'आपकी प्रभा तपाये हुए सुवर्ण के समान है, आप हरि (अज्ञान का हरण करने वाले) और विश्वकर्मा (संसार की सृष्टि करने वाले) हैं, तम के नाशक, प्रकाशस्वरूप और जगत के साक्षी हैं, आपको नमस्कार है।'

नाशयत्येष वै भूतं तमेष सृजति प्रभु: ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभि: ॥22॥

'रघुनन्दन ! ये भगवान सूर्य ही सम्पूर्ण भूतों का संहार, सृष्टि और पालन करते हैं। ये ही अपनी किरणों से गर्मी पहुँचाते और वर्षा करते हैं।'

एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठित: ।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥23॥

'ये सब भूतों में अन्तर्यामीरूप से स्थित होकर उनके सो जाने पर भी जागते रहते हैं। ये ही अग्निहोत्र तथा अग्निहोत्री पुरुषों को मिलने वाले फल हैं।'

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतुनां फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमं प्रभु: ॥24॥

'(यज्ञ में भाग ग्रहण करने वाले) देवता, यज्ञ और यज्ञों के फल भी ये ही हैं। सम्पूर्ण लोकों में जितनी क्रियाएँ होती हैं, उन सबका फल देने में ये ही पूर्ण समर्थ हैं।'

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुष: कश्चिन्नावसीदति राघव ॥25॥

'राघव ! विपत्ति में, कष्ट में, दुर्गम मार्ग में तथा और किसी भय के अवसर पर जो कोई पुरुष इन सूर्यदेव का कीर्तन करता है, उसे दुःख नहीं भोगना पड़ता।'

पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्।
एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि ॥26॥

'इसलिए तुम एकाग्रचित होकर इन देवाधिदेव जगदीश्वर की पूजा करो। इस आदित्य हृदय का तीन बार जप करने से तुम युद्ध में विजय पाओगे।'

अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि ।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥27॥

'महाबाहो ! तुम इसी क्षण रावण का वध कर सकोगे।' यह कहकर अगस्त्य जी जैसे आये थे, उसी प्रकार चले गये।

एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत् तदा ॥

धारयामास सुप्रीतो राघव प्रयतात्मवान् ॥28॥
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् ।
त्रिराचम्य शूचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥29॥
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागतम् ।
सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत् ॥30॥

उनका उपदेश सुनकर महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी का शोक दूर हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर शुद्धचित्त से आदित्यहृदय को धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान सूर्य की ओर देखते हुए इसका तीन बार जप किया। इससे उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। फिर परम पराक्रमी रघुनाथजी ने धनुष उठाकर रावण की ओर देखा और उत्साहपूर्वक विजय पाने के लिए वे आगे बढ़े। उन्होंने पूरा प्रयत्न करके रावण के वध का निश्चय किया।

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमना: परमं प्रहृष्यमाण: ।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥31॥

उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुए भगवान सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी की ओर देखा और निशाचराज रावण के विनाश का समय निकट जानकर हर्षपूर्वक कहा 'रघुनन्दन ! अब जल्दी करो'।

इति श्रीवाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डे अगस्त्यप्रोक्तमादित्यहृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

इस स्तोत्र के नित्य पाठ से शत्रुओं के मध्य व वाद-विवाद में विजेता प्राप्त होती है ऐसी शास्त्रीय मान्यता है

3.6.2 चन्द्र स्तोत्र

श्वेताम्बर: श्वेतवपु: किरीटी, श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहु: ।

चन्द्रो मृतात्मा वरद: शशांक:, श्रेयांसि मह्यं प्रददातु देव: ॥1॥

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम ।

नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम ॥2॥

क्षीरसिन्धुसमुत्पन्नो रोहिणी सहित: प्रभु: ।

हरस्य मुकुटावास: बालचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥3॥

सुधायया यत्किरणा: पोषयन्त्योषधीवनम ।

सर्वान्नरसहेतुं तं नमामि सिन्धुनन्दनम ॥4॥

राकेशं तारकेशं च रोहिणीप्रियसुन्दरम ।

ध्यायतां सर्वदोषघ्नं नमामीन्दुं मुहुर्मुहु: ॥5॥

चंद्र स्तोत्र के मुख्य श्लोक और अर्थ

- **श्वेताम्बर: श्वेतवपु: किरीटी... (श्लोक 1)**

अर्थ: जो श्वेत वस्त्र धारण किए हुए हैं, जिनका शरीर श्वेत है, किरीट (मुकुट) पहने हैं, जिनकी कांति श्वेत है, जो हाथ में दण्ड धारण किए हैं और दो भुजाओं वाले हैं, वे चंद्रदेव मेरे लिए शुभ करें।

- **दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्... (श्लोक 2)**

अर्थ: जो दही, शंख और बर्फ के समान श्वेत हैं, जो क्षीरसागर से उत्पन्न हुए हैं, उन चंद्रमा को, जो भगवान शिव के मुकुट के आभूषण हैं, मैं नमस्कार करता हूँ।

- **सुधामया यत्किरणा: पोषयन्त्योषधीवनम्... (श्लोक 4)**

अर्थ: जिनकी अमृतमयी किरणें औषधियों और वनस्पति का पोषण करती हैं, जो सभी अन्न के रस (पोषक तत्वों) के कारण हैं, उन समुद्रपुत्र (सिंधु-नंदन) चंद्रदेव को मैं नमन करता हूँ।

- **राकेशं तारकेशं च रोहिणीप्रियसुन्दरम्... (श्लोक 5)**

अर्थ: जो पूर्णिमा (राकेश), तारों के स्वामी (तारकेश) और रोहिणी के प्रिय व सुंदर हैं, उन सभी दोषों को हरने वाले चंद्रमा को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

लाभ और महत्व

- **मानसिक शांति:**

यह स्तोत्र मन को शांत करता है और मानसिक तनाव, चिंता, भय को दूर करता है।

- **ग्रह दोष निवारण:**

कुंडली में चंद्र दोष या अशुभ चंद्रमा के प्रभाव को कम करता है।

- **सफलता और समृद्धि:**

इसके पाठ से जीवन में सफलता, धन और सुख-समृद्धि आती है।

- **स्वास्थ्य:**

यह मन को एकाग्र करने और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है।

पाठ का तरीका

- सुबह स्नान के बाद, स्वच्छ वस्त्र पहनकर चंद्रदेव का ध्यान करते हुए इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।
- सोमवार का दिन चंद्रदेव की पूजा और पाठ के लिए विशेष माना जाता है।
- **3.6.3 भौम स्तोत्र**

मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः ।
स्थिरासनो महाकयः सर्वकर्मविरोधकः ॥1॥

लोहितो लोहिताक्षश्च सामगानां कृपाकरः ।
धरात्मजः कुजो भौमो भूतिदो भूमिनन्दनः॥2॥

अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः ।
वृष्टेः कर्ताऽपहर्ता च सर्वकामफलप्रदः॥3॥
एतानि कुजनामनि नित्यं यः श्रद्धया पठेत् ।
ऋणं न जायते तस्य धनं शीघ्रमवाप्नुयात् ॥4॥

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥5॥

स्तोत्रमङ्गारकस्यैतत्पठनीयं सदा नृभिः ।
न तेषां भौमजा पीडा स्वल्पाऽपि भवति क्वचित् ॥6॥

अङ्गारक महाभाग भगवन्भक्तवत्सल ।
त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु विनाशय ॥7॥

ऋणरोगादिदारिद्रयं ये चान्ये ह्यपमृत्यवः ।
भयक्लेशमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥8॥

अतिवक्त्र दुरारार्ध्य भोगमुक्त जितात्मनः ।
तुष्टो ददासि साम्राज्यं रुश्टो हरसि तत्क्शणात् ॥9॥

विरिंचिशक्रविष्णूनां मनुष्याणां तु का कथा ।
तेन त्वं सर्वसत्त्वेन ग्रहराजो महाबलः ॥10॥

पुत्रान्देहि धनं देहि त्वामस्मि शरणं गतः ।
ऋणदारिद्रयदुःखेन शत्रूणां च भयात्ततः ॥11॥

एभिर्द्वादशभिः श्लोकैर्यः स्तौति च धरासुतम् ।
महतिं श्रियमाप्नोति ह्यपरो धनदो युवा ॥12॥

॥इति श्री ऋणमोचक मङ्गलस्तोत्रम् सम्पूर्णम्॥

ऋणमोचक मंगल स्तोत्र का पाठ करने से मुख्य रूप से कर्ज और आर्थिक संकट से मुक्ति, धन-धान्य की वृद्धि, मानसिक शांति, साहस और आत्मविश्वास में बढ़ोतरी, तथा मंगल ग्रह के अशुभ प्रभावों से राहत मिलती है, जिससे जीवन में सुख-समृद्धि और सफलता प्राप्त होती है। यह स्तोत्र मंगल दोष को शांत करता है और व्यक्ति के जीवन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है।

3.6.4 बुध स्तोत्र

पीताम्बरः पीतवपु किरीटी, चतुर्भुजो देवदुःखापहर्ता।
धर्मस्य धृक सोमसुतः सदा मे, सिंहाधिरुढ़ो वरदो बुधश्च॥

प्रियंगुकनकश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम्।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं नमामि शशिनन्दनम्॥

सोमसुनुर्बुधश्चैव सौम्य: सौम्यगुणान्वित:।
सदा शान्त: सदा क्षेमो नमामि शशिनन्दनम्।।

उत्पातरूपी जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युति:।
सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां हरतु मे बुधम्।।

शिरीषपुष्पसंकाशं कपिलीशो युवा पुन:।
सोमपुत्रो बुधश्चैव सदा शान्तिं प्रयच्छतु।।

श्याम: शिरालश्च कलाविधिज्ञ: कौतूहली कोमलवाग्विलासी।
रजोधिको मध्यमरूपधृक स्यादाताम्रनेत्रो द्विजराजपुत्र:।।

अहो चन्द्रासुत श्रीमन् मागधर्मासमुद्भव:।
अत्रिगोत्रश्चतुर्बाहु: खड्गखेटकधारक:।।

गदाधरो नृसिंहस्थ: स्वर्णनाभसमन्वित:।
केतकीद्रुमपत्राभ: इन्द्रविष्णुप्रपूजित:।।

ज्ञेयो बुध: पण्डितश्च रोहिणेयश्च सोमज:।
कुमारो राजपुत्रश्च शैशवे शशिनन्दन:।।

गुरुपुत्रश्च तारेयो विबुधो बोधनस्तथा।
सौम्य: सौम्यगुणोपेतो रत्नदानफलप्रद:।।

एतानि बुधनामानि प्रात: काले पठेन्नर:।
बुद्धिर्विवृद्धितां याति बुधपीड़ा न जायते।।

।। इति बुध स्तोत्र संपूर्णम्।।

बुध स्तोत्र का नित्य पाठ करने से बुद्धि प्रबल होती है , विद्या प्राप्ति में आसानी रहती है , विद्यार्थियों को नियमित इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

3.7 गुरु स्तोत्र

पीताम्बर: पीतवपु: किरीटी,
चतुर्भुजो देवगुरु: प्रशान्त: ।
दधाति दण्डं च कमण्डलुं च,
तथाक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम ॥1॥

नम: सुरेन्द्रवन्द्याय देवाचार्याय ते नम: ।
नमस्त्वनन्तसामर्थ्यं देवासिद्धान्तपारग ॥2॥

सदानन्द नमस्तेस्तु नम: पीडाहराय च ।
नमो वाचस्पते तुभ्यं नमस्ते पीतवाससे ॥3॥

नमोऽद्वितीयरूपाय लम्बकूर्चाय ते नम: ।
नम: प्रहृष्टनेत्राय विप्राणां पतये नम: ॥4॥

नमो भार्गवशिष्याय विपन्नहितकारक: ।
नमस्ते सुरसैन्याय विपन्नत्राणहेतवे ॥5॥

विषमस्थस्तथा नृणां सर्वकष्टप्रणाशनम ।
प्रत्यहं तु पठेद्यो वै तस्य कामफलप्रदम ॥6॥
॥ इति मन्त्रमहार्णवे बृहस्पतिस्तोत्रम ॥

3.7.1 शुक्र स्तोत्र

शुक्र स्तोत्र शुक्र ग्रह की शांति और कृपा प्राप्त करने के लिए पढ़ा जाता है। शुक्र ग्रह को वैदिक ज्योतिष में सौंदर्य, धन, वैवाहिक सुख, कला, और समृद्धि का कारक माना गया है। यह स्तोत्र शुक्रदेव की स्तुति में लिखा गया है और इसे नियमित रूप से पढ़ने से शुक्र ग्रह की अनुकूलता प्राप्त होती है। शुक्र ग्रह की अनुकूलता प्राप्त करने के लिए यह स्तोत्र किया जाता है। शुक्र ग्रह जीवन में वैभव, भौतिक सुख, वैवाहिक सुख, कला, और प्रेम का कारक है। यदि शुक्र ग्रह अशुभ स्थिति में हो, तो इसका पाठ करने से उसके दोष शांत हो जाते हैं।

शुक्र स्तोत्र के लाभ:

1. धन और वैभव: इस स्तोत्र का पाठ करने से धन-वैभव में वृद्धि होती है।
2. वैवाहिक सुख: शुक्र ग्रह वैवाहिक जीवन का प्रतीक है, और इसका पाठ वैवाहिक समस्याओं को दूर करता है।
3. संतान सुख: संतान प्राप्ति की इच्छा रखने वालों को इसका पाठ लाभकारी होता है।
4. रोगों से मुक्ति: रोग और मानसिक समस्याओं से छुटकारा मिलता है।
5. कलात्मक उन्नति: यह कलाकारों और रचनात्मक व्यक्तियों के लिए बहुत उपयोगी है।
6. पापों से मुक्ति: यह स्तोत्र पापों का नाश करता है और आध्यात्मिक उन्नति प्रदान करता है।

शुक्र स्तोत्र

नमस्ते भार्गव श्रेष्ठ देव दानव पूजित।
वृष्टिरोधप्रकर्त्रे च वृष्टिकर्त्रे नमो नमः।।
अर्थ: हे भार्गव श्रेष्ठ शुक्रदेव, देवता और दानवों द्वारा पूजित! वर्षा को रोकने और कराने वाले, आपको प्रणाम।

देवयानीपितस्तुभ्यं वेदवेदांगपारगः।
परेण तपसा शुद्ध शंकरो लोकशंकरः।।
अर्थ: देवयानी के पिता और वेद-वेदांगों के ज्ञाता, आप महान तपस्वी और शुद्ध रूप हैं। आप शंकर (कल्याणकारी) हैं।

प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां तस्मै शुक्रात्मने नमः।
नमस्तस्मै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे।।
अर्थ: जिन्होंने जीवन विद्या प्राप्त की, उन भृगुपुत्र शुक्रदेव को नमन।

तारामण्डलमध्यस्थ स्वभासा भसिताम्बरः।
यस्योदयें जगत्सर्वं मंगलार्हं भवेदिह।।
अर्थ: जो तारामंडल के मध्य में स्थित हैं और अपनी चमक से जगत को प्रकाश देते हैं। आपके उदय से संसार शुभता को प्राप्त करता है।

अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मंगलरूपिणे।
त्रिपुरावासिनो दैत्यान शिवबाणप्रपीडितान।।
विद्यया जीवयच्छुक्रो नमस्ते भृगुनन्दन।।
अर्थ: जब आप अस्त होते हैं, तो अशुभता बढ़ती है। हे त्रिपुरावासी दैत्यों को जीवित करने वाले शुक्रदेव, आपको प्रणाम।

ययातिगुरवे तुभ्यं नमस्ते कविनन्दन।
बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः।।
अर्थ: हे ययाति के गुरु और कवियों के प्रिय शुक्रदेव, बलि को राज्य प्रदान करने वाले, आपको नमन।

श्री नवग्रह चालीसा
माँ लक्ष्मी जी आरती

भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्वं गीर्वाणवन्दितम।
जीवपुत्राय यो विद्यां प्रादात्तस्मै नमोनमः।।
अर्थ: हे भृगुनंदन, आपको नमस्कार। जिन्होंने जीवन विद्या सिखाई, उन्हें बारंबार प्रणाम।

नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय धीमहि।
नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने।।
अर्थ: शुक्र, जो काव्य के प्रतीक और कारण के स्वरूप हैं, उन्हें प्रणाम।

स्तवराजमिदं पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः।
यः पठेच्छुणुयाद वापि लभते वांछित फलम।।
अर्थ: यह स्तोत्र पुण्यदायक है। जो इसे पढ़ते या सुनते हैं, वे अपनी सभी इच्छाओं को पूर्ण करते हैं।

पुत्रकामो लभेत्पुत्रान श्रीकामो लभते श्रियम।
राज्यकामो लभेद्राज्यं स्त्रीकामः स्त्रियमुत्तमाम।।
अर्थ: जो संतान चाहते हैं, उन्हें संतान सुख मिलता है। जो धन और वैभव चाहते हैं, उन्हें संपत्ति प्राप्त होती है।

भृगुवारे प्रयत्नेन पठितव्यं सामहितैः।
अन्यवारे तु होरायां पूजयेद भृगुनन्दनम।।
अर्थ: इसे विशेष रूप से शुक्रवार को पढ़ना चाहिए। अन्य दिनों में भी भृगुनंदन की पूजा की जा सकती है।

रोगार्तो मुच्यते रोगाद भयार्तो मुच्यते भयात।
यद्यत्प्रार्थयते वस्तु तत्तत्प्राप्नोति सर्वदा।।
अर्थ: रोग से पीड़ित व्यक्ति रोगों से मुक्त हो जाता है। भय से परेशान व्यक्ति भयमुक्त हो जाता है। जो भी इसे श्रद्धा से पढ़ता है, उसे उसकी इच्छित वस्तु प्राप्त होती है।

प्रातः काले प्रकर्तव्या भृगुपूजा प्रयत्नतः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाच्छिवसन्निधिः।।
अर्थ: प्रातः काल में इस स्तोत्र का पाठ करें। इससे व्यक्ति पापों से मुक्त होकर शिव की कृपा प्राप्त करता है।

शुक्रवार को विशेष रूप से इसका पाठ करने से देवी-देवताओं की कृपा और शुक्र ग्रह की सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है ।

3.7.2 बोधात्मक प्रश्न

1. नव ग्रह से तात्पर्य है –

क. नौ ग्रहों से ,ख. किसी ग्रह विशेष , ग. देवताओं , घ. कोई नहीं

2. ग्रहों का राजा कहा गया है –

क. सूर्य , ख. चन्द्र , ग. गुरु , घ. कोई नहीं ।

3. ग्रहों की स्तुति होती है ।-

क. स्तोत्र पाठ से ख. मन्त्र से, ग. ध्यान से घ. कोई नहीं

4. स्तोत्र पाठ से निम्न लाभ होते हैं -

क. ग्रह शान्ति एवं ग्रह प्रसन्न , ख. ग्रह क्रूर , ग. ग्रह कमजोर घ. ग्रह प्रबल

3.8 शनि स्तोत्र

शनि स्तोत्र (विशेषकर दशरथ कृत शनि स्तोत्र) का पाठ करने से शनि देव प्रसन्न होते हैं और साढ़ेसाती, ढैय्या व शनि दोष से मुक्ति, संकटों का निवारण, कार्यों में आ रही बाधाओं का अंत, धन-समृद्धि की प्राप्ति, स्वास्थ्य लाभ और मानसिक शांति मिलती है, जिससे जीवन में संतुलन व स्थायित्व आता है।

शनि स्तोत्र के प्रमुख लाभ:

1. शनि दोष से राहत:

शनि की महादशा, साढ़ेसाती और ढैय्या के अशुभ प्रभावों को कम करता है।

2. संकटों का निवारण:

जीवन में आने वाले सभी कष्ट, बाधाएं और दुख दूर होते हैं।

3. कार्य सिद्धि:

रुके हुए काम पूरे होते हैं और बाधाएं हटती हैं।

4. धन-समृद्धि:

आर्थिक स्थिति में सुधार आता है और धन-संपत्ति की प्राप्ति होती है।

5. न्याय में सफलता:

कोर्ट-कचहरी या सरकारी मामलों में सफलता मिल सकती है।

6. स्वास्थ्य लाभ:

रोग और दरिद्रता का नाश होता है।

7. मानसिक शांति:

मन को शांति मिलती है और धैर्य व आत्मबल बढ़ता है।

8. ईश्वर की कृपा:

शनि देव की विशेष कृपा और आशीर्वाद प्राप्त होता है।

दशरथकृत शनि स्तोत्र

रोहिणीं भेदयित्वा तु न गन्तव्यं कदाचन् ।
सरितः सागरा यावद्यावच्चन्द्रार्कमेदिनी ॥

याचितं तु महासौरे ! नऽन्यमिच्छाम्यहं ।
एवमस्तुशनिप्रोक्तं वरलब्ध्वा तु शाश्वतम् ॥

प्राप्यैवं तु वरं राजा कृतकृत्योऽभवत्तदा ।
पुनरेवाऽब्रवीत्तुष्टो वरं वरम् सुव्रत ॥

दशरथकृत शनि स्तोत्र:
नम: कृष्णाय नीलाय शितिकण्ठ निभाय च ।
नम: कालाग्निरूपाय कृतान्ताय च वै नम: ॥1॥

नमो निर्मांस देहाय दीर्घश्मश्रुजटाय च ।
नमो विशालनेत्राय शुष्कोदर भयाकृते ॥2॥

नम: पुष्कलगात्राय स्थूलरोम्णेऽथ वै नम: ।
नमो दीर्घाय शुष्काय कालदंष्ट्र नमोऽस्तु ते ॥3॥

नमस्ते कोटराक्षाय दुर्नरीक्ष्याय वै नम: ।
नमो घोराय रौद्राय भीषणाय कपालिने ॥4॥

नमस्ते सर्वभक्षाय बलीमुख नमोऽस्तु ते ।
सूर्यपुत्र नमस्तेऽस्तु भास्करेऽभयदाय च ॥5॥

अधोदृष्टे: नमस्तेऽस्तु संवर्तक नमोऽस्तु ते ।
नमो मन्दगते तुभ्यं निस्त्रिंशाय नमोऽस्तुते ॥6॥

तपसा दग्ध-देहाय नित्यं योगरताय च ।
नमो नित्यं क्षुधार्ताय अतृप्ताय च वै नम: ॥7॥

ज्ञानचक्षुर्नमस्तेऽस्तु कश्यपात्मज-सूनवे ।
तुष्टो ददासि वै राज्यं रुष्टो हरसि तत्क्षणात् ॥8॥

देवासुरमनुष्याश्च सिद्ध-विद्याधरोरगा: ।
त्वया विलोकिता: सर्वे नाशं यान्ति समूलत: ॥9॥

प्रसाद कुरु मे सौरे ! वारदो भव भास्करे ।
एवं स्तुतस्तदा सौरिर्ग्रहराजो महाबल: ॥10॥

दशरथ उवाच:
प्रसन्नो यदि मे सौरे ! वरं देहि ममेप्सितम् ।
अद्य प्रभृति-पिंगाक्ष ! पीडा देया न कस्यचित् ॥

3.8.1 राहू स्तोत्र

राहु स्तोत्र के पाठ से राहु ग्रह के अशुभ प्रभावों से रक्षा होती है, जिससे मानसिक शांति, भ्रम और भय से मुक्ति मिलती है, शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है, और करियर व धन संबंधी बाधाएं दूर होती हैं, खासकर कालसर्प दोष और राहु दशा में यह विशेष रूप से लाभकारी माना जाता है, जो आत्मविश्वास और आध्यात्मिक उन्नति भी प्रदान करता है।

राहुर्दानवमंत्री च सिंहिकाचित्तनन्दन:। अर्धकाय: सदा क्रोधी चन्द्रादित्य विमर्दन: ॥1॥

रौद्रो रूद्रप्रियो दैत्य: स्वर्भानु र्भानुभीतिद:। ग्रहराज सुधापायी राकातिथ्यभिलाषुक: ॥2॥

कालदृष्टि: कालरूप: श्री कण्ठहृदयाश्रय:। बिधुंतुद: सैंहिकेयो घोररूपो महाबल: ॥3॥

ग्रहपीड़ाकरो दंष्टो रक्तनेत्रो महोदर:। पंचविंशति नामानि स्म्रत्वा राहुं सदानर: ।।4।।

य: पठेन्महती पीड़ा तस्य नश्यति केवलम्। आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं धान्यं पशूंस्तथा ।।5।।

ददाति राहुस्तस्मै य: पठेत स्तोत्र मुत्तमम्। सततं पठेत यस्तु जीवेद्वर्षशतं नर: ।।6।।

3.8.2 केतू स्तोत्र

केतु: काल: कलयिता धूम्रकेतुर्विवर्णक:। लोककेतुर्महाकेतु: सर्वकेतुर्भयप्रद: ।।1।।

रौद्रो रूद्रप्रियो रूद्र: क्रूरकर्मा सुगन्ध्रक्। फलाशधूमसंकाशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् ।।2।।

तारागणविमर्दो च जैमिनेयो ग्रहाधिप:। पंचविंशति नामानि केतुर्य: सततं पठेत् ।।3।।

तस्य नश्यंति बाधाश्चसर्वा: केतुप्रसादत:। धनधान्यपशूनां च भवेद् व्रद्विर्नसंशय: ।।4।।

3.9 सारांश

नवग्रह स्तोत्र का मुख्य उद्देश्य नवग्रहों की कृपा प्राप्त कर उनके अशुभ प्रभावों को कम करना और जीवन में शांति, समृद्धि, और संतुलन लाना है। यह स्तोत्र हमारे जीवन पर ग्रहों के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों को समझते हुए, उनका समाधान और शुभ फलों की प्राप्ति सुनिश्चित करता है। ग्रहों को हमारे कर्म और भाग्य का कारक माना जाता है। नवग्रह स्तोत्र का नियमित पाठ व्यक्ति के कर्मों को शुद्ध करता है और भाग्य को मजबूत बनाता है। यह स्तोत्र ग्रह दोषों, जैसे शनि की साढ़ेसाती, राहु-केतु के अशुभ प्रभाव, या अन्य ग्रहों की विपरीत स्थिति से उत्पन्न कष्टों को शांत करता है। नवग्रह स्तोत्र का पाठ करके व्यक्ति ग्रहों की शुभ ऊर्जा को आकर्षित कर सकता है, जिससे जीवन में सुख, समृद्धि और सफलता मिलती है। नवग्रह स्तोत्र न केवल ग्रहों के अशुभ प्रभाव को समाप्त करता है, बल्कि उनकी सकारात्मक ऊर्जा को बढ़ाकर व्यक्ति को आध्यात्मिक शांति और मानसिक स्थिरता के साथ-साथ जीवन के हर क्षेत्र में सफल बनाता है। नवग्रह स्तोत्र का पाठ ज्योतिषीय समस्याओं को हल करने और ग्रहों की कृपा प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसे विधि-विधान और नियमितता के साथ पढ़ने पर इसके प्रभाव अधिक शुभ और सकारात्मक होते हैं। नवग्रह स्तोत्र का पाठ सुबह के समय, स्नान और शुद्धता के बाद करना अत्यधिक लाभकारी होता है। यदि सुबह पाठ न कर सकें, तो सूर्यास्त के समय इसे पढ़ना भी शुभ माना जाता है।

3.10 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. क , 2. क , 3. क, 4. क ,

3.11 संदर्भित पाठ्य सामग्री

1. स्तोत्र रत्नावली – गीताप्रेश गौरखपुर
2. वृहत स्तोत्र रत्नावली- गीताप्रेश गौरखपुर
3. कर्मठगुरु
4. नित्यकर्म विधि
5. स्तोत्र संग्रह
6. विकिपीडिया

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. नवग्रह स्तोत्र पाठ को सविधि उल्लेख कीजिए।

2. नवग्रह स्तोत्र पाठ से क्या- क्या लाभ हैं।

3. आदित्य हृदय स्तोत्र पाठ को लिखिए।

4. नवग्रहों के स्तोत्र पाठों को करने से क्या- क्या लाभ होता है।

इकाई – 4 विष्णु

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 विष्णु स्तोत्र
4.3.1श्रीनारायणाष्टकम्
4.3.2 श्रीकमलापत्यष्टकम्
4.3.3 विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्
4.3.4 श्रीदशावतारस्तोत्रम्
4.3.5 श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम्
बोध प्रश्न
4.4 सारांश
4.5 बोधप्रश्नों के उत्तर
4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 350, के द्वितीय खण्ड की चतुर्थ इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है विषणु स्तोत्र इस इकाई में आप विष्णु भागवान से सम्बन्धित स्तोत्रों का अध्ययन करेंगें।

श्रीवैष्णव परंपरा में स्तोत्रों का विशेष स्थान है, क्योंकि ये केवल स्तुति के पद्य नहीं, बल्कि भक्त और भगवान के बीच सेतु का कार्य करते हैं। श्रीनारायणाष्टकम् में भगवान नारायण को समस्त सृष्टि के आधार, पालनकर्ता और करुणा के सागर के रूप में स्मरण किया गया है। यह स्तोत्र मनुष्य को यह बोध कराता है कि जीवन की सभी गतियाँ उसी परम नारायण से उत्पन्न होकर उसी में विलीन होती हैं, अतः उनका स्मरण करने से भय, संशय और अस्थिरता दूर होती है। श्रीकमलापत्यष्टकम् में लक्ष्मीपति विष्णु की उस स्वरूप में आराधना की गई है जहाँ वे ऐश्वर्य, सौभाग्य और धर्म के अधिष्ठाता हैं; यह स्तोत्र साधक को यह संदेश देता है कि भौतिक समृद्धि तभी कल्याणकारी होती है जब वह धर्म और भक्ति से जुड़ी हो। विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् भगवान विष्णु के एक हजार नामों के माध्यम से उनके अनंत गुणों, शक्तियों और लीलाओं का विस्तार से वर्णन करता है; प्रत्येक नाम एक विशेष गुण या भाव को प्रकट करता है, जिससे मनुष्य का चित्त शुद्ध होता है, स्मरण शक्ति बढ़ती है और जीवन में स्थिरता आती है, इसलिए इसे कलियुग में सर्वाधिक प्रभावशाली स्तोत्र माना गया है। श्रीदशावतारस्तोत्रम् में भगवान विष्णु के दस अवतारों का स्मरण कर यह बताया गया है कि जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ईश्वर किसी न किसी रूप में अवतार लेकर सृष्टि का संतुलन स्थापित करते हैं; यह स्तोत्र मानव समाज को यह प्रेरणा देता है कि संकट के समय ईश्वर की कृपा अवश्य प्रकट होती है। श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् भगवान नृसिंह के उग्र और करुणामय स्वरूप का वर्णन करता है, जहाँ वे भक्त प्रह्लाद की रक्षा के लिए अत्याचार का नाश करते हैं; इस स्तोत्र का पाठ भय, बाधा और मानसिक अशांति को दूर करने में सहायक माना गया है। इन सभी स्तोत्रों को एक साथ देखने पर यह स्पष्ट होता है कि ये भगवान विष्णु के विविध रूपों—नारायण, लक्ष्मीपति, सहस्रनाम रूप, अवतारी स्वरूप और नृसिंह रूप—का समन्वित दर्शन कराते हैं तथा साधक को भक्ति, विश्वास, धैर्य और धर्म के मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेंगे कि

- ❖ विष्णु स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीनारायणाष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीकमलापत्यष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीदशावतारस्तोत्रम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे

4.3 विष्णु स्तोत्र

विष्णु स्तोत्रों का हिंदू धर्म और विशेषतः वैष्णव परंपरा में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि ये स्तोत्र भगवान विष्णु को सृष्टि के पालनकर्ता, धर्म के संरक्षक और भक्तों के परम आश्रय के रूप में स्थापित करते हैं। विष्णु स्तोत्र केवल स्तुति के शब्द नहीं हैं, बल्कि वे मनुष्य के अंतःकरण को शुद्ध करने, विचारों को स्थिर करने और जीवन को धर्ममय बनाने का साधन हैं। इन स्तोत्रों में भगवान विष्णु के विभिन्न नामों, रूपों और गुणों का स्मरण किया गया है, जिससे साधक को यह अनुभूति होती है कि ईश्वर सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान और करुणामय हैं। विष्णु स्तोत्रों के नियमित पाठ से मन में भक्ति का भाव उत्पन्न होता है, अहंकार और भय का नाश होता है तथा आत्मविश्वास और धैर्य की वृद्धि होती है। शास्त्रों में कहा गया है कि कलियुग में नाम-स्मरण और स्तोत्र-पाठ सबसे सरल और प्रभावी साधना है, और विष्णु स्तोत्र इस साधना का श्रेष्ठ माध्यम हैं। ये स्तोत्र मनुष्य को यह शिक्षा देते हैं कि संसार की अस्थिरता में केवल भगवान विष्णु ही स्थायी सत्य हैं, इसलिए उन्हीं का आश्रय लेने से जीवन की कठिनाइयों से मुक्ति मिलती है। विष्णु स्तोत्रों में धर्म, कर्म और भक्ति का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है, जो गृहस्थ, साधु और विद्यार्थी सभी के लिए समान रूप से उपयोगी है। इनके पाठ से मानसिक शांति प्राप्त होती है, नकारात्मक विचारों का क्षय होता है और जीवन में सकारात्मकता का संचार होता है। विष्णु स्तोत्रों का महत्व इसलिए भी अधिक है कि इनमें भगवान के अवतारों और लीलाओं का स्मरण कर यह बताया गया है कि जब-जब अधर्म बढ़ता है, तब-तब भगवान विष्णु सृष्टि की रक्षा के लिए अवतार लेते हैं। यह भाव मनुष्य में आशा, विश्वास और धर्म के प्रति दृढ़ता उत्पन्न करता है। साथ ही, ये स्तोत्र सामाजिक और नैतिक मूल्यों को भी सुदृढ़ करते हैं, क्योंकि इनके माध्यम से सत्य, अहिंसा, करुणा और सेवा जैसे गुणों का विकास होता

है। इस प्रकार विष्णु स्तोत्रों का महत्व केवल धार्मिक अनुष्ठान तक सीमित नहीं है, बल्कि वे मानव जीवन को संतुलित, शांत और उद्देश्यपूर्ण बनाने का एक सशक्त आध्यात्मिक साधन हैं।

4.3.1श्रीनारायणाष्टकम्

वात्सल्यादभयप्रदानसमयादार्तार्तिनिर्वापणा-
दौदार्यादघशोषणादगणितश्रेयःपदप्रापणात्
सेव्यः श्रीपतिरेक एव जगतामेतेऽभवन्साक्षिणः
प्रह्लादश्च विभीषणश्च करिराट् पाञ्चाल्यहल्या ध्रुवः ॥ १ ॥

प्रह्लादास्ति यदीश्वरो वद हरिः सर्वत्र मे दर्शय
स्तम्भे चैवमिति ब्रुवन्तमसुरं तत्राविरासीद्धरिः ।
वक्षस्तस्य विदारयन्निजनखैर्वात्सल्यमापादय-
न्नार्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः ॥ २ ॥

श्रीरामात्र विभीषणोऽयमनघो रक्षोभयादागतः
सुग्रीवानय पालयैनमधुना पौलस्त्यमेवागतम् ।
इत्युक्त्वाभयमस्य सर्वविदितं यो राघवो दत्तवानार्तः ॥ ३ ॥

नक्रग्रस्तपदं समुद्धतकरं ब्रह्मादयो भो सुराः
पाल्यन्तामिति दीनवाक्यकरिणं देवेष्वशक्तेषु यः ।
मा भैषीरिति यस्य नक्रहनने चक्रायुधः श्रीधर । आर्तः ॥ ४ ॥

भो कृष्णाच्युत भो कृपालय हरे भो पाण्डवानां सखे
क्वासि क्वासि सुयोधनादपहृतां भो रक्ष मामातुराम् ।
इत्युक्तोऽक्षयवस्त्रसंभृततनुं योऽपालयद्द्रौपदीमार्त० ॥ ५ ॥

यत्पादाब्जनखोदकं त्रिजगतां पापौघविध्वंसनं
यन्नामामृतपूरकं च पिबतां संसारसन्तारकम् ।

पाषाणोऽपि यदङ्घ्रिपद्मरजसा शापान्मुनेर्मोचित । आर्त ॥ ६ ॥

पित्रा भ्रातरमुत्तमासनगतं चौत्तानपादिर्ध्रुवो
दृष्ट्वा तत्सममारुरुक्षुरधृतो मात्रावमानं गतः ।
यं गत्वा शरणं यदाप तपसा हेमाद्रिसिंहासनमार्त० ॥ ७ ॥

आर्ता विषण्णाः शिथिलाश्च भीता
घोरेषु च व्याधिषु वर्तमानाः ।
सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रं
विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति ॥ ८ ॥
इति श्रीकूरेशस्वामिविरचितं श्रीनारायणाष्टकं सम्पूर्णम् ।

अति वात्सल्यमय होने के कारण, भयभीतों को अभयदान देने का स्वभाव होने के कारण, दुःखी पुरुषों का दुःख हरने के कारण, अति उदार और पापनाशक होने के कारण और अन्य अगणित कल्याणमय पदों (श्रेयों) की प्राप्ति करा देनेके कारण सारे जगत्के लिये भगवान् लक्ष्मीपति ही सेवनीय हैं; क्योंकि प्रह्लाद, विभीषण, गजराज, द्रौपदी, अहल्या और ध्रुव- -ये (क्रमसे) इन कार्योंमें साक्षी हैं ॥ १ ॥ 'अरे प्रह्लाद ! यदि तू कहता है कि ईश्वर सर्वत्र है तो मुझे खम्भे में दिखा' – दैत्य हिरण्यकशिपु के ऐसा कहते ही वहाँ भगवान् आविर्भूत हो गये और अपने नखों से उसके वक्षःस्थल को विदीर्ण करके अपना वात्सल्य प्रकट किया। ऐसे दीनरक्षक भगवान् नारायण ही मेरी एकमात्र गति हैं ॥२॥ 'हे श्रीरामजी ! यह निष्पाप विभीषण राक्षस रावणके भयसे आया है- यह सुनते ही सुग्रीव ! उस पुलस्त्य ऋषिके पौत्रको तुरंत ले आओ और उसकी रक्षा करो' – ऐसा कहकर जैसा अभयदान श्रीरघुनाथजीने उसे दिया वह सबको विदित ही है; वे ही दीनरक्षक भगवान् नारायण मेरी एकमात्र गति हैं ॥ ३ ॥ ग्राहद्वारा पाँव पकड़ लिये जानेपर सूँड़ उठाकर 'हे ब्रह्मा आदि देवगण ! मेरी रक्षा करो।' - इस प्रकार दीनवाणीसे पुकारते हुए गजेन्द्रकी रक्षा में देवताओं को असमर्थ देखकर 'मत डर' ऐसा कहकर जिन श्रीधरने ग्राहका वध करनेके लिये सुदर्शनचक्र उठा लिया, वे ही दीनरक्षक भगवान् नारायण मेरी एकमात्र गति हैं॥४॥'हे कृष्ण ! हे अच्युत ! हे कृपालो ! हे हरे ! हे पाण्डवसखे ! तुम कहाँ हो ? कहाँ हो ? दुर्योधनद्वारा लूटी गयी मुझ आतुराकी रक्षा करो ! रक्षा करो !!' - इस प्रकार प्रार्थना करने पर जिसने अक्षयवस्त्र से द्रौपदीका शरीर ढककर उसकी रक्षा, की, वह दुःखियों का उद्धार करने में तत्पर भगवान् नारायण मेरी गति हैं ॥ ५ ॥ जिनके चरण कमलों के नखों की धोवन

श्रीगङ्गाजी त्रिलोकीके पापसमूहको ध्वंस करने वाली हैं, जिनका नामामृतसमूह पान करनेवालोंको संसार-सागर से पार करने वाला है तथा जिनके पादपद्मों की रजसे पाषाण भी मुनिशापसे मुक्त हो गया, वे दीनरक्षक भगवान् नारायण ही मेरी एकमात्र गति हैं ॥ ६ ॥ अपने भाईको पिताके साथ उत्तम राजसिंहासन पर बैठा देख उत्तानपादके पुत्र ध्रुवने जब स्वयं ही उसपर चढ़ना चाहा तो पिताने उसे अङ्क में नहीं लिया और विमाताने भी उसका अनादर किया, उस समय जिनकी शरण जाकर उसने तपके द्वारा सुमेरुगिरि के राजसिंहासन की प्राप्ति की, वे ही दीनरक्षक भगवान् नारायण मेरी एकमात्र गति हैं ॥ ७ ॥ जो पीड़ित हैं, विषादयुक्त हैं, शिथिल (निराश) हैं, भयभीत हैं अथवा किसी भी घोर आपत्ति में पड़े हुए हैं, वे 'नारायण' शब्द के संकीर्तनमात्र से दुःखसे मुक्त होकर सुखी हो जाते हैं ॥८॥

4.3.2 श्रीकमलापत्यष्टकम्

भुजगतल्पगतं घनसुन्दरं गरुडवाहनमम्बुजलोचनम् ।
नलिनचक्रगदाकरमव्ययं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ १ ॥
अलिकुलासितकोमलकुन्तलं विमलपीतदुकूलमनोहरम् ।
जलधिजाङ्कितवामकलेवरं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ २ ॥
किमु जपैश्च तपोभिरुताध्वरैरपि किमुत्तमतीर्थनिषेवणैः ।
किमुत शास्त्रकदम्बविलोकनैर्भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ३ ॥
मनुजदेहमिमं भुवि दुर्लभं समधिगम्य सुरैरपि वाञ्छितम् ।
विषयलम्पटतामपहाय वै भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ४ ॥
न वनिता न सुतो न सहोदरो न हि पिता जननी न च बान्धवः ।
व्रजति साकमनेन जनेन वै भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ५ ॥
सकलमेव चलं सचराचरं जगदिदं सुतरां धनयौवनम् ।
समवलोक्य विवेकदृशा द्रुतं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ६ ॥
विविधरोगयुतं क्षणभङ्गुरं परवशं नवमार्गमलाकुलम् ।
परिनिरीक्ष्य शरीरमिदं स्वकं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ७ ॥
मुनिवरैरनिशं हृदि भावितं शिवविरिञ्चिमहेन्द्रनुतं सदा ।
मरणजन्मजराभयमोचनं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ॥ ८ ॥
हरिपदाष्टकमेतदनुत्तमं परमहंसजनेन समीरितम् ।
पठति यस्तु समाहितचेतसा व्रजति विष्णुपदं स नरो ध्रुवम् ॥ ९ ॥

इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीकमलापत्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

रे मनुष्यो ! जो शेषशय्यापर पौढ़े हुए हैं, नीलमेघ-सदृश श्याम-सुन्दर हैं, गरुड़ जिनका वाहन है और जिनके कमल-जैसे नेत्र हैं, उन शङ्ख- चक्र-गदा-पद्मधारी अव्यय श्रीकमलापति को भजो ॥ १ ॥ भौंरों के समान जिनकी काली-काली कोमल अलकें हैं, अति निर्मल सुन्दर पीताम्बर है और जिनके वामाङ्क में श्रीलक्ष्मीजी सुशोभित हैं, रे मनुष्यो ! उन श्रीकमलापति को भजो ॥ २ ॥ जप, तप, यज्ञ अथवा उत्तम-उत्तम तीर्थों के सेवन में क्या रखा है ? अथवा अधिक शास्त्रावलोकन के पचड़ेमें पड़नेसे ही क्या होना है ? रे मनुष्यो ! बस श्रीकमलापतिको ही भजो ॥ ३ ॥ इस संसारमें यह मनुष्य-शरीर अति दुर्लभ और देवगणों से भी वाञ्छित है—ऐसा जानकर विषय-लम्पटताको त्याग कर रे मनुष्यो ! श्रीकमलापति को भजो ॥४॥ इस जीवके साथ स्त्री, पुत्र, भाई, पिता, माता और बन्धुजन कोई भी नहीं जाता, अतः रे मनुष्यो ! श्रीकमलापति को भजो ॥ ५ ॥ यह सचराचर जगत्, धन और यौवन सभी अत्यन्त अस्थिर हैं—ऐसा विवेकदृष्टिसे देखकर रे मनुष्यो! शीघ्र ही श्रीकमलापतिको भजो ॥ ६ ॥ यह शरीर नाना प्रकार के रोगों का आश्रय, क्षणिक, परवश तथा मलसे भरे हुए नौ मार्गोंवाला है—ऐसा देखकर रे मनुष्यो ! श्रीकमलापतिको भजो ॥ ७ ॥ मुनिजन जिनका अहर्निश हृदयमें ध्यान करते हैं, शिव, ब्रह्मा तथा इन्द्रादि समस्त देवगण जिनकी सर्वदा वन्दना करते हैं तथा जो जरा, जन्म और मरणादिके भयको दूर करने वाले हैं, रे मनुष्यो ! उन श्रीकमलापतिको भजो ॥ ८ ॥ दास परमहंसद्वारा कहे गये इस अत्युत्तम भगवान् हरिके अष्टकको जो मनुष्य समाहितचित्त से पढ़ता है, वह अवश्य ही भगवान् विष्णुके परमधामको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

4.3.3 विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥
नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते ।
अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥

वैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः ।
युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् ।

स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥ २ ॥
को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।
किं जपन् मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥ ३ ॥

भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन् नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥ ४ ॥
तमेव चार्चयन् नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।
ध्यायन् स्तुवन् न मस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥ ५ ॥
अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् ।
लोकाध्यक्षं स्तुवन् नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥ ६ ॥
ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।
लोकनाथं महद्भुतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥ ७ ॥
एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।
यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥ ८ ॥
परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।
परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥ ९ ॥
पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।
दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥ १० ॥
यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे ।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥ ११ ॥
तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते ।
विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥ १२ ॥
यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।
ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥ १३ ॥
ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ।
भूतकृद् भूतभृद् भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥ १४ ॥
पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।
अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥ १५ ॥

योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः ।
नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ॥ १६ ॥
सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।
सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥ १७ ॥
स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।
अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥ १८ ॥
अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥ १९ ॥
अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।
प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम् ॥ २० ॥
ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।
हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥ २१ ॥
ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।
अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥ २२ ॥
सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।
अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥ २३ ॥
अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः ।
वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥ २४ ॥
वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मा सम्मितः समः ।
अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥ २५ ॥
रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।
अमृतः शाश्वतः स्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥ २६ ॥
सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।
वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः ॥ २७ ॥
लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।
चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥ २८ ॥
भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ २९ ॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः ।
अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥ ३० ॥
वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः ।
अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥ ३१ ॥
महाबुद्धिर्महावीर्या महाशक्तिर्महाद्युतिः ।
अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥ ३२ ॥
महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः ।
अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः ॥ ३३ ॥
मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।
हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥ ३४ ॥
अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः संधाता सन्धिमान् स्थिरः ।
अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥ ३५ ॥
गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः ।
निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥ ३६ ॥
अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः ।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ ३७ ॥
आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः ।
अहः संवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥ ३८ ॥
सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग् विश्वभुग् विभुः ।
सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नर्नारायणो नरः ॥ ३९ ॥
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।
सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥ ४० ॥
वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥ ४१ ॥
सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।
नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥ ४२ ॥
ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः ।
ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥ ४३ ॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः ।
औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥ ४४ ॥
भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।
कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥ ४५ ॥
युगादिकृद् युगावर्तो नैकमायो महाशनः ।
अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥ ४६ ॥
इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः ।
क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥ ४७ ॥
अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः ।
अपां निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥ ४८ ॥
स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।
वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥ ४९ ॥
अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।
अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥ ५० ॥
पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।
महर्द्धिरृद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥ ५१ ॥
अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।
सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः ॥ ५२ ॥
विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।
महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥ ५३ ॥
उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः ।
करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ५४ ॥
व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः ।
परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥ ५५ ॥
रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।
वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ५६ ॥
वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।
हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥ ५७ ॥

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः ।
उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ।। ५८ ।।
विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।
अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥ ५९ ॥
अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥ ६० ॥
यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः ।
सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥ ६१ ॥
सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।
मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥ ६२ ॥
स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।
वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥ ६३ ॥
धर्मगुब् धर्मकृद् धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।
अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ।। ६४ ।।
गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।
आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ।। ६५ ।।
उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।
शरीरभूतभृद् भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥ ६६ ॥
सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित् पुरुसत्तमः ।
विनयो जयः सत्यसंधो दाशार्हः सात्वतां पतिः ॥ ६७ ॥
जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ।
अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥ ६८ ॥
अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः ।
आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥ ६९ ॥
महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।
त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत् ॥ ७० ॥
महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।
गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥ ७१ ॥

वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः संकर्षणोऽच्युतः ।
वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥ ७२ ॥
भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः ।
आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥ ७३ ॥
सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।
दिविस्पृक् सर्वदृग् व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥ ७४ ॥
त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।
संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥ ७५ ॥
शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।
गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥ ७६ ॥
अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः ।
श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः ॥ ७७ ॥
श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाल्लोकत्रयाश्रयः ॥ ७८ ॥
स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिज्योतिर्गणेश्वरः ।
विजितात्मा विधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ॥ ७९ ॥
उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः ।
भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥ ८० ॥
अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।
अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥ ८१ ॥
कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥ ८२ ॥
कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।
अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनंजयः ॥ ८३ ॥
ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।
ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥ ८४ ॥
महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।
महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥ ८५ ॥

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।
पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥ ८६ ॥
मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।
वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥ ८७ ॥
सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।
शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥ ८८ ॥
भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।
दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥ ८९ ॥
विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥ ९० ॥
एको नैकः सवः कः किं यत् तत् पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥ ९१ ॥
सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥ ९२ ॥
अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥ ९३ ॥
तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥ ९४ ॥
चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥ ९५ ॥
समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः ।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥ ९६॥
शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥ ९७ ॥
उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥ ९८ ॥
सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।
महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥ ९९ ॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः ।
अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥ १०० ॥
सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
न्यग्रोधोदुम्बरो ऽश्वत्थश्चाणूरान्धनिषूदनः ॥ १०१ ॥
सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।
अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद् भयनाशनः ॥ १०२ ॥
अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।
अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः ॥ १०३ ॥
भारभृत् कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः ।
आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥ १०४ ॥
धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः ।
अपराजितः सर्वसहो नियन्ता नियमो यमः ॥ १०५ ॥
सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः ।
अभिप्रायः प्रियाऽर्हः प्रियकृत् प्रीतिवर्धनः ॥ १०६ ॥
विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग् विभुः ।
रविविरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥ १०७ ॥
अनन्तो हुतभुग् भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।
अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥ १०८ ॥
सनात् सनातनतमः कपिलः कपिरप्ययः ।
स्वस्तिदः स्वस्तिकृत् स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणः ॥ १०९ ॥
अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।
शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥ ११० ॥
अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः ।
विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ १११ ॥
उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्रनाशनः ।
वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ११२ ॥
अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः।
चतुरस्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥ ११३ ॥

अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।
जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥ ११४ ॥
आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः ।
ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥ ११५ ॥
प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत् प्राणजीवनः ।
तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥ ११६ ॥
भूर्भुवः स्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।
यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥ ११७ ॥
यज्ञभृद् यज्ञकृद् यज्ञी यज्ञभुग् यज्ञसाधनः ।
यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥ ११८ ॥
आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानः सामगायनः ।
देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥ ११९ ॥
शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।
रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥ १२० ॥
॥ सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति ॥
इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।
नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥ १२१ ॥
य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।
नाशुभं प्राप्नुयात् किञ्चित् सोऽमुत्रेह च मानवः ॥ १२२ ॥
वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥ १२३ ॥
धर्मार्थी प्राप्नुयाद् धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात् कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात् प्रजाम् ॥ १२४ ॥
भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत् प्रकीर्तयेत् ॥ १२५ ॥
यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।
अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥ १२६ ॥
न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।

भवत्यरोगो द्युतिमान् बलरूपगुणान्वितः ॥ १२७ ॥
रोगार्तो मुच्यते रोगाद् बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापत्र आपदः ॥ १२८ ॥
दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन् नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥ १२९ ॥
वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥ १३० ॥
न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।
जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते ॥ १३१ ॥
इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
युज्येतात्मसुख क्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥ १३२ ॥
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥ १३३ ॥
द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः ।
वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥ १३४ ॥
ससुरासुरगन्धर्व सयक्षोरगराक्षसम् ।
जगद् वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥ १३५ ॥
इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।
वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्र क्षेत्रज्ञ एव च ॥ १३६ ॥
सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते ।
आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥ १३७ ॥
ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।
जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥ १३८ ॥
योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च ।
वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत् सर्वं जनार्दनात् ॥ १३९ ॥
एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।
त्रींल्लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥ १४० ॥
इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।

पठेद् य इच्छेत् पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥ १४१ ॥
विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ।
भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥ १४२ ॥
ॐ तत्सदिति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्या संहितायां वैयासिक्यामानु-
शासनिके पर्वणि भीष्मयुधिष्ठिरसंवादे श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रम् ॥

4.3.4 श्रीदशावतारस्तोत्रम्

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम् ।
विहितवहित्रचरित्रमखेदम् ॥
केशव धृतमीनशरीर जय जगदीश हरे ॥ १ ॥
क्षितिरतिविपुलतरे तव तिष्ठति पृष्ठे ।
धरणिधरणकिणचक्रगरिष्ठे ॥
केशव धृतकच्छपरूप जय जगदीश हरे ॥ २ ॥
वसति दशनशिखरे धरणी तव लग्ना ।
शशिनि कलङ्ककलेव निमग्ना ॥
केशव धृतसूकररूप जय जगदीश हरे ॥ ३ ॥
तव करकमलवरे नखमद्भुतशृङ्गम् ।
दलितहिरण्यकशिपुतनुभृङ्गम् ॥
केशव धृतनरहरिरूप जय जगदीश हरे ॥ ४ ॥
छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन ।
पदनखनीरजनितजनपावन ॥
केशव धृतवामनरूप जय जगदीश हरे ॥ ५ ॥
क्षत्रियरुधिरमये जगदपगतपापम् ।
स्नपयसि पयसि शमितभवतापम् ॥
केशव धृतभृगुपतिरूप जय जगदीश हरे ॥ ६ ॥
वितरसि दिक्षु रणे दिक्पतिकमनीयम् ।
दशमुखमौलिबलिं रमणीयम् ॥
केशव धृतरघुपतिवेष जय जगदीश हरे ॥ ७ ॥
वहसि वपुषि विशदे वसनं जलदाभम् ।

हलहतिभीतिमिलितयमुनाभम् ॥
केशव धृतहलधररूप जय जगदीश हरे ॥ ८ ॥
निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम् ।
सदयहृदयदर्शितपशुघातम् ॥
केशव धृतबुद्धशरीर जय जगदीश हरे ॥ ९॥
म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालम्।
धूमकेतुमिव किमपि करालम् ॥
केशव धृतकल्किशरीर जय जगदीश हरे ॥ १० ॥
श्रीजयदेवकवेरिदमुदितमुदारम् ।
शृणु सुखदं शुभदं भवसारम् ॥
केशव धृतदशविधरूप जय जगदीश हरे ॥ ११ ॥
इति श्रीजयदेवविरचितं श्रीदशावतारस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

हे मीनावतारधारी केशव ! हे जगदीश्वर ! हे हरे ! प्रलयकाल में बढ़े हुए समुद्रजल में बिना क्लेश नौका चलाने की लीला करते हुए आपने वेदों की रक्षा की थी, आपकी जय हो ॥ १ ॥ हे केशव ! पृथ्वीके धारण करनेके चिह्नसे कठोर और अत्यन्त विशाल तुम्हारी पीठपर पृथ्वी स्थित है, ऐसे कच्छपरूपधारी जगत्पति आप हरि की जय हो ॥ २ ॥ चन्द्रमामें निमग्न हुई कलङ्करेखाके समान यह पृथ्वी आपके दाँतकी नोकपर अटकी हुई सुशोभित हो रही है, ऐसे सूकररूपधारी जगत्पति हरि केशवकी जय हो ॥ ३ ॥ हिरण्यकशिपुरूपी तुच्छ भृङ्गको चीर डालने वाले विचित्र नुकीले नख आपके करकमलमें हैं, ऐसे नृसिंहरूपधारी जगत्पति हरि केशवकी जय हो ॥ ४ ॥ हे आश्चर्यमय वामनरूपधारी केशव ! आपने पैर बढ़ाकर राजा बलिको छला तथा अपने चरण-नखों के जल से लोगोंको पवित्र किया, ऐसे आप जगत्पति हरिकी जय हो ॥ ५ ॥ हे केशव ! आप जगत्के ताप और पापोंका नाश करते हुए, उसे क्षत्रियोंके रुधिररूप जलसे स्नान कराते हैं, ऐसे आप परशुरामरूपधारी जगत्पति हरिकी जय हो ॥ ६ ॥ जो युद्धमें सब दिशाओंमें लोकपालोंको प्रसन्न करनेवाली, रावणके सिरकी सुन्दर बलि देते हैं, ऐसे श्रीरामावतारधारी आप जगत्पति भगवान् केशव की जय हो ॥ ७ ॥ जो अपने गौर शरीर में हलके भय से आकर मिली हुई यमुना और मेघ के सदृश नीलाम्बर धारण किये रहते हैं, ऐसे आप बलरामरूपधारी जगत्पति भगवान् केशव की जय हो ॥ ८॥ सदय हृदय से पशुहत्या की कठोरता दिखाते हुए यज्ञविधानसम्बन्धी श्रुतियों की निन्दा करनेवाले आप बुद्धरूपधारी

जगत्पति भगवान् केशवकी जय हो ॥ ९ ॥ जो म्लेच्छसमूहका नाश करनेके लिये धूमकेतुके समान अत्यन्त भयंकर तलवार चलाते हैं, ऐसे कल्किरूपधारी आप जगत्पति भगवान् केशव की जय हो ॥ १० ॥ [हे भक्तो !] इस जयदेव कविकी कही हुई मनोहर, आनन्ददायक, कल्याणमय तत्त्वरूप स्तुति को सुनो, हे दशावतारधारी ! जगत्पति, हरि केशव ! आपकी जय हो ॥ ११॥

4.3.5 श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम्

श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे
भोगीन्द्रभोगमणिरञ्जितपुण्यमूर्ते
योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ १ ॥
ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदर्ककिरीटकोटि-
सङ्घट्टिताङ्घ्रिकमलामलकान्तिकान्त ।
लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस । लक्ष्मी० ॥ २ ॥
संसारघोरगहने चरतो मुरारे
मारोग्रभीकरमृगप्रवरार्दितस्य।
आर्तस्य मत्सरनिदाघनिपीडितस्य । लक्ष्मी० ॥ ३ ॥
संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं
सम्प्राप्य दुःखशतसर्पसमाकुलस्य ।
दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य । लक्ष्मी० ॥ ४ ॥
संसारसागरविशालकरालकाल-
नक्रग्रहग्रसननिग्रहविग्रहस्य।
व्यग्रस्य रागरसनोर्मिनिपीडितस्य । लक्ष्मी० ॥ ५ ॥
संसारवृक्षमघबीजमनन्तकर्म-
शाखाशतं करणपत्रमनङ्गपुष्पम् ।
आरुह्य दुःखफलितं पततो दयालो । लक्ष्मी० ॥ ६॥
संसारसर्पघनवक्त्रभयोग्रतीव्र-
दंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्तेः।

नागारिवाहन सुधाब्धिनिवास शौरे । लक्ष्मी० ॥ ७ ॥
संसारदावदहनातुरभीकरोरु-
ज्वालावलीभिरतिदग्धतनूरुहस्य।
त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य। । लक्ष्मी० ॥ ८ ॥
संसारजालपतितस्य जगन्निवास
सर्वेन्द्रियार्तवडिशार्थझषोपमस्य
प्रोत्खण्डितप्रचुरतालुकमस्तकस्य । । लक्ष्मी० ॥ ९ ॥
संसारभीकरकरीन्द्रकराभिघात-
निष्पिष्टमर्मवपुषः सकलार्तिनाश ।
प्राणप्रयाणभवभीतिसमाकुलस्य । लक्ष्मी० ॥ १० ॥
अन्धस्य मे हृतविवेकमहाधनस्य
चोरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः ।
मोहान्धकूपकुहरे विनिपातितस्य । लक्ष्मी ॥ ११ ॥
लक्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश विष्णो
वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष ।
ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव
देवेश देहि कृपणस्य करावलम्बम् ॥ १२ ॥
यन्माययोर्जितवपुः प्रचुरप्रवाह-
मग्नार्थमत्र निवहोरुकरावलम्बम् ।
लक्ष्मीनृसिंहचरणाब्जमधुव्रतेन
स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शङ्करेण ॥ १३ ॥
इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

हे अति शोभायमान क्षीरसमुद्र में निवास करने वाले, हाथ में चक्र धारण करने वाले, नागनाथ (शेषजी) के फणों की मणियों से देदीप्यमान मनोहर मूर्तिवाले! हे योगीश ! हे सनातन ! हे शरणागतवत्सल ! हे संसारसागर के लिये नौकास्वरूप! श्रीलक्ष्मीनृसिंह ! मुझे अपने करकमल का सहारा दीजिये ॥ १॥ आपके अमल चरणकमल ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, मरुत् और सूर्य आदिके किरीटोंकी कोटियों के समूह से अति देदीप्यमान हो रहे हैं । हे श्रीलक्ष्मीजी के कुचकमलके राजहंस

श्रीलक्ष्मीनृसिंह ! मुझे अपने करकमल का सहारा दीजिये ॥ २ ॥ हे मुरारे ! संसाररूप गहन वनमें विचरते हुए कामदेवरूप अति उग्र और भयानक मृगराजसे पीड़ित तथा मत्सररूप घाम से सन्तप्त अति आर्तको हे लक्ष्मीनृसिंह ! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ३ ॥ संसाररूप अति भयानक और अगाध कूपके मूलमें पहुँचकर जो सैकड़ों प्रकारके दुःखरूप सर्पोंसे व्याकुल और अत्यन्त दीन हो रहा है, उस अति कृपण और आपत्तिग्रस्त मुझको हे लक्ष्मीनृसिंहदेव! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ४ ॥ संसारसागर में अति कराल और महान् कालरूप नक्रों और ग्राहोंके ग्रसनेसे जिसका शरीर निगृहीत हो रहा है तथा आसक्ति और रसनारूप तरङ्गमालासे जो अति पीड़ित है, ऐसे मुझको हे लक्ष्मीनृसिंह! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ५ ॥ हे दयालो! पाप जिसका बीज है, अनन्त कर्म सैकड़ों शाखाएँ हैं, इन्द्रियाँ पत्ते हैं, कामदेव पुष्प है तथा दुःख ही जिसका फल है, ऐसे संसाररूप वृक्षपर चढ़कर मैं नीचे गिर रहा हूँ, ऐसे मुझको हे लक्ष्मीनृसिंह! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥६॥ इस संसारसर्पके विकट मुखकी भयरूप उग्र दाढ़ोंके कराल विषसे दग्ध होकर नष्ट हुए मुझको हे गरुडवाहन, क्षीरसागरशायी, शौरि श्रीलक्ष्मीनृसिंह ! आप अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ७ ॥ संसाररूप दावानलके दाहसे अति आतुर और उसकी भयंकर तथा विशाल ज्वाला-मालाओंसे जिसके रोम-रोम दग्ध हो रहे हैं तथा जिसने आपके चरण-कमलरूप सरोवरकी शरण ली है, ऐसे मुझको हे लक्ष्मीनृसिंह! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ८ ॥ हे जगन्निवास ! सकल इन्द्रियोंके विषयरूप बंसी [उसमें फँसने] के लिये मत्स्यके समान संसारपाश में पड़कर जिसके तालु और मस्तक खण्डित हो गये हैं, ऐसे मुझको हे लक्ष्मीनृसिंह ! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ९ ॥ हे सकलार्तिनाशन! संसाररूप भयानक गजराजकी सूँड़के आघातसे जिसके मर्मस्थान कुचल गये हैं तथा जो प्राणप्रयाणके सदृश संसार (जन्म-मरण) के भयसे अति व्याकुल है, ऐसे मुझको हे लक्ष्मीनृसिंह ! अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ १० ॥ हे प्रभो ! इन्द्रिय नामक प्रबल चोरोंने जिसके विवेकरूप परम धनको हर लिया है तथा मोहरूप अन्धकूपके गड्ढे में जो गिरा दिया गया है, ऐसे मुझ अन्धको हे लक्ष्मीनृसिंह ! आप अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ ११ ॥ हे लक्ष्मीपते ! हे कमलनाभ ! देवेश्वर ! हे विष्णो ! हे वैकुण्ठ ! हे कृष्ण ! हे मधुसूदन ! हे कमलनयन ! हे ब्रह्मण्य ! हे केशव ! हे जनार्दन ! हे वासुदेव ! हे देवेश ! मुझ दीनको आप अपने करकमलका सहारा दीजिये ॥ १२॥ जिसका स्वरूप मायासे ही प्रकट हुआ है उस प्रचुर संसारप्रवाह में डूबे हुए पुरुषों के लिये जो इस लोकमें अति बलवान् करावलम्बरूप है ऐसा यह सुखप्रद स्तोत्र इस पृथ्वीतल पर लक्ष्मीनृसिंहके चरणकमल के लिये मधुकररूप शङ्कर (शङ्कराचार्यजी) ने रचा है॥ १३॥

बोध प्रश्न

1. श्रीनारायणाष्टकम् में भगवान नारायण को किस रूप में वर्णित किया गया है?

(क) केवल संहारकर्ता

(ख) सृष्टि के रचयिता

(ग) सृष्टि के पालनकर्ता एवं आधार

(घ) तपस्वी योगी

2. श्रीकमलापत्यष्टकम् में भगवान विष्णु का कौन-सा स्वरूप प्रमुख है?

(क) नृसिंह (ख) वामन (ग) लक्ष्मीपति (घ) राम

3. विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् में कुल कितने नामों का वर्णन है?

(क) 108 (ख) 1000 (ग) 100 (घ) 1008

4. विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् का प्रमुख फल क्या माना गया है?

(क) केवल भौतिक सुख

(ख) शारीरिक बल

(ग) चित्त की शुद्धि और मानसिक शांति

(घ) युद्ध विजय

5. श्रीदशावतारस्तोत्रम् में भगवान विष्णु के कितने अवतारों का वर्णन है?

(क) आठ (ख) नौ (ग) दस (घ) बारह

6. श्रीदशावतारस्तोत्रम् का मुख्य उद्देश्य क्या है?

(क) तपस्या का वर्णन

(ख) धर्म की रक्षा का संदेश

(ग) यज्ञ विधान

(घ) ग्रह शांति

7. श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् किस भक्त की रक्षा से संबंधित है?

(क) ध्रुव (ख) प्रह्लाद (ग) विभीषण (घ) अर्जुन

8. नृसिंह स्वरूप किस गुण का प्रतीक है?

(क) केवल सौम्यता

(ख) केवल तप

(ग) उग्रता और करुणा दोनों

(घ) मौन

9. विष्णु स्तोत्रों का नियमित पाठ किस युग में विशेष फलदायी माना गया है?

(क) सतयुग (ख) त्रेतायुग (ग) द्वापरयुग (घ) कलियुग

4.4 संराश

इस इकाई के अंतर्गत भगवान विष्णु से संबंधित प्रमुख स्तोत्रों का अध्ययन किया गया है, जिनमें श्रीनारायणाष्टकम्, श्रीकमलापत्यष्टकम्, विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्, श्रीदशावतारस्तोत्रम् तथा श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् विशेष रूप से सम्मिलित हैं। इस अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि विष्णु स्तोत्र वैष्णव भक्ति परंपरा के मूल आधार हैं और साधक को भगवान विष्णु के विविध स्वरूपों का सम्यक् ज्ञान कराते हैं। श्रीनारायणाष्टकम् से भगवान नारायण के सर्वव्यापक और पालनकर्ता स्वरूप का बोध होता है, जबकि श्रीकमलापत्यष्टकम् में लक्ष्मीपति विष्णु को ऐश्वर्य, धर्म और सौभाग्य के अधिष्ठाता के रूप में समझा गया है। विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् के अध्ययन से भगवान के अनंत नामों और गुणों का ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे यह अनुभूति होती है कि ईश्वर एक होते हुए भी असंख्य गुणों से युक्त हैं। श्रीदशावतारस्तोत्रम् के माध्यम से यह जाना गया कि धर्म की रक्षा और अधर्म के नाश हेतु भगवान विष्णु समय-समय पर अवतार लेते हैं, जो मानव समाज के लिए प्रेरणास्रोत हैं। वहीं श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् से भगवान के उग्र एवं करुणामय स्वरूप का परिचय मिलता है, जो भक्तों की रक्षा के लिए किसी भी सीमा तक जाने को तत्पर रहते हैं। इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि विष्णु स्तोत्र न केवल भक्ति भावना को दृढ़ करते हैं, बल्कि मनुष्य को धर्म, विश्वास, साहस और मानसिक शांति की ओर भी अग्रसर करते हैं।

4.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

1(ग) 2. (ग) 3. (ख) 4. (ग) 5. (ग) 6. (ख) 7. (ख) 8.(ग) 9.(घ)

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नित्यकर्म पूजाप्रकाश – गीताप्रेस गोरखपुर

स्तोत्ररत्नावली - गीताप्रेस गोरखपुर

4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्रीनारायणाष्टकम् और श्रीकमलापत्यष्टकम् के आध्यात्मिक महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् के धार्मिक एवं मानसिक लाभों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् में वर्णित नृसिंह स्वरूप की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. विष्णु स्तोत्रों का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है? उदाहरण सहित समझाइए

इकाई – 5 शिव स्तोत्र

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 शिव स्तोत्र
5.3.1 शिवपंचाक्षर
5.3.2 श्रीरुद्राष्टकम्
5.3.3 शिवाष्टकम्
5.3.4 श्रीविश्वनाथाष्टकम्
5.3.5 श्रीपशुपत्यष्टकम्
5.3.6 शिव लिंगाष्टकम

बोध प्रश्न
5.4 सारांश
5.5 बोधप्रश्नों के उत्तर
5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 350, के द्वितीय खण्ड की पंचम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है शिव स्तोत्र इस इकाई में आप विष्णु भागवान से सम्बन्धित स्तोत्रों का अध्ययन करेंगें। भगवान शिव की उपासना का आधार उनके विविध स्तोत्रों में निहित है, जो साधक को भक्ति, वैराग्य और आत्मबोध की ओर अग्रसर करते हैं। प्रस्तुत इकाई में अध्ययन किए गए शिवपंचाक्षर, श्रीरुद्राष्टकम्, शिवाष्टकम्, श्रीविश्वनाथाष्टकम्, श्रीपशुपत्यष्टकम् तथा शिवलिंगाष्टकम्—ये सभी स्तोत्र भगवान शिव के विभिन्न स्वरूपों, गुणों और तत्त्वों का सरल एवं भावपूर्ण रूप में परिचय कराते हैं। शिवपंचाक्षर मंत्र 'नमः शिवाय' शिवभक्ति का मूल मंत्र है, जो पंचमहाभूतों की शुद्धि के साथ-साथ साधक के अंतःकरण को पवित्र करता है और यह सिखाता है कि शिव ही चेतना के मूल स्रोत हैं। श्रीरुद्राष्टकम् में भगवान रुद्र के उग्र, तेजस्वी और करुणामय स्वरूप का वर्णन है, जिसमें यह भाव प्रकट होता है कि शिव भय और दुःख का नाश करने वाले तथा भक्तों के रक्षक हैं। शिवाष्टकम् के माध्यम से शिव के शांत, ध्यानमग्न और योगी स्वरूप का स्मरण होता है, जो मनुष्य को सांसारिक बंधनों से ऊपर उठकर आत्मचिंतन और साधना की प्रेरणा देता है। श्रीविश्वनाथाष्टकम् में काशी के अधिपति विश्वनाथ भगवान शिव की महिमा का गुणगान है, जहाँ शिव को मोक्ष के दाता और ज्ञान के परम स्रोत के रूप में स्वीकार किया गया है; यह स्तोत्र मृत्यु और जीवन के रहस्य को समझने की दृष्टि प्रदान करता है। श्रीपशुपत्यष्टकम् में भगवान शिव को समस्त जीवों के स्वामी अर्थात् पशुपति के रूप में वर्णित किया गया है, जो यह संदेश देता है कि जीवात्मा तभी मुक्त होती है जब वह अपने स्वामी शिव के शरणागत होती है। शिवलिंगाष्टकम् में शिवलिंग के तत्त्वात्मक स्वरूप की व्याख्या की गई है, जहाँ लिंग को सृष्टि, स्थिति और संहार के प्रतीक के रूप में देखा गया है; यह स्तोत्र निराकार और साकार शिव के अद्वैत भाव को समझाता है। इन सभी स्तोत्रों का सामूहिक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भगवान शिव केवल संहारकर्ता नहीं, बल्कि करुणा, तप, ज्ञान और मोक्ष के दाता हैं। ये स्तोत्र साधक के जीवन में मानसिक शांति, आत्मबल और वैराग्य का संचार करते हैं तथा उसे धर्म और सत्य के मार्ग पर स्थिर करते हैं। इस प्रकार ये शिव स्तोत्र न केवल धार्मिक पाठ हैं, बल्कि मानव जीवन को संतुलित, साधनापूर्ण और आध्यात्मिक बनाने का सशक्त माध्यम भी हैं।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेंगे कि

- ❖ शिव स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ शिवपंचाक्षर स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीरुद्राष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ शिवाष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीविश्वनाथाष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ श्रीपशुपत्यष्टकम् स्तोत्र से आप परिचित होंगे
- ❖ शिव लिंगाष्टकम स्तोत्र से आप परिचित होंगे

5.3 शिव स्तोत्र

शिवस्तोत्रों का भारतीय आध्यात्मिक परंपरा में अत्यंत विशिष्ट महत्व है, क्योंकि ये भगवान शिव को केवल संहारकर्ता के रूप में नहीं, बल्कि सृष्टि के रहस्यमय आधार, करुणा के सागर और मोक्ष के दाता के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। शिवस्तोत्र साधक को बाह्य आडंबर से हटाकर अंतर्मुखी साधना की ओर ले जाते हैं और यह बोध कराते हैं कि शिव तत्व प्रत्येक जीव के भीतर चेतना के रूप में विद्यमान है। इन स्तोत्रों में भगवान शिव के निराकार और साकार दोनों स्वरूपों का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है, जिससे साधक को अद्वैत भाव की अनुभूति होती है। शिवस्तोत्रों का नियमित पाठ मन को स्थिर करता है, विकारों को शांत करता है और अहंकार के बंधन को शिथिल करता है। शैव शास्त्रों में कहा गया है कि कलियुग में शिवनाम और स्तोत्र-पाठ सबसे सरल साधना है, क्योंकि शिव शीघ्र प्रसन्न होने वाले देवता हैं। शिवस्तोत्रों में वर्णित शिव का योगी स्वरूप मनुष्य को संयम, तप और ध्यान का मार्ग दिखाता है, वहीं उनका करुणामय स्वरूप यह आश्वासन देता है कि सच्चे भाव से की गई प्रार्थना कभी निष्फल नहीं जाती। इन स्तोत्रों के माध्यम से जीवन के दुःख, भय और असुरक्षा का निवारण होता है तथा साधक के भीतर आत्मबल और धैर्य का विकास होता है। शिवस्तोत्रों का महत्व इसलिए भी है कि ये मनुष्य को मृत्यु और नश्वरता के सत्य से परिचित कराते हैं और उसे सांसारिक आसक्ति से ऊपर उठने की प्रेरणा देते हैं। शिव को कालों के भी काल महाकाल कहा गया है, अतः उनका स्मरण जीवन की क्षणभंगुरता को समझाकर मोक्ष की दिशा में उन्मुख करता है। शिवस्तोत्र सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी उपयोगी हैं, क्योंकि इनके पाठ से करुणा, क्षमा, वैराग्य और सेवा जैसे गुणों का विकास होता है। ये स्तोत्र गृहस्थ, साधु और विद्यार्थी

सभी के लिए समान रूप से मार्गदर्शक हैं, क्योंकि ये यह सिखाते हैं कि सच्चा कल्याण बाहरी उपलब्धियों में नहीं, बल्कि आंतरिक शांति और आत्मज्ञान में निहित है। इस प्रकार शिवस्तोत्र केवल धार्मिक स्तुति नहीं, बल्कि मानव जीवन को सरल, संतुलित और आध्यात्मिक रूप से समृद्ध बनाने का प्रभावशाली साधन हैं।

5.3.1 शिवपंचाक्षर

यह स्तोत्र भगवान शिव का है। शिव जी का एक नाम आशुतोष है। अर्थात् अत्यन्त शीघ्र ही प्रसन्न होने वाले ये देवता है। इसीलिए इन्हें आशुतोष भी कहा जाता है। इसी गुण का लाभ कभी कभी असुर भी उठा लेते हैं। इनके यहाँ देव या असुर, राक्षस या मनुष्य कोई भी हो, यदि निर्मल हृदय से इनकी स्तुति करता है तो ये जल्दी ही प्रसन्न हो जाते हैं। इनका एक नाम शिव है। शिव का अर्थ कल्याण है। अर्थात् सभी का कल्याण करने वाले ।

कि शिवजी के मन्त्र "नमः शिवाय" में भी 5 ही अक्षर है, जिसे पंचाक्षरी मन्त्र कहा जाता है। इसे ही यहाँ शिवपंचाक्षर के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ अविलम्ब ही अब स्तोत्र पाठ को प्रस्तु किया जा रहा है।

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय महेश्वराय ।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय ॥1॥
मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय, नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय ।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै 'म' काराय नमः शिवाय॥ 2 ॥
शिवाय गौरीवनदनाब्जवृन्दसूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषभध्वजाय, तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय ॥3॥ ।
वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्यमुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय ।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय ॥ 4 ॥
यक्षस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय ।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय ॥ 5 ॥
पंचाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥6॥

जिनके कण्ठ में साँपों का हार है, जिनके तीन नेत्र हैं, भस्म ही जिनका अंगराग (अनुलेपन) है, दिशाएँ ही जिनका वस्त्र है (अर्थात् जो नग्न हैं), उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है ॥1 गंगाजल और चन्दन से जिनकी अर्चा हुई है, मन्दार - पुष्प तथा अन्यान्य कुसुमों से जिनकी सुन्दर पूजा हुई है, उन नन्दी के अधिपति प्रमथगणों के स्वामी महेश्वर 'म' कारस्वरूप शिव को मस्कार है॥2॥ जो कल्याणस्वरूप हैं, पार्वतीजी के मुखकमल को विकसित (प्रसन्न करने के लिये जो सूर्य स्वरूप हैं, जो दक्ष के यज्ञ का नाश करने वाले हैं, जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकण्ठ 'शि' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है ॥ 3 वसिष्ठ, अगस्त्य और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियों तथा इन्द्र आदि देवताओं ने जिनके मस्तक की पूजा की है, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं, उन 'व' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है॥4॥ जिन्होंने यक्षरूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथ में पिनाक हैं, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगम्बर देव 'य' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है॥5॥ जो शिव के समीप इस पवित्र पंचाक्षर स्तोत्र का पाठ करता है, वह शिवलोक को प्राप्त करता और वहाँ शिवजी के साथ आनन्द पूर्वक निवास करता है। अस्तु!।6॥

इस स्तोत्र की यह विशेषता है कि इसका आदि अक्षर 'न' से प्रारंभ होकर 'य' अक्षर पर समाप्त होता है। एवं अन्तिम के चरणों में 'तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय, इसी प्रकार अन्त में तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय । इस प्रकार यह स्तोत्र 'नमः शिवाय' मय है। यह अत्यन्त सरल एवं लघु है। इस स्तोत्र के पाठ से व्यक्ति के पाप जलकर भस्म हो जाते हैं और उसे शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है।

इसी प्रसंग में (12) द्वादश ज्योतिर्लिंगों के नाम एवं उनका स्थान भारतवर्ष में कहाँ है? यह भी यहाँ जानना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि साक्षात् भगवान् शिव उस लिंग में नित्य रूप से निवास करते हैं, ये विग्रह है साक्षात् शिव के । अतः इसका ज्ञान होना यहाँ अप्रासंगिक नहीं होगा। तो लीजिए आपके लिए यह भी प्रस्तुत है –

5.3.2 श्रीरुद्राष्टकम्

यह स्तोत्र गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी द्वारा विरचित है, यह स्तुति श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड के 108 वें दोहे में वर्णित है।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं

चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं ॥ १ ॥
निराकारमोङ्कारमूलं तुरीयं
गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं ।
करालं महाकाल कालं कृपालं
गुणागार संसारपारं नतोऽहं ॥ २ ॥
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं
मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं ।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा
लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा ॥ ३ ॥
चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं
प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं ।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुंडमालं
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥ ४ ॥
प्रचंड प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं
अखंड अजं भानुकोटिप्रकाशं ।
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं
भजेऽहं भवानीपति भावगम्यं ॥ ५ ॥
कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ।
चिदानंद संदोह मोहापहारी
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥ ६ ॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दं
भजंतीह लोके परे वा नराणाम् ।
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं
प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं ॥ ७ ॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां
नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं ।
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो ॥ ८ ॥
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥ ९ ॥
इति श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतं श्रीरुद्राष्टकं सम्पूर्णम् ।

हे ईशान! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्म, वेदस्वरूप, निजस्वरूप में स्थित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त प्रभुको प्रणाम करता हूँ॥ १ ॥ जो निराकार हैं, ओङ्काररूप आदिकारण हैं, तुरीय हैं, वाणी, बुद्धि और इन्द्रियोंके पथसे परे हैं, कैलासनाथ हैं, विकराल, और महाकाल के भी काल, कृपाल, गुणों के आगार और संसारसे तारनेवाले हैं, उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥ जो हिमालय के समान श्वेतवर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेव के समान कान्तिमान् शरीरवाले हैं, जिनके मस्तकपर मनोहर गङ्गाजी लहरा रही हैं, भालदेश में बालचन्द्रमा सुशोभित होते हैं और गले में सर्पोंकी माला शोभा देती है ॥ ३ ॥ जिनके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, जिनके नेत्र एवं भृकुटी सुन्दर और विशाल हैं, जिनका मुख प्रसन्न और कण्ठ नील है, जो बड़े ही दयालु हैं, जो बाघकी खालका वस्त्र और मुण्डों की माला पहनते हैं, उन सर्वाधीश्वर प्रियतम शिवका मैं भजन करता हूँ ॥ ४॥ जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, अजन्मा, कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान, त्रिभुवनके शूलनाशक और हाथमें त्रिशूल धारण करनेवाले हैं, उन भावगम्य भवानीपतिका मैं भजन करता हूँ ॥ ५ ॥ हे प्रभो ! आप कलारहित, कल्याणकारी और कल्पका अन्त करनेवाले हैं। आप सर्वदा सत्पुरुषों को आनन्द देते हैं, आपने त्रिपुरासुरका नाश किया था, आप मोहनाशक और ज्ञानानन्दघन परमेश्वर हैं, कामदेवके आप शत्रु हैं, आप मुझपर प्रसन्न हों, प्रसन्न हों ॥ ६ ॥ मनुष्य जबतक उमाकान्त महादेवजी के चरणारविन्दों का भजन नहीं करते, उन्हें इहलोक या परलोक में कभी सुख और शान्तिकी प्राप्ति नहीं होती और न उनका सन्ताप ही दूर होता है । हे समस्त भूतोंके निवासस्थान भगवान् शिव ! आप मुझपर प्रसन्न हों ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! हे शम्भो ! हे ईश ! मैं योग, जप और पूजा कुछ भी नहीं जानता, हे शम्भो ! मैं सदा-सर्वदा आपको नमस्कार करता हूँ। जरा, जन्म और दुःखसमूहसे सन्तप्त होते हुए मुझ दुःखीकी दुःखसे आप रक्षा कीजिये ॥ ८ ॥

जो मनुष्य भगवान् शङ्करकी तुष्टिके लिये ब्राह्मणद्वारा कहे हुए इस रुद्राष्टकका भक्तिपूर्वक पाठ करते हैं, उनपर शङ्करजी प्रसन्न होते हैं॥ ९ ॥

5.3.3 शिवाष्टकम्

तस्मै नमः परमकारणकारणाय
दीप्तोज्ज्वलज्ज्वलितपिङ्गललोचनाय।
नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय ॥ १ ॥

श्रीमत्प्रसन्नशशिपन्नगभूषणाय
शैलेन्द्रजावदनचुम्बितलोचनाय
कैलासमन्दरमहेन्द्रनिकेतनाय
लोकत्रयार्तिहरणाय नमः शिवाय ॥ २ ॥
पद्मावदातमणिकुण्डलगोवृषाय
कृष्णागरुप्रचुरचन्दनचर्चिताय
भस्मानुषक्तविकचोत्पलमल्लिकाय
नीलाब्जकण्ठसदृशाय नमः शिवाय ॥ ३॥
लम्बत्सपिङ्गलजटामुकुटोत्कटाय
दंष्ट्राकरालविकटोत्कटभैरवाय।
व्याघ्राजिनाम्बरधराय मनोहराय
त्रैलोक्यनाथनमिताय नमः शिवाय ॥ ४॥
दक्षप्रजापतिमहामखनाशनाय
क्षिप्रं महात्रिपुरदानवघातनाय ।
ब्रह्मोर्जितोर्ध्वगकरोटिनिकृन्तनाय
योगाय योगनमिताय नमः शिवाय ॥ ५ ॥
संसारसृष्टिघटनापरिवर्तनाय
रक्षः पिशाचगणसिद्धसमाकुलाय ।
सिद्धोरगग्रहगणेन्द्रनिषेविताय
शार्दूलचर्मवसनाय नमः शिवाय ॥ ६ ॥
भस्माङ्गरागकृतरूपमनोहराय
सौम्यावदातवनमाश्रितमाश्रिताय।
गौरीकटाक्षनयनार्धनिरीक्षणाय
गोक्षीरधारधवलाय नमः शिवाय ॥ ७॥
आदित्यसोमवरुणानिलसेविताय
यज्ञाग्निहोत्रवरधूमनिकेतनाय।
ऋक्सामवेदमुनिभिः स्तुतिसंयुताय
गोपाय गोपनमिताय नमः शिवाय ॥ ८॥

शिवाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ९ ॥

इति श्रीमच्छङ्करार्यविरचितं शिवाष्टकं सम्पूर्णम् ।

जो कारणके भी परम कारण हैं, (अग्निशिखाके समान) अति देदीप्यमान उज्ज्वल और पिङ्गल नेत्रोंवाले हैं, सर्पराजों के हार-कुण्डलादिसे भूषित हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादिको भी वर देनेवाले हैं, उन श्रीशङ्करको नमस्कार करता हूँ॥१॥ शोभायमान एवं निर्मल चन्द्रकला तथा सर्प ही जिनके भूषण हैं, गिरिराजकुमारी अपने मुखसे जिनके लोचनों का चुम्बन करती हैं, कैलास और महेन्द्रगिरि जिनके निवास स्थान हैं तथा जो त्रिलोकी के दुःखको दूर करनेवाले हैं, उन श्रीशङ्करको नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥ जो स्वच्छ पद्मरागमणिके कुण्डलों से किरणों की वर्षा करने वाले, अगरु और बहुत-से चन्दनसे चर्चित तथा भस्म, प्रफुल्लित कमल और जूहीसे सुशोभित हैं, ऐसे नीलकमलसदृश ण्ठवाले शिवको नमस्कार है ॥ ३ ॥ लटकती हुई पिङ्गलवर्ण जटाओंके सहित मुकुट धारण करनेसे जो उत्कट जान पड़ते हैं, तीक्ष्ण दाढ़ों के कारण जो अति विकट और भयानक प्रतीत होते हैं, व्याघ्रचर्म धारण किये हुए हैं, अति मनोहर हैं तथा तीनों लोकों के अधीश्वर भी जिनके चरणोंमें झुकते हैं, उन श्रीशङ्करको प्रणाम है ॥ ४ ॥ दक्षप्रजापतिके महायज्ञको ध्वंस करनेवाले, महान् त्रिपुरासुर को शीघ्र मार डालनेवाले, दर्पयुक्त ब्रह्माके ऊर्ध्वमुख पञ्चम सिरका छेदन करनेवाले, योगस्वरूप, योगसे नमस्कृत शिवको मैं नमस्कार करता हूँ॥५॥ जो कल्प-कल्पमें संसाररचनाका परिवर्तन करनेवाले हैं; राक्षस, पिशाच और सिद्धगणोंसे घिरे रहते हैं; सिद्ध, सर्प, ग्रहगण तथा इन्द्रादिसे सेवित हैं तथा जो व्याघ्रचर्म धारण किये हुए हैं, उन श्रीशङ्करको नमस्कार करता हूँ॥ ६ ॥ भस्मरूपी अङ्गराग से जिन्होंने अपने रूपको अत्यन्त मनोहर बनाया है, जो अति शान्त और सुन्दर वनका आश्रय करनेवालोंके आश्रित हैं, श्रीपार्वतीजी के कटाक्ष की ओर जो बाँकी चितवन से निहार रहे हैं और गोदुग्धकी धाराके समान जिनका श्वेत वर्ण है, उन श्रीशङ्करको मैं नमस्कार करता हूँ ॥७॥ सूर्य, चन्द्र, वरुण और पवनसे जो सेवित हैं, यज्ञ और अग्निहोत्रके धूममें जिनका निवास है, ऋक्सामादि वेद और मुनिजन जिनकी स्तुति करते हैं, उन नन्दीश्वर- पूजित गौओंका पालन करनेवाले महादेवजीको नमस्कार करता हूँ ॥८॥ जो इस पवित्र शिवाष्टक को श्रीमहादेवजी के समीप पढ़ता है, वह शिवलोक को प्राप्त होता है और शङ्करजी के साथ आनन्द प्राप्त करता है ॥ ९ ॥

5.3.4 श्रीविश्वनाथाष्टकम्

गङ्गातरङ्गरमणीयजटाकलापं

गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम् ।
नारायणप्रियमनङ्गमदापहारं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥ १॥
वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं
वागीशविष्णुसुरसेवितपादपीठम् ।
वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तं । वाराणसी० ॥२॥
भूताधिपं भुजगभूषणभूषिताङ्गं
व्याघ्राजिनाम्बरधरं जटिलं त्रिनेत्रम् ।
पाशाङ्कुशाभयवरप्रदशूलपाणिं । वाराणसी० ॥ ३ ॥
शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं
भालेक्षणानलविशोषितपञ्चबाणम् ।
नागाधिपारचितभासुरकर्णपूरं । वाराणसी० ॥ ४ ॥
पञ्चाननं दुरितमत्तमतङ्गजानां
नागान्तकं दनुजपुङ्गवपन्नगानाम् ।
दावानलं मरणशोकजराटवीनां । वाराणसी० ॥ ५ ॥
तेजोमयं सगुणनिर्गुणमद्वितीय-
मानन्दकन्दमपराजितमप्रमेयम्।
रागादिदोषरहितं स्वजनानुरागं
वैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम् ।
माधुर्यधैर्यसुभगं गरलाभिरामं । वाराणसी० ॥ ७ ॥
आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ ।
आदाय हत्कमलमध्यगतं परेशं । वाराणसी० ॥ ८ ॥
वाराणसीपुरपतेः स्तवनं शिवस्य
व्याख्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः ।
विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्तिं
सम्प्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम् ॥ ९ ॥
विश्वनाथाष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।

शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ १० ॥

इति श्रीमहर्षिव्यासप्रणीतं श्रीविश्वनाथाष्टकं सम्पूर्णम् ।

जिनकी जटाएँ गङ्गाजी की लहरों से सुन्दर प्रतीत होती हैं, जिनका वामभाग सदा पार्वती जी से सुशोभित रहता है, जो नारायण के प्रिय और कामदेव के मदका नाश करने वाले हैं, उन काशीपति विश्वनाथ को भज ॥ १ ॥ वाणीद्वारा जिनका वर्णन नहीं हो सकता, जिनके अनेक गुण और अनेक स्वरूप हैं, ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवता जिनकी चरणपादुकाका सेवन करते हैं, जो अपने सुन्दर वामाङ्ग के द्वारा ही सपत्नीक हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ २ ॥ जो भूतोंके अधिपति हैं, जिनका शरीर सर्परूपी गहनोंसे विभूषित है, जो बाघकी खालका वस्त्र पहनते हैं, जिनके हाथोंमें पाश, अंकुश, अभय, वर और शूल हैं, उन जटाधारी त्रिनेत्र काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ३ ॥ जो चन्द्रमाद्वारा प्रकाशित किरीटसे शोभित हैं, जिन्होंने अपने भालस्थ नेत्रकी अग्निसे कामदेवको दग्ध कर दिया, जिनके कानों में बड़े-बड़े साँपों के कुण्डल चमक रहे हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज ॥४॥ जो पापरूपी मतवाले हाथियोंके मारनेवाले सिंह हैं, दैत्यसमूहरूपी साँपोंका नाश करनेवाले गरुड़ हैं तथा जो मरण, शोक और बुढ़ापारूपी भीषण वनको जलानेवाले दावानल हैं, ऐसे काशीपति विश्वनाथको भज ॥५॥ जो तेजपूर्ण, सगुण, निर्गुण, अद्वितीय, आनन्दकन्द, अपराजित और अतुलनीय हैं, जो अपने शरीरपर साँपोंको धारण करते हैं, जिनका रूप ह्रास-वृद्धिरहित है, ऐसे आत्मस्वरूप काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ६ ॥ जो रागादि दोषों से रहित हैं; अपने भक्तों पर कृपा रखते हैं, वैराग्य और शान्तिके स्थान हैं, पार्वतीजी सदा जिनके साथ रहती हैं, जो धीरता और मधुर स्वभावसे सुन्दर जान पड़ते हैं तथा जो कण्ठमें गरलके चिह्नसे सुशोभित हैं, उन काशीपति श्वनाथको भज ॥७॥ सब आशाओं को छोड़कर, दूसरों की निन्दा त्यागकर और पाप- कर्मसे अनुराग हटाकर, चित्तको समाधिमें लगाकर, हृदयकमल में प्रकाशमान परमेश्वर काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ८ ॥ जो मनुष्य काशीपति शिवके इस आठ श्लोकोंके स्तवनका पाठ करता है, वह विद्या, धन, प्रचुर सौख्य और अनन्त कीर्ति प्राप्तकर देहावसान होनेपर मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है ॥ ९ ॥ जो शिवके समीप इस विश्वनाथाष्टकका पाठ करता है, वह शिवलोक प्राप्त करता और शिवके साथ आनन्दित होता है ॥ १० ॥

5.3.5 श्रीपशुपत्यष्टकम्

ध्यानम्

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं

रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥ १ ॥

स्तोत्रम्

पशुपतिं पतिं धरणीपतिं भुजगलोकपतिं च सतीपतिम् ।
प्रणतभक्तजनार्तिहरं परं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ १ ॥
न जनको जननी न च सोदरो न तनयो न च भूरिबलं कुलम् ।
अवति कोऽपि न कालवशं गतं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ २ ॥
मुरजडिण्डिमवाद्यविलक्षणं मधुरपञ्चमनादविशारदम् ।
प्रमथभूतगणैरपि सेवितं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ३ ॥
शरणदं सुखदं शरणान्वितं शिव शिवेति शिवेति नतं नृणाम् ।
अभयदं करुणावरुणालयं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ४ ॥
नरशिरोरचितं मणिकुण्डलं भुजगहारमुदं वृषभध्वजम् ।
चितिरजोधवलीकृतविग्रहं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ५ ॥
मखविनाशकरं शशिशेखरं सततमध्वरभाजि फलप्रदम् ।
प्रलयदग्धसुरासुरमानवं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ६ ॥
मदमपास्य चिरं हृदि संस्थितं मरणजन्मजराभयपीडितम् ।
जगदुदीक्ष्य समीपभयाकुलं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ७ ॥
हरिविरञ्चिसुराधिपपूजितं यमजनेशधनेशनमस्कृतम् ।
त्रिनयनं भुवनत्रितयाधिपं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम् ॥ ८ ॥
पशुपतेरिदमष्टकमद्भुतं विरचितं पृथिवीपतिसूरिणा ।
पठति संशृणुते मनुजः सदा शिवपुरीं वसते लभते मुदम् ॥ ९ ॥
इति श्रीपृथिवीपतिसूरिविरचितं श्रीपशुपत्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

चाँदीके पर्वतसमान जिनकी श्वेत कान्ति है, जो सुन्दर चन्द्रमाको आभूषणरूप से धारण करते हैं, रत्नमय अलङ्कारोंसे जिनका शरीर उज्ज्वल है, जिनके हाथोंमें परशु, मृग, वर और अभय है, जो प्रसन्न हैं, पद्मके आसनपर विराजमान हैं, देवतागण जिनके चारों ओर खड़े होकर स्तुति करते हैं,

जो बाघकी खाल पहनते हैं, जो विश्वके आदि, जगत्की उत्पत्तिके बीज और समस्त भयोंको हरनेवाले हैं, जिनके पाँच मुख और तीन नेत्र हैं, उन महेश्वरका प्रतिदिन ध्यान करे।

अरे मनुष्यो ! जो समस्त प्राणियों, स्वर्ग, पृथ्वी और नागलोकके पति हैं, दक्ष-कन्या सती के स्वामी हैं, शरणागत प्राणियों और भक्तजनोंकी पीड़ा दूर करनेवाले हैं, उन परमपुरुष पार्वती-वल्लभ शंकरजीको भजो ॥ १ ॥ ऐ मनुष्यो ! कालके वशमें पड़े हुए जीवको पिता, माता, भाई, बेटा, अत्यन्त बल और इसलिये तुम गिरिजापतिको कुल – इनमेंसे कोई भी नहीं बचा सकता, भजो ॥ २ ॥ रे मनुष्यो ! जो मृदङ्ग और डमरू बजानेमें निपुण हैं, मधुर पञ्चम स्वरके गायनमें कुशल हैं, प्रमथ और भूतगण जिनकी सेवामें रहते हैं, उन गिरिजापतिको भजो ॥ ३ ॥ हे मनुष्यो ! 'शिव ! शिव ! शिव !' कहकर मनुष्य जिनको प्रणाम करते हैं, जो शरणागतोंको शरण, सुख और अभय देनेवाले हैं, उन दयासागर गिरिजापतिका भजन करो ॥ ४ ॥ अरे मनुष्यो ! जो नरमुण्डरूपी मणियोंका कुण्डल और साँपोंका हार पहनते हैं, जिनका शरीर चिताकी धूलिसे धूसर है, उन वृषभध्वज गिरिजापतिको भजो ॥ ५ ॥ अरे मनुष्यो ! जिन्होंने दक्ष यज्ञका विध्वंस किया था; जिनके मस्तकपर चन्द्रमा सुशोभित हैं, जो यज्ञ करनेवालोंको सदा ही फल देनेवाले हैं और जो प्रलयकी अग्निमें देवता, दानव और मानवोंको दग्ध करनेवाले हैं, उन गिरिजापतिको भजो ॥ ६ ॥ अरे मनुष्यो ! जगत्को जन्म, जरा और मरणके भयसे पीड़ित, सामने उपस्थित भयसे व्याकुल देखकर बहुत दिनोंसे हृदयमें सञ्चित मदका त्याग कर उन गिरिजापतिको भजो ॥ ७ ॥ अरे मनुष्यो ! विष्णु, ब्रह्मा और इन्द्र जिनकी पूजा करते हैं, यम और कुबेर जिनको प्रणाम करते हैं, जिनके तीन नेत्र हैं तथा जो त्रिभुवनके स्वामी हैं, उन गिरिजापतिको भजो ॥ ८ ॥ जो मनुष्य पृथ्वीपति सूरिके बनाये हुए इस अद्भुत पशुपति-अष्टकका सदा पाठ और श्रवण करता है, वह शिवपुरीमें निवास करता और आनन्दित होता है ॥ ९ ॥

5.3.6 शिव लिंगाष्टकम

ब्रह्ममुरारिसुरार्चितलिङ्गं निर्मलभासितशोभितलिङ्गम्।
जन्मजदुःखविनाशकलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

यहाँ लिङ्ग को उस परम तत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया है जिसकी उपासना स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और समस्त देवता करते हैं। इसका भाव यह है कि शिव तत्त्व सभी दैवी शक्तियों का भी मूल आधार है। लिङ्ग का निर्मल तेज अज्ञान, मोह और अविद्या को नष्ट करता है। यह केवल बाह्य प्रकाश नहीं, बल्कि आत्मा के भीतर जाग्रत होने वाला ज्ञान-प्रकाश है। यह लिङ्ग जन्म-जन्मांतर के

दुःखों का नाश कर जीव को मोक्ष की ओर ले जाने वाला है, इसलिए भक्त श्रद्धापूर्वक उसे नमन करता है।

देवमुनिप्रवरार्चितलिङ्गं कामदहं करुणाकरलिङ्गम्।
रावणदर्पविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

यह श्लोक शिव के संयम और करुणा—दोनों पक्षों को उजागर करता है। शिव कामनाओं को भस्म करने वाले हैं, अर्थात् वे मनुष्य को वासना और इन्द्रिय-बंधन से मुक्त करते हैं। साथ ही वे करुणा के सागर हैं, जो भक्त की अल्प साधना को भी स्वीकार कर लेते हैं। रावण के दर्प का विनाश यह सिखाता है कि अहंकार चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, वह शिव-भक्ति के आगे टिक नहीं सकता।

सर्वसुगन्धसुलेपितलिङ्गं बुद्धिविवर्धनकारणलिङ्गम्।
सिद्धसुरासुरवन्दितलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

यह श्लोक बताता है कि शिव-लिङ्ग केवल पूजा की वस्तु नहीं, बल्कि चेतना को परिष्कृत करने वाला साधन है। सुगंध और लेप बाह्य शुद्धि के प्रतीक हैं, जबकि बुद्धि-विवर्धन आंतरिक शुद्धि का संकेत है। सिद्ध, देव और असुर—तीनों द्वारा वंदित होना दर्शाता है कि शिव तत्त्व सभी अवस्थाओं और प्रवृत्तियों से परे, सर्वव्यापक और सर्वमान्य है।

कनकमहामणिभूषितलिङ्गं फणिपतिवेष्टितशोभितलिङ्गम्।
दक्षसुयज्ञविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

यहाँ शिव के ऐश्वर्य और वैराग्य का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। स्वर्ण और मणियाँ उनके दिव्य वैभव का प्रतीक हैं, जबकि सर्प वैराग्य, निर्भयता और काल-नियंत्रण का संकेत है। दक्ष यज्ञ का विनाश यह सिखाता है कि अहंकार, दिखावा और श्रद्धाहीन कर्म आध्यात्मिक मार्ग में बाधक हैं। शिव सच्ची भावना को ही स्वीकार करते हैं।

कुङ्कुमचन्दनलेपितलिङ्गं पङ्कजहारसुशोभितलिङ्गम्।
सञ्चितपापविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

इस श्लोक में शिव को पापों के नाशक रूप में स्मरण किया गया है। कुंकुम और चंदन भक्ति और प्रेम के प्रतीक हैं, जबकि कमलहार पवित्रता और आत्मिक सौंदर्य का संकेत देता है। शिव-भक्ति केवल वर्तमान जीवन के दोषों को नहीं, बल्कि संचित कर्मों के बंधन को भी क्षीण कर देती है।

देवगणार्चितसेवितलिङ्गं भावैर्भक्तिभिरेव च लिङ्गम्।
दिनकरकोटिप्रभाकरलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि शिव को पाने के लिए बाह्य आडंबर नहीं, बल्कि भावपूर्ण भक्ति आवश्यक है। देवगण भी उसी भाव से शिव की उपासना करते हैं। करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी लिङ्ग आत्मज्ञान के उस प्रकाश का प्रतीक है जो अज्ञान के अंधकार को पूर्णतः नष्ट कर देता है।

अष्टदलोपरिवेष्टितलिङ्गं सर्वसमुद्भवकारणलिङ्गम्।
अष्टदरिद्रविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

अष्टदल योग और आध्यात्मिक साधना के गूढ़ संकेत हैं। शिव सम्पूर्ण सृष्टि के कारण हैं और भक्त के जीवन से आठ प्रकार के दरिद्र—शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक—का नाश करते हैं। यह श्लोक शिव को जीवन के सर्वांगीण कल्याणकर्ता के रूप में प्रस्तुत करता है।

सुरगुरुसुरवरपूजितलिङ्गं सुरवनपुष्पसदार्चितलिङ्गम्।
परात्परं परमात्मकलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥

अंतिम श्लोक में शिव को परात्पर परमात्मा कहा गया है—जो रूप, नाम और सीमाओं से परे है। देवगुरु और श्रेष्ठ देव भी जिनकी पूजा करते हैं, वे शिव सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की चेतना हैं। यह श्लोक भक्त को यह बोध कराता है कि शिव-लिङ्ग में ही सगुण और निर्गुण—दोनों का समन्वय है।

बोध प्रश्न

1. श्रीपशुपत्यष्टकम् में 'पशुपति' शब्द का क्या अर्थ है?
   (क) पशुओं के रक्षक
   (ख) यज्ञ के देवता
   (ग) समस्त जीवों के स्वामी
   (घ) वनवासी देवता
2. **शिवपंचाक्षर मंत्र 'नमः शिवाय' में कुल कितने अक्षर हैं?**
   (क) चार
   (ख) पाँच

(ग) छह

(घ) आठ

3. **शिवपंचाक्षर मंत्र का मुख्य उद्देश्य क्या है?**

(क) भौतिक सुख की प्राप्ति

(ख) पंचमहाभूतों की शुद्धि और आत्मशुद्धि

(ग) केवल यज्ञ कर्म

(घ) राजसत्ता की प्राप्ति

4. **श्रीरुद्राष्टकम् में भगवान शिव के किस स्वरूप का विशेष वर्णन है?**

(क) केवल सौम्य

(ख) केवल बाल रूप

(ग) उग्र एवं करुणामय

(घ) केवल योगी

5. **श्रीविश्वनाथाष्टकम् किस तीर्थ से संबंधित है?**

(क) उज्जैन

(ख) सोमनाथ

(ग) केदारनाथ

(घ) काशी

6. **श्रीविश्वनाथाष्टकम् में भगवान शिव को किसका दाता माना गया है?**

(क) केवल ऐश्वर्य

(ख) केवल संतान

(ग) ज्ञान और मोक्ष

(घ) युद्ध विजय

7. **श्रीपशुपत्यष्टकम् में 'पशुपति' शब्द का क्या अर्थ है?**

(क) पशुओं के रक्षक

(ख) यज्ञ के देवता

(ग) समस्त जीवों के स्वामी

(घ) वनवासी देवता

5.4 सारांश

इस इकाई में भगवान शिव से संबंधित प्रमुख स्तोत्रों का क्रमबद्ध अध्ययन किया गया है, जिनमें शिवपंचाक्षर, श्रीरुद्राष्टकम्, शिवाष्टकम्, श्रीविश्वनाथाष्टकम्, श्रीपशुपत्यष्टकम् तथा शिवलिंगाष्टकम् सम्मिलित हैं। इस अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि शिवस्तोत्र शैव परंपरा के मूल आधार हैं और साधक को भगवान शिव के विविध स्वरूपों का समग्र बोध कराते हैं। शिवपंचाक्षर मंत्र 'नमः शिवाय' के अध्ययन से शिवतत्त्व की मूल भावना, पंचमहाभूतों की शुद्धि तथा आत्मशुद्धि का महत्व समझ में आता है। श्रीरुद्राष्टकम् में भगवान रुद्र के उग्र, तेजस्वी एवं करुणामय स्वरूप का वर्णन प्राप्त होता है, जो भक्तों के दुःख और भय के नाश का प्रतीक है। शिवाष्टकम् के माध्यम से शिव के शांत, योगी और ध्यानमग्न स्वरूप का ज्ञान होता है, जो साधक को वैराग्य और आत्मचिंतन की प्रेरणा देता है। श्रीविश्वनाथाष्टकम् के अध्ययन से काशीपति विश्वनाथ शिव को ज्ञान और मोक्ष के दाता के रूप में समझने का अवसर मिलता है, जिससे जीवन और मृत्यु के रहस्य पर प्रकाश पड़ता है। श्रीपशुपत्यष्टकम् में शिव को समस्त जीवों के स्वामी के रूप में स्वीकार किया गया है, जो यह सिखाता है कि जीवात्मा शिव की शरण में जाकर ही बंधनों से मुक्त होती है। शिवलिंगाष्टकम् के अध्ययन से शिवलिंग के तत्त्वात्मक स्वरूप तथा निराकार–साकार शिव के अद्वैत भाव की समझ विकसित होती है। इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिवस्तोत्र न केवल भक्ति को सुदृढ़ करते हैं, बल्कि साधक के जीवन में मानसिक शांति, आत्मबल, वैराग्य और मोक्षाभिमुख चेतना का विकास भी करते हैं।

5.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (ग) 2. (ख) 3. (ख) 4. (ग) 5. (घ) 6. **(ग) 7. (ग)**

5.6 सन्दर्भग्रन्थ सूची

नित्यकर्म पूजाप्रकाश – गीताप्रेस गोरखपुर
स्तोत्ररत्नावली - गीताप्रेस गोरखपुर

5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शिवपंचाक्षर मंत्र का आध्यात्मिक और दार्शनिक महत्व स्पष्ट कीजिए।
2. श्रीरुद्राष्टकम् में वर्णित भगवान शिव के उग्र एवं करुणामय स्वरूप का विवेचन कीजिए।

3. शिवाष्टकम् एवं शिवलिंगाष्टकम् के आधार पर शिव तत्त्व की व्याख्या कीजिए।

4. श्रीविश्वनाथाष्टकम् में काशी और मोक्ष की अवधारणा को समझाइए।

5. शिवस्तोत्रों का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है? विस्तार से लिखिए।

खण्ड -3

स्तोत्र पाठ

इकाई -1 रामचरितमानस पाठ विधि

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 रामचरित्र मानस परिचय
1.4 गोस्वामी तुलसीदास का परिचय
1.5 रामचरित्र मानस का स्वरुप
1.6 रामचरित्रमानस सप्तम काण्ड परिचय
1.7 रामचरित्र मानस परायण विधि
1.8 रामचरित मानस का षोडशोपचार पूजन विधि
1.9 सारांश
1.10 पारिभाषिक शब्दावली
1.11 अभ्यास प्रश्न
1.12 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर
1.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! प्रस्तुत पाठ्यक्रम बी.ए.के.ए (एन) 350 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है? इस इकाई का शीर्षक "रामचरित मानस पाठ विधि" हैं के अंतर्गत श्री रामचरित मानस पाठ विधि क्या हैं? किस प्रकार से राम चरित्र मानस पाठ विधि का विधान किया जाता हैं? इन सभी बिंदुओं का अध्ययन इस इकाई मैं आगे दिया जा रहा हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा के रुप मैं रामचरित मानस का महत्वपूर्ण स्थान रहा हैं। जिसके द्वारा भारतीय ज्ञान परम्परा प्राचीन काल से लेकर आज तक समृद्ध दिखाई देती हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस मानस संवत् 1574, को अनुष्टु चन्द, तथा अवधि भाषा मैं इस ग्रंथ की रचना की हैं।जो कि नैतिक शिक्षा के साथ साथ नीति , सदाचार,समाजिक, तथा जीवनशैली, जीवन को शुद्ध एवं परिपक्व बनाती हैं। जिसका महत्व स्थान वर्तमान मैं दिखाई देता हैं। इस इकाई मैं रामचरित मानस के महत्त्वपूर्ण विंदुओं पर चर्चा की गयी हैं। इस ग्रंथ मैं सात कांडों मैं तुलसीदास द्वारा लिखी गयी हैं सभी कांडों मैं अलग अलग प्रकार के विषयों का वर्णन, भाषा शैली, तथा महिमा एवं रामचरित मानस के स्वरूप का भी वर्णन प्राप्त होता हैं। इस ग्रंथ मैं भगवान राम के चरित्र का विस्तृत रुप से वर्णन किया गया हैं। जो की मर्यादा का आजीवन पालन करते हुए सत्मार्ग पर चलकर समाज को सही दिशा मैं चलनें की शिक्षा देता है। इस ग्रंथ मैं बालकाण्ड, अयोध्या काण्ड, अरण्यकांड, किष्किन्धाकाण्ड, सुंदर काण्ड, लंकाकांड, उतरकांड, तथा नवाह्न पारायण विश्राम का भी विस्तृत उल्लेख किया गया है जो जीवन को सार्थक बनाती हैं। इस इकाई का हम आगे विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- ❖ रामचरित मानस ग्रंथ की महिमा से अवगत होंगे।
- ❖ गोस्वामी तुलसीदास के बारे मैं जान पायेंगे।
- ❖ रामचरित मानस के कांडों से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ रामचरित मानस पारायण विधिको समझ सकेंगे।
- ❖ रामचरित मानस के स्वरूप को समझ सकेंगे।

1.3 रामचरित्र मानस परिचय

रामचरित मानस भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक चेतना और काव्य-परंपरा का ऐसा महाकाव्य है जो हिंदी साहित्य में भक्ति युग की सर्वश्रेष्ठ कृतियों में महत्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास हैं, जिन्होंने 16वीं शताब्दी में इसे अवधी, ब्रज तथा संस्कृत के मिश्रित काव्य-भाषा में रचा गया हैं। यह ग्रंथ हिंदू धर्म में रामकथा का सर्वाधिक लोकप्रिय और लोकमानस के रूप में प्रसिद्ध है।गोस्वामी तुलसीदास ने यह काव्य ऐसे समय में लिखा जब भारतीय समाज विदेशी आक्रांताओं और आंतरिक धार्मिक-विचलन के दौर से गुजर रहा था। समाज में वैचारिक भ्रम, नैतिक पतन और जातीय विभाजन के कारण लोगों के भीतर स्थिरता और श्रद्धा की आवश्यकता थी। उस काल में तुलसीदास ने रामकथा के आदर्शों के द्वारा समाज को एक नई दिशा देने का कार्य किया हैं 1 इसी उद्देश्य से उन्होंने वाल्मीकि रामायण जो की संस्कृत भाषा में लिखा गया हैं, वाल्मीकि रामायण को आधार बनाकर लोकभाषा में एक नया महाकाव्य रचा गया था जो विश्व का प्रथम महाकाव्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ जिसे सामान्य व्यक्ति भी समझ सकें इसी धारणा से इस काव्य की रचना की गयी हैं।रामचरितमानस का अर्थ हैं राम के चरित्र का मानस-सरवर -अर्थात ऐसा पवित्र झरना जिसमें भक्त डुबकी लगाकर आध्यात्मिक शांति और नैतिक प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन को सफल बना सके। रामचरित्र मानस कुल सात कांडों में विभाजित किया गया हैं? जो आगे दिया जा रहा हैं

बालकांड,अयोध्याकांड,अरण्यकांड,किष्किंधाकांड,सुंदरकांड,लंकाकांड,उत्तरकांड इन सभी कांड में राम के जीवन चरित्र को तथा रामचरित के सभी पात्रो का वर्णन किया गया हैं। इस काव्य का अधिकांश भाग छंदबद्ध के रूप में तेयार किया गया हैं। जिसमें दोहा, चौपाई, सोरठा, छंद, कविता आदि काव्यरूपों का सुंदर उल्लेख मिलता है। रामचरित मानस में मुख्य विषयवस्तु के रूप में रामचरितमानस का केंद्रीय विषय है, मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र के माध्यम से मानव जीवन के नैतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक मूल्यों का प्रतिपादन करना जिससे की समाज पर इसका प्रभाव पड़ सके। रामचरित मानस के मुख्य विषय इस प्रकार हैं।

1. **भक्ति तत्व**- रामभक्ति, निष्काम भक्ति, तथा नाम-कीर्तन महात्म्य का विशेष उल्लेख किया गया हैं।

2. **धर्म और मर्यादा**- भगवान राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो समाज को सत्य का अनुसरण करने का सन्देश देता हैं।
3. **आदर्श जीवन-शैली**- सीता, लक्ष्मण, भरत, हनुमान आदि पात्र आदर्श आचरण के प्रमुख पात्र हैं।
4. **समन्वयवादी दृष्टि**- सगुण-निर्गुण, ज्ञान-भक्ति, राम-रावण, देव-मानव सभी के संतुलित रूप के वर्णन।
5. लोकमंगल की भावना- काव्य का उद्देश्य,नैतिकता, प्रेम और सदाचार के द्वारा समाज में लोकभावना को जागृत करना हैं।

रामचरित मानस की भाषाशैली का वर्णन भी गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित्र मानस में बताया हैं की भाषा सहज, मधुर, काव्यात्मक और अत्यंत लोकप्रिय है, जिसे सामान्य व्यक्ति भी समझ सके। उनकी शैली सरल और संप्रेषणीय,आलंकारिक,भावुक और भक्तिपूर्ण हैं लोकभाषा की मिठास और संस्कृत-परंपरा का संतुलन एक अद्वितीय सौंदर्य रचना को दर्शाता हैं। जिसकी विशेषताएँ इस प्रकार से हैं l

लोकधर्मी महाकाव्य- यह जन-जीवन में रचा-बसा महा काव्य है जो सभी मनुष्यों के जीवन में दिखाई देता हैं।

चरित्र-चित्रण की उत्कृष्टता - राम, सीता, हनुमान, रावण आदि पात्रों का जीवन चरित्र अत्यंत जीवंत दिखाई देता हैं।

भाषा का माधुर्य - दोहा-चौपाइयों की लयात्मकता का अद्भुत दृश्य दिखाई देता हैं।

आदर्शवादी दृष्टिकोण- मानव जीवन के लिए ऊँचे आदर्श प्रस्तुत करता है।

धार्मिक और दार्शनिक मूल्य – वेद,वेदांत, उपनिषद और पुराणों के तत्वों का सहज समन्वय किया गया हैं। रामचरितमानस का प्रभाव केवल धार्मिक ग्रंथ के रूप में ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक के रूप में रामलीला, लोकगीत, पर्व-त्योहार, कला-साहित्य के रूप मे भी दिखाई देता हैं। जिसका गहरा प्रभाव मनुष्यों के जीवन पर पड़ता हैं ।सामाजिक- नैतिकता, मर्यादा, साहस, त्याग और सेवा की शिक्षा पर प्रभाव पड़ता हैं। भाषिक - अवधी और हिंदी भाषा को रामचरित मानस में सर्वाधिक लोकप्रियता प्रदान की गयी हैं। आध्यात्मिक- यह आध्यात्मिकता भक्ति आंदोलन को नई दिशा

प्रदान करता हैं। भारत ही नहीं, अपितु विश्व के कई देशों में यह ग्रंथ रामभक्ति और भारतीय संस्कृति का प्रमुख प्रतिनिधि ग्रथ माना जाता है जिसके प्रभाव से उन सभी देशो में आध्यात्मिक के साथ साथ मानसिक शांति प्राप्त हो रही हैं।

1.4 गोस्वामी तुलसीदास जी का परिचय

भारतीय संस्कृति और साहित्य में अनेक साधु संतों ने इस धरा पर जन्म लेकर के महान कार्यो को किया। जिन्होंने समाज को भक्ति, नैतिकता और सदाचार का मार्ग दिखाया। इनमें गोस्वामी तुलसीदास जी का नाम अत्यंत श्रद्धा और गौरव से लिया जाता रहा हैं। गोस्वामी तुलसी दास भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त और हिंदी साहित्य के महान कवि थे। जन्म और प्रारंभिक जीवन काल इनका भूत ही कठिन रहा। गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म 1497 ई.से लेकर (1532 ई.) में उत्तर प्रदेश के राजापुर गाँव में हुआ था। बचपन में तुलसी दास को रामबोला के नाम से पुकारते थे बचपन में ही माता-पिता का निधन हो गया, जिसके बाद गुरु नरहरिदास ने उनका पालन-पोषण किया। शिक्षा और साधना के बल पर तुलसीदास जी ने संस्कृत, वेद, पुराण और दर्शन का गहन अध्ययन किया।वे काशी में रहकर भक्ति और साहित्य साधना कर भगवान राम की भक्ति में पूर्णतः समर्पित हो गये।साहित्यिक योगदान में गोस्वामी तुलसीदास जी ने अनेक ग्रंथों की रचना की, जिनमें प्रमुख हैं, रामचरितमानस जो अवधी भाषा में लिखा गया महाकाव्य हैं, जिसमें भगवान राम के जीवन का सुंदर वर्णन किया गया हैं। प्रसिद्ध दोहों के रूप में गोस्वामी जी ने हनुमान चालीसा को लिखकर भक्ति मार्ग को और भी सरल बना दिया जिसमे भगवान हनुमान जी की महिमा का उल्लेख स्तुति के रूप में की गयी हैं। जो आज भी घर-घर में गाई जाती है। गोस्वामी तुलसीदास जी की अन्य रचनाएँ – विनयपत्रिका, कवितावली, गीतावली, जानकी मंगल, पार्वती मंगल, हनुमान बाहुक आदि।तुलसीदास की विशेषताएँ जनभाषा में लेखन उन्होंने संस्कृत की गूढ़ता को सरल हिंदी और अवधी में प्रस्तुत किया।भक्ति आंदोलन के स्तंभ: उनकी रचनाओं ने समाज में धार्मिक और सांस्कृतिक चेतना को गहराई दी।नैतिक शिक्षा उनके दोहे और चौपाइयाँ आज भी जीवन के आदर्शों को सिखाती रहती हैं।1623 ई. में वाराणसी में तुलसीदास ने देह का त्याग करते हुए परमधाम को चले गये।उन्होंने लगभग 126 वर्ष का जीवन व्यतीत किया। गोस्वामी तुलसीदास जी का जीवन और साहित्य भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। उनकी रचनाएँ आज भी भक्ति, सदाचार और जीवन मूल्यों का मार्गदर्शन करती हैं। वे सदा-सर्वदा भारतीय जनमानस के प्रेरणास्रोत बने रहेंगे।

1.5 रामचरित्र मानस का स्वरुप

भारतीय ज्ञान परम्परा मैं रामचरितमानस को लोकप्रिय ग्रंथ के रूप मैं स्वीकार किया गया हैं। जो अतिमहत्वपूर्ण विषय से व्याप्त होते हुए जीव के क्लेशों दुखों को दूर करने का ज्ञान देती हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने वाल्मीकि रामायण के आधार पर ही रामचरित मानस की रचना दोहों ,चोपायों,तथा छन्दों के माध्यम से अवधि भाषा तथा अनुष्टुप चन्द से युक्त इस ग्रंथ की रचना जनकल्याण के माध्यम से गौ स्वामी तुलसीदास जी ने की हैं। इस ग्रंथ का लौकिक, आध्यात्मिक,तथा वैज्ञानिक स्वरूप दिखाई देता हैं। जो कि हमारे जीवन के आचरण तथा भाव से जुड़ा रहता हैं। इस ग्रथं मैं रामायण के सभी पात्रों का उल्लेख अलग अलग विशेषता के रुप मैं किया गया हैं। सात कांडों मैं बाल्यकाड को प्रथम कांड के रूप मैं स्वीकार किया गया हैं। जिसमें भगवान राम के बाल्यकाल का विस्तृत उल्लेख किया गया हैं बाल्यकाल की शिक्षा, दीक्षा, अध्ययन, का वर्णन तथा सत्यार्थ पर चलनें की शिक्षा गुरु के द्वारा दिया गया हैं,जिससे की आनेवाली समस्याओं का समाधान कर सत्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी गई हैं। रामचरित मानस जीवन शैली के साथ साथ ज्ञान के मार्ग को भी प्रशस्त भी करती रहती है एक सम्पूर्ण व्यावहारिक जीवन दर्शन को समेटे हुए ग्रन्थ के रूप में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्री रामचरितमानस पर जितनी भी चर्चा, आलोचना-समालोचना और समीक्षा हुई है उतनी किसी अन्य लिपिबद्ध ग्रन्थ की नही हुई हैं। श्रीरामचरितमानस में निरूपित जीवन-व्यवस्था एक आदर्श समाज एवं आदर्श राज्य की कोरी कल्पना मात्र न होकर पूर्णतः अनुभवगम्य और व्यावहारिक रूप में की गयी हैं । इस ग्रन्थ के माध्यम से गोस्वामी जी ने परस्पर स्नेह-सम्मान के साथ कर्त्तव्य-परायणता के माध्यम से न केवल जीवन को समृद्ध-सुखी बनाने में असंख्य-अप्रतिम योगदान दिया है,अपितु मानस के पात्रों के माध्यम से ढेरों सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में महत्वपूर्ण कार्य भी किया है।वर्तमान सन्दर्भ में देखने में आता हैं की हमारे समक्ष विद्यमान विशालतम चुनौतियों उनमें सामाजिक व्यवस्था में समरसता का उत्तरोत्तर ह्रास प्रमुख हैं । श्री रामचरितमानस में समन्वयवाद एवं राष्ट्रीय एकता सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता-अखंडता के लिए रामचरित मानस ने समाज में योगदान भी दिया हैं 1 रामचरित मानस के रचना काल को देखने से ज्ञात होता है की उस समय वर्ण-व्यवस्था के अतिरिक्त भारतीय समाज मुख्यतः दो सम्प्रदायों - वैष्णव और शैव - में विभाजित था। तत्कालीन अन्य वैश्विक धर्मों के मतावलम्बियों में विभाजित समूहों-अनुयायियों की भांति, हिन्दू धर्म के अनुयायी भी दो वर्गों में विभक्त थे और अपने पंथ (वैष्णव-शैव) तथा आराध्य भगवान श्री राम एवं भगवान शंकर को एक-दूसरे से उच्चतर समझने

की वजह से प्रायः एक-दूसरे से विद्वेष-विद्रोह में अपना समय व ऊर्जा व्यर्थ करते थे जिसके फलस्वरूप समाज को लाभ नही होता था। साहित्यकार समाज की दिशा-दशा पर दृष्टि रखता है तथा अपनी लेखनी के माध्यम से कुरीतियों को दूर कर समाज में समन्वय स्थापित करता हैं। रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस के माध्यम से तत्कालीन समाज को इस सांप्रदायिक विभाजन के फलस्वरूप होने वाली हानि से ऊपर उठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। यह पर भगवान के दोनों स्वरूपों भगवान शंकर एवं भगवान श्री राम को एक दूसरे का उपासक बता कर, एक-दूसरे के प्रति सम्मान दिखा कर उनके अवलम्बियों-उपासकों के परस्पर द्वन्द को निर्मूल कर दिया गया था। रामचरित मानस के बालकाण्ड में वर्णित प्रयागराज के मुनि-समागम में ऋषि भरद्वाज अपनी जिज्ञासा की शांति हेतु ऋषि याज्ञवल्क्य के साथ अपने संवाद में भगवान शंकर को भगवान श्री राम का उपासक बताते हुए कहते हैं कि हर कोई अविनाशी भोलेनाथ की उपासना करता हैं। स्वयं भगवान शंकर श्री राम की महिमा के बारे में बताते हैं –

“संतत जपत संभु अविनाशी, सिव भगवान ज्ञान गुन रासी।
सोपि राम महिमा मुनिराया, सिव उपदेश कीन्ह करि दाया।
“सम्भु समय तेहि रामहिं देखा, उपजा हियँ अति हरष विसेषा।
तिन्ह नृपसुतहिं कीन्ह परनामा, कहि सच्चिदानंद परधामा।।

इस दोहा में “जासु कथा कुम्भज ऋषि गाई सोइ” अपने इष्ट देव रघुबीरा के माध्यम से बार-बार शंकर का राम के प्रति भक्ति एवं सम्मान की भावना का उल्लेख किया गया हैं। शैवों के मन से वैष्णवों के प्रति विद्वेष भाव समाप्त करने और दोनो सम्प्रदायों के बीच की खाई को भरने और उनमे परस्पर सौहार्द स्थापित करने के उद्देश्य से किया गया हैं। अत्यावश्यक, सार्थक, सफल प्रयास था ।रामचरित मानस के बालकांड में माता पार्वती को श्री राम जन्म-प्रसंग की कथा सुनाते हुए भगवान शंकर जन्मोत्सव का आनंद देखने के लिए कागभुशुण्डि के साथ मनुष्य रूप में चोरी से अपने अयोध्या विचरण तथा बाल-लीला देखने की चर्चा करते हैं, जिससे उनके मन में भगवान राम के प्रति आदर दिखाई देता हैं 1

यथा –

औरउ एक कहउँ निज चोरी, सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी।
कागभुशुण्डि संग हम दोऊ, मनुज रूप जानइ नहि कोऊ।
परमानन्द प्रेम सुख फूले, वीथिन्ह फिरहि मगन मन भूले।

यहाँ पर यह वर्णन किया गया है कि प्रेम-सम्मान एकांगी नहीं बल्कि विशुद्ध द्विपक्षी है। इसकी एक अति मनोहारी झलक पुष्प वाटिका में मिलती है जब सीताजी शंकर-प्रिया भवानी से अपने लिए एक सुयोग्य वर की प्रार्थना करती हैं-

गयीं भवानी भवन बहोरी, बंदि चरन बोली कर जोरी।
जय जय गिरिवर राज किशोरी, जय महेश मुख चंद चकोरी।

और धनुष यज्ञ के समय जब पिनाक-भंजन हेतु श्री राम की सुकुमार काया और शिव-धनुष की विशालता का अनुमान लगाकर मन में किंचित चिंतित-विचलित होती हैं और माँ भवानी और भगवान भोलेनाथ को याद करती हैं –

मन ही मन मनाव अकुलानी, होहु प्रसन्न महेस भवानी।
करहु सफल आपनि सेवकाई, करि हितु हरहु चाप गरुआई ।

यहाँ पर शंकर और राम अर्थात शैव-वैष्णव समीकरण-एकीकरण मानस का प्रसंग न होकर यत्र-तत्र-सर्वत्र का प्रसंग है। इसका प्रमाण हमें इस तथ्य से मिलता है कि श्री राम-शंकर का परस्पर स्नेह-सम्मान, पूजा-अर्चना बालकांड से प्रारम्भ होकर अयोध्याकांड और लंकाकांड होते हुए उत्तरकांड तक बारहमासी पवित्र सलिला सदृश निरंतर चलती रहती है। यहाँ पर वनगमन-प्रसंग में भी श्रीराम अपने चौदह-वर्षीय वनवास की यात्रा पर अयोध्या से प्रस्थान करते समय विघ्नहर्ता गणेश और माँ भवानी के साथ भगवान शंकर का ही स्मरण करते हैं –

"गणपति गौरि गिरीसु मनाई, चले असीस पाई रघुराई

गंगा जी को पार करने के बाद पुनः शंकर को शीश झुका कर वनगमन करते हैं। कहने का आशय यह है की रामचरित मानस के माध्यम से सत्य के मार्ग पर चलते हुये संपूर्ण विश्व में शांति के मार्ग को अपनाया जा सकता हैं।

1.6 रामचरित्रमानस सप्तम काण्ड परिचय

गोस्वामी तुलसी दास ने रामचरितमानस में सात कांडों का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया हैं । जिसमे सभी पात्रो के चरित्र का उल्लेख किया गया हैं l जो निम्नलिखित हैं।

1. बालकांड - बालकांड में राम के जन्म और बाल्यकाल की कथा का वर्णन किया गया है।रामचरित मानस की मुख्य कथानको को भी दर्शाया गया हैं। राजा दशरथ और रानी कौशल्या के

पुत्र राम का जन्म,अयोध्या में राम का बाल्यकाल और शिक्षा,गुरु वशिष्ठ से राम का शिक्षा ग्रहण, राम, लक्ष्मण, और भरत का माता-पिता के प्रति स्नेह, ब्रह्मा, नारद और अन्य देवताओं का राम के अवतार होने की चर्चा,सीता स्वयंवर: राजा जनक की पुत्री सीता का स्वयंवर और राम द्वारा शिव धनुष तोड़कर विवाह, दशरथ का राम को राजकाज सौंपने का इच्छुक होना और राम का धर्म के लिए वनवास स्वीकार करना, इन सभी विषयों का वर्णन किया गया हैं। बालकांड में राम के जन्म, शिक्षा, सीता स्वयंवर और वनवास के कारणों का वर्णन है।

2. अयोध्याकांड- रामचरित मानस के इस कांड में अयोध्या और राजकाज का चित्रण किया गया हैं। जो इस प्रकार हैं 1 दशरथ का राज्याभिषेक और राम का राजदर्शन होना ,कैकेयी का एक वर मांगना और राम के 14 वर्षों के वनवास का आदेश का वर्णन ,राम, सीता और लक्ष्मण का वनवास के लिए प्रस्थान, अयोध्या में दशरथ का दुःख, और उनके प्राण त्यागने का वर्णन, भरत का राम को बुलाने का प्रयास और रथ पर राम का पग रखना, अयोध्याकांड में राम के वनवास का कारण और अयोध्या में दुःख का चित्रण किया गया हैं।

3. अरण्यकांड मे वर्णित वनवास की घटनाओं का उल्लेख किया गया है, जो जीवन मार्ग को दिखाती हैं। राम, सीता और लक्ष्मण का जंगल में निवास करना, ऋषियों के आश्रम में सत्कार और विद्या का वर्णन, शूर्पणखा द्वारा राम और सीता को कष्ट देना, रावण द्वारा सीता का हरण करना, सीता हरण के बाद राम और लक्ष्मण का रावण की खोज में निकलना, सुग्रीव और हनुमान से परिचय का आरंभ होना, अरण्यकांड में वनवास, शत्रुता और रावण द्वारा सीता हरण का विस्तृत वर्णनकिया गया हैं।

4. किष्किंधाकांड - इस कांड में गोस्वामी तुलसीदास ने राम और हनुमान की मित्रता और सुग्रीव का राज्य प्राप्त करने का संपूर्ण वर्णन किया गया हैं ।राम का सुग्रीव से मिलना, सुग्रीव और वली का युद्ध होना, सुग्रीव को राज्य प्राप्त करना, हनुमान और राम के बीच मित्रता का होना, लंका की ओर खोज की योजना बनाना, इत्यादि का विशेष वर्णन किया गया हैं।

5. सुंदरकांड- रामचरित में सुन्दर काण्ड को रामचरित का हृदय कहा गया हैं 1 यहा पर हनुमान के द्वारा लंका की यात्रा का वर्णन किया गया हैं, हनुमान का लंका की और प्रस्थान करना, सीता का हनुमान को संदेश देना और उसका साहस बढ़ाना, हनुमान द्वारा रावण के दरबार में उपद्रव का होना,

हनुमान का वानर सेना को सूचना देना, सुंदरकांड में हनुमान की वीरता और बुद्धिमत्ता का वर्णन करना इत्यादि का उल्लेख किया गया हैं, जिससे की सम्पूर्ण दोषों का शमन होता हैं।

6. लंकाकांड – अब लंका काण्ड के बारे में बताया जा रहा हैं l इस लंका कांड में राम-रावण युद्ध का वर्णन किया गया हैं। राम द्वारा वानर सेना के साथ लंका पर आक्रमण का होना, रावण और उसके सेनापतियों के साथ युद्ध का होंना, रावण वध और सीता का उद्धार, लंका का विनाश और राम द्वारा धर्म की स्थापना करना, रामचरित मानस के लंकाकांड में धर्म की विजय और अधर्म का विनाश केसे हो सके जिससे एक आदर्श राज्य की स्थापना हो सके का उल्लेख किया गया हैं l

7. उत्तरकांड में गोस्वामी तुलसीदास ने राम के राज्याभिषेक और शासनकाल का वर्णन किया हैं। अयोध्या लौटकर राम का राज्याभिषेक, राजधर्म का पालन और प्रजा की सेवा, सीता की अग्निपरीक्षा और सत्यनिष्ठा की पुष्टि का होना, राम राज्य का आदर्श प्रस्तुत करना, अंत में राम का संसार त्याग और त्रेतायुग का अंत होने का उल्लेख प्राप्त होता हैं । उत्तरकांड में राम का आदर्श शासन और धर्म के पालन का चित्रण भी किया गया हैं। बालकांड में जन्म और बाल्यकाल,अयोध्याकांड में वनवास का कारण, अरण्यकांड में वनवास और सीता हरण, किष्किंधाकांड में मित्रता और लंका योजना, सुंदरकांड में हनुमान की लंका यात्रा, लंकाकांड में युद्ध और रावण वध, उत्तरकांड में राज्याभिषेक और आदर्श शासन की स्थापना का विस्तृत वर्णन गोस्वामी तुलसी दास ने किया हैं।

1.7 रामचरित्र मानस परायण विधि

जब इस धरा पर जीव का जन्म होता हैं तो उस जीव को षोडश संस्कारों से होकर आगे बढ़ना पड़ता हैं। षोडश संस्कारों के माध्यम से जीव कर्मकांड के माध्यम से संस्कारों को सम्पन्न कर जीवन की यात्रा को आगे बढ़ाता हैं। जिससे वह पवित्र होकर पुराणों का वेदों का, रामायण रामचरित मानस जैसे ग्रंथों का कर्मकांड के माध्यम से पारायण पूजन विधि कर सकें। यहां पर विशेष रूप से रामचरित मानस का की पूजा विधि को बताई जा रही हैं जो शास्त्रों के अनुसार शुभ मानी गयी हैं। सर्वप्रथम प्रातः काल ब्रह्म मुहूर्त मैं जागरण कर दिनचर्या के अनुसार स्नानादि कर संध्या पूजन यज्ञ करना चाहिए उसके बाद पूजन स्थल पर जाकर के शुद्ध भूमि का चयन कर उसका परीक्षण करने के पश्चात् भूमि का पूजन तथा दिशा का सही चयन कर पूर्व दिशा मैं पंचागादि पीठ का निर्माण करनें के पश्चात् विशेष रुप से जिसके निमित यह पूजन किया जा रहा हैं भगवान राम तथा जिसमें ईश्वर का वर्णन

किया गया उस अलौकिक ग्रंथ को विधि पूर्वक काष्ठ पीठ पर रामचरित मानस ग्रंथ को रखकर के आसन शुद्धि कर मंडप तथा यंत्र का निर्माण करना चाहिए तत्पश्चात विधिपूर्वक शुभ मुहूर्तानुसार पंचाग पूजन कर , सम्पूर्ण पंचागपीठ देवताओं का आवाहन स्थापन, पूजन,कर नवग्रह पूजन करने के पश्चात् रामचरित मानस ग्रंथ का वैदिक मंत्रों के द्वारा, षोडशोपचार पूजन करना चाहिए। तत्पश्चात् करन्यास, हृदय न्यास, प्राणायाम कर भोग इत्यादि के भगवान राम, हनुमान तथा राम परिवार का पूजन करनें के पश्चात् पाठ का आरम्भ मंगलाचरण से करनें का विधान हैं। जो आगे दिया जा रहा है। उसके बाद विधिवत् पाठ का आरम्भ कर श्रीरामचरितमानसका विधिपूर्वक पाठ करनेवाले महानु भावों को पाठारम्भ के पूर्व श्री तुलसीदास जी, श्री शत्रुघ्न नमस्तुभ्यमिहागच्छ सहप्रियः । पीठस्य पश्चिमे भागे पूजनं स्वीकुरुष्व में मंत्रो के द्वारा पाठ समाप्ति के पश्चात् विधिपूर्वक दशांश यज्ञ कर पूर्णाहुति कर आरती करने का विधान शास्त्रों मैं कहां गया हैं। इसके बाद शांतिपूर्वक रामचरितमानस पाठ का विसर्जन कर शांति करनी चाहिए। इस प्रकार से रामचरित मानस का पूजन विधान एवं विधि द्वारा पारायण करनें से सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण होता हैं। श्री वाल्मीकि, श्री शिवजी तथा श्री हनुमान्जी का आवाहन, पूजन करने के पश्चात् तीनों भाइयों सहित श्री सीताराम जी का आवाहन, षोडशोपचार पूजन और ध्यान करना चाहिये। तदनन्तर पाठ का आरम्भ करना चाहिये जो आगे दिया जा रहा हैं।

आवाहनमन्त्रः

पीठस्य तुलसीक नमस्तुभ्यमिहागच्छ शुचिव्रत ॥

नैर्ऋत्य उपविश्येदं पूजनं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ तुलसीदासाय नमः।

श्रीवाल्मीक नमस्तुभ्यमिहागच्छ शुभप्रद ।

उत्तरपूर्वयोर्मध्ये तिष्ठ गृह्णीष्व मेऽर्चनम् ॥ ॐ वाल्मीकाय नमः।

गौरीपते नमस्तुभ्यमिहागच्छ महेश्वर।

पूर्वदक्षिणयोर्मध्ये तिष्ठ पूजां गृहाण मे ॥ ॐ गौरीपतये नमः ।

श्रीलक्ष्मण नमस्तुभ्यमिहागच्छ सहप्रियः ।

याम्यभागे समातिष्ठ पूजनं संगृहाण मे ॥ॐ श्रीसपत्नीकाय लक्ष्मणाय नमः।

श्रीशत्रुघ्नमस्तुभ्यमिहागच्छ सहप्रिय:

पीठस्य पचिमे भागे पूजनं स्वीकुरुष्व मेंl ॐ श्रीसपत्नीकाय शत्रुद्राय नमः।

श्रीधरत नमस्तुभ्यमिहागच्छ सहद्रियः।

पीठकस्थीत्तरे भागे तिष्ठ पूजां गृहाण मेंl ॐ श्रीसपत्नीकाय भरताय नमः।

श्रीहनुमन्नमस्तुभ्यमिहागच्छ कृपानिधे

पूर्वभागे समातिष्ठ पूजनं स्वीकुरु प्रभोl ॐ हनुमते नमः।

अथ प्रधानपूजा व कर्तव्या विधिपूर्वकम्।

पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा तु ध्यानं कुर्यात्परस्य च ॥

रक्ताम्भोजदलाभिरामनयनं पीताम्बरालङ्कृतं

श्यामाङ्गं द्विभुजं प्रसन्नवदनं श्री सीतया शोभितम् ।

वन्दे विष्णुशिवादिसेव्यमनिशं भक्तेष्टसिद्धिप्रदम् ॥

कारुण्यामृतसागरं प्रियगणैर्भात्रादिभिर्भावितं

आगच्छ जानकीनाथ जानक्या सह राघव ।

गृहाण मम पूजां च वायुपुत्रादिभिर्युतः॥

इत्यावाहनम्

सुवर्णरचितं राम दिव्यास्तरणशोभितम् ।

आसनं हि मया दत्तं गृहाण मणिचित्रितम् ॥

इति षोडशोपचारैः पूजयेत्

ॐ अस्य श्रीमन्यानसरामायणश्रीरामचरितस्य श्री शिवकाक भुशुण्डि याज्ञवल्क्य गोस्वामितुलसीदासा ऋषयः श्रीसीतारामो देवता श्रीरामनाम बीजं भवरोगहरी भक्तिः शक्तिः मम नियन्त्रिताशेषविघ्नतया श्री सीतारामप्रीतिपूर्वकसकलमनोरथसिद्धयर्थं पाठे विनियोगः।

अथ आचमनम्

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।श्रीरामचन्द्राय श्रीरामभद्राय नमः । नमः । इति मन्त्रत्रितयेन आचमनं कुर्यात्। श्रीयुगलबीजमन्त्रेण प्राणायामं कुर्यात् ।

अथ करन्यासः

जग मंगल गुन ग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के । अङ्गुष्ठाभ्यां नमः

राम राम कहि जे जमुहाहीं । तिन्हहि न पापपुंज समुहाहीं ॥ तर्जनीभ्यां नमः।

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका मध्यमाभ्यां नमः।

उमा दास जोषित की नाई। सबहि नचावत राम् गोसाई ॥ अनामिकाभ्यां नमः।

सन्मुख होड़ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहि तबहीं ॥ कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

मामभिरक्षय रघुकूलनायक। धुत बर चाप रुचिर कर सायक ॥ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

अथ हृदयादिन्यासः

जग मंगल गुन ग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के ॥ हृदयाय नमः।

राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहि न पापपुंज समुहाहीं ॥ शिरसे स्वाहा।

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका ॥शिखायै वषट् ।

उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत रामु गोसाई ॥कवचाय हुम्।

सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं ॥ नेत्राभ्यां वौषट् ।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक । धृत बर चाप रुचिर कर **सायक ॥अस्त्राय फट् ।**

अथ ध्यानम्

मामवलोकय पंकजलोचन। कृपा बिलोकनि सोच बिमोचन ॥

नील तामरस स्याम काम अरि। हृदय कंज मकरंद मधुप हरि ॥

जातुधान बरूथ बल भंजन। मुनि सज्जन रंजन अघ गंजन ॥

भूसुर ससि नव बूंद बलाहक। असरन सरन दीन जन गाहक ॥

भुजबल विपुल भार महि खंडित। खर दूषन बिराध बध पंडित ॥

रावनारि सुखरूप भूपबर। जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर ॥

सुजस पुरान बिदित समागम ॥ निगमागम। गावत सुर मुनि संत

कारुनीक व्यलीक मद खंडन। सब बिधि कुसल कोसला मंडन ॥

कलि मल मथन नाम ममताहन। तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन ॥

रामचरितमानस में करन्यास, हृदयादिन्यासः, ध्यान करने के बाद पाठ का आरम्भ करना चाहिए।

1.8 रामचरित्र मानस का षोडशोपचार पूजन विधि

नित्य स्नान के बाद ,गणेश जी का षोडशो पचार के द्वारा पूजन कर रामचरित मानस ग्रन्थ पूजन के अनन्तर भगवान राम परिवार का पूजन विधिपूर्वक करना चाहिए जो आगे दिया जा रहा हैं।

पाद्यं

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि . ॥

आचमन लेकर भगवान के पेरो में जल अर्पण करे

अर्घ्यं –

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः । ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥

हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि अर्घ्य का जल छोड़े।)

आचमनं

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचमनके लिये जल समर्पित करे

स्नानीय जलं

ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।

पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

वस्त्र

ॐ युवा सुवासा परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः ।

तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो 3 मनसा देवयन्तः ।

आभूषण

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम् ।

पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

अलङ्करणार्थ आभूषणानि समर्पयामि

चन्दन-

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

पुष्प-

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते l

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी: ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि

धूपम्

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः ।

देवानामसि वह्नितम : सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दीपम्

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योंतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वच ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ज्योतिःसूर्य: सूर्यो ज्योति: स्वाहा ॥

नैवेद्यम्

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण घेरा लगाकर भगवान को नेवेद्य का भोग लगाये।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्॥

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

आचमनं

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी।

ताम्बूल

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तो ऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शब्द्धविः ॥ .

एलालवङ्गपूगीफलयुतं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची, लवंग तथा पूगीफलयुक्त ताम्बूल अर्पित करे।

स्तवपाठ

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

तर्पणं – भगवान की स्तुति के बाद जल के द्वारा तर्पण करना चाहिये ।

नमस्कार:

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।

साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

नमस्कारान् समर्पयामि ।

कलश-स्थापन पूजन

हमारे सनातन संस्कृति में जब भी कोई नवीन कार्य होते है तो उस कार्य से पहले मंगलाचरण के साथ साथ गणेश पूजन के बाद कलश स्थापन के साथ कलश(वरुण) भगवान का षोडशो पचार से पूजन किया जाता है। क्योंकि वरुण कलश के उर्द्वभाग में श्री फल रखा जाता है। उस श्रीफल में माँ लक्ष्मी का वास होता है। नवीन कार्य में माँ लक्ष्मी का प्रवेश अत्यंत शुभदायक होता है। इसलिए सर्व प्रथम

कलश में रोली से स्वस्तिक का चिह्न बनाकर गले में तीन धागावा तली मौली लपेटे और कलश को एक ओर रख लेना चाहिए। कलश स्थापित कि जानेवाली भूमि अथवा पाटे पर कुङ्कम या रोली से अष्टदल कमल बनाकर निम्न मन्त्रसे भूमिका का स्पर्श करे

भूमिका स्पर्श –

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धत्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दुःगुं ह पृथिवीं मा हि: गुं सीः॥

मन्त्र पढ़कर पूजित भूमि पर सप्तधान्य' अथवा गेहूँ, चावल या जौ को छोडे

धान्यप्रक्षेप –

ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वो दानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रति गृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ॥

इस धान्य पर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर कलशकी स्थापना करे-

कलश-स्थापन –

ॐ आजिघ्र कलशं मह्यात्वा विशन्त्विन्दवः। पुनरूर्जा निवर्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः ॥

कलशमें जल –

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थोवरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥

कलशमें चन्दन –

ॐ त्वां गन्धर्वा अखनस्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः। त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

कलशमें सर्वोषधि' –

ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा। मनै नु बभ्रूणामहः शतं धामानि सप्त च ॥ (सर्वोषधि छोड़ दे।)

कलशमें दूर्वा –

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्त्रेण शतेन च॥

कलशपर पञ्चपल्लव –

ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता। गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्॥

कलशमें पवित्री –

ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्॥

कलश में सप्तमृत्तिका को डाले

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः।

कलशमें सुपारी –

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः। बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व गुं हसः॥

कलश में पञ्चरत्न

ॐ परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्।

दधद्रत्नानि दाशुषे।

कलशमें द्रव्य –

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकआसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर कलशको वस्त्रसे अलंकृत करे-

कलश पर वस्त्र धारण -

ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्त्वः। वासो अग्ने विश्वरूपः गुं सं व्ययस्व विभावसो॥

कलशपर पूर्णपात्र –

ॐ पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरा पत। वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज शतक्रतो ॥

चावल से भरे पूर्णपात्र को कलश पर स्थापित करे और उस पर लाल कपड़ा लपेटे हुए नारियलको निम्न मन्त्र पढ़कर अर्पण करे।

कलश पर नारियल –

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ।

बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वः हसः ॥

अब कलशमें देवी-देवताओंका आवाहन करना चाहिये। सबसे पहले हाथ में अक्षत और पुष्प लेकर निम्नलिखित मन्त्रसे वरुणका आवाहन करे-

कलशमें वरुणका ध्यान और आवाहन -

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणे ह बोध्युरुशः स मा न आयुः प्रमोषीः ॥ अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो वरुण। इहागच्छ, इह तिष्ठ, स्थापयामि, पूजयामि, मम पूजां गृहाण। 'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः' कहकर अक्षत-पुष्प कलश पर छोड़ दे।

फिर हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर चारों वेद एवं अन्य देवी-देवताओंका आवाहन करना चाहिए।

कलशमें देवी-देवताओं का आवाहन-

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।

मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥

अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।

अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ॥

आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः ।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥

इस तरह जलाधिपति वरुणदेव तथा वेदों, तीर्थों, नदों, नदियों, सागरों, देवियों एवं देवताओं के आवाहन के बाद हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर निम्नलिखित मन्त्रसे कलशकी प्रतिष्ठा करे-

प्रतिष्ठा –

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञःगुं समिमं दधातु विश्वे देवास इह मादयन्तामो ३ म्प्रतिष्ठ ॥

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदो भव।

पाद्यं

गङ्गोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् ।

पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं मे प्रतिगृह्यताम् ॥

पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (आचमन जल छोड़े।)

अर्घ्यं

गङ्गोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् ।

गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसन्नो वरदो भव ॥

हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि अर्घ्य का जल छोड़े

आचमनं

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम् ।

तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वर ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचमनके लिये जल समर्पित करे ।)

स्नानीय जलं

मन्दाकिन्यास्तु यद् वारि सर्वपापहरं शुभम् ।

तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

वस्त्र-

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम् ।

देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।

आभूषणं -

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम् ।

पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

अलङ्करणार्थ आभूषणानि समर्पयामि

गन्धं

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

पुष्पं

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।

मयाहतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

धूपं

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आत्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

दीपं

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

नैवेद्यं

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।

आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

आचमनं

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम् ।

तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वर ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचमनके लिये जल समर्पित करे ।

ताम्बूलं

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

प्रार्थना

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ।

उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्॥

त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।

त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥

शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।

आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥

त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।

त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव।

सांनिध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥

नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय ।

सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥

'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः1

सर्वेवरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि । (इस ना इस मंत्र के द्वारा नमस्कार पूर्वक भगवान को पुष्प पुष्प समर्पित करे1

अब हाथमें जल लेकर निम्नलिखित वाक्यका उच्चारण कर जल उनके पास छोड़ते हुए समस्त पूजन-कर्म भगवान् वरुणदेव को अर्पित कर राम जी को अर्पित कीजिये1

अनेन कृतेन पूजनेन कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम

1.9 सारांश

आप सभी ने इस इकाई के माध्यम से रामचरितमानस पूजन विधि के बारे मैं विस्तार पूर्वक अध्ययन किया होगा की आध्यात्मिक की खोज से क्या क्या लाभ एवं उन्नति की प्राप्ति होती हैं। उसी

अध्यात्म की राह पर चलनें के लिए भारतीय संस्कृति मैं वेदों के ज्ञान के बाद पुराणों, स्मृतियों, उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रंथों, साहित्य, काव्य, महाकाव्य, इत्यादि जितनी भी भारतीय ज्ञान परम्परा के विषय हैं ये जीवन को सफल बनाने के साथ साथ भौतिकतावादी व्यक्ति को भी भी शांति प्रदान करता हैं। उन ग्रंथों मैं से रामचरितमानस नामक ग्रंथ जो गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा अवधि भाषा, दोहा, छंद, तथा चौपायों से लिखित ग्रंथ दुनिया का सबसे प्राचीन महाकाव्य के नाम से भी जाना जाता हैं। जिसके अध्ययन एवं अध्यापन से सभी प्रकार के कष्टों का शमन तथा सुखों की प्राप्ति होती रहती हैं। रामचरित मानस ग्रंथ मैं गोस्वामी जी ने सभी पात्रों का उल्लेख सचरित्र निरुपण करते हुए उनसे होने वाले कार्यों से सत्मार्ग पर कैसे जाया जाय उन सभी का उल्लेख रामचरितमानस ग्रंथ मै या गया हैं। इस ग्रंथ मैं गोस्वामी तुलसीदास जी ने भगवान राम के चरित्र पर विशेषताओं को भी प्रकट किया हैं। कि भगवान राम बाल्यकाल से लेकर कैसे संघर्ष करते हुए सत्मार्ग को प्राप्त किया होगा। रामचरित मानस ग्रंथ में सात कांडों मैं अलग अलग विश्रामों के वर्णन के साथ साथ भगवान राम के चरित्र पर अधिक बल दिया गया हैं। क्योंकि इस पात्र के नायक के रुप मैं भगवान् राम तथा नायिका के रुप मैं माता सीता का भी विस्तृत उल्लेख किया हैं कि उन्होंने किस प्रकार पतिव्रता स्त्री के रूप मैं विधिवत नियमों का पालन किया है। जो समाज को बार बार प्रेरित कर समाज को आगै बढ़ाता हैं। इस रामचरितमानस नामक ग्रंथ मैं गोस्वामी तुलसीदास जी ने, बालकाण्ड मैं भगवान राम के सभी बाल्य लीलाओं का वर्णन किया हैं। अयोध्या कांड मैं राज्याभिषेक होकर अनेक दायित्वों का निर्वहन करता है। सुंदरकांड को रामचरितमानस का हृदय कहां गया हें । बालकाण्ड से लेकर अयोध्या कांड तक सभी प्रकारके कांडो मैं रामचरितमानस के मर्म को बताया गया हों। रामचरित मानस का स्वरूप, रामचरितमानस का स्वरूप सात कांडों का परिचय, रामचरितमानस पारायण विधि से लेकर रामचरितमानस पूजन विधान का उल्लेख किया गया हैं। जो सत्मार्ग पर चलनें की प्रेरणा हमेशा से देती है।

1.10 पारिभाषिक शब्दावली

1. सत्मार्ग सही मार्ग का अनुसरण
2. मर्यादा अनुशासन मैं रहकर
3. रामचरित भगवान राम का स्वभाव एवं चरित्र
4. सुंदरकांड जिस मैं हनुमान जी का वर्णन हैं
5. अरण्य जंगल

6. पारायण विधिवत् पाठ का पारायण
7. पापपुंज पाप का अधिक होना
8. पय दूध
9. नवनीत घी के लिए कहा गया है
10. लक्ष्मण जो लक्ष्य का भेदन करें

1.11 अभ्यास प्रश्न

1. रामचरितमानस मानस के कर्ता हैं
2. रामचरितमानस की रचना कब हुई
3. बालकाण्ड मैं किसका वर्णन किया गया हैं।
4. वाल्मीकि रामायण को आधार बनाकर क्या लिखा गया 1
5. वनवास का वर्णन हैं। अयोध्या काण्ड में
6. सीताहरण कोन करता हैं।
7. शूर्पणखा की कथा मिलती हैं।
8. राम और हनुमान जी का परिचय हुआ किस कांड मैं हैं।
9. सुंदर काण्ड का क्रम क्या हैं रामचरितमानस मैं
10. हनुमान लंका की ओर प्रवेश करते हैं किस कांड मैं हैं।
11. राम का राज्याभिषेक कब हुआ किस कांड मैं वर्णन किया गया है ।

1.12 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर

1. गौस्वामी तुलसीदास
2. 16 शताब्दि मैं
3. भगवान राम के बाल्यकाल का
4. रामचरितमानस
5. अयोध्या काण्ड में
6. रावण
7. अरण्यकांड मैं
8. किष्किन्धाकाण्ड मैं
9. पांचवां कांड हैं

10. सुंदर काण्ड में
11. उतरकांड मैं

1.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. संस्कार एवं शान्ति रहस्य

2. शांति विधानं

3. नित्य कर्म पूजा प्रकाश

4. रामचरित मानस

6. वाल्मीकि रामायण

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. रामचरितमानस ग्रंथ का वैशिष्ट्य बताइए।
2. सभी सातों कांडों का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
3. रामचरितमानस की पूजा विधि, तथा पाठ पारायण का विस्तृत वर्णन कीजिए
4. गोस्वामी तुलसीदास जी का परिचय दीजिए
5. वर्तमान परिप्रेक्ष्य मैं रामचरितमानस के महत्व पर प्रकाश डालिए।

इकाई - 2 दुर्गासप्तशती पाठ विधि

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मार्कंडेय पुराण में दुर्गा सप्तशती का स्वरुप
2.4 देवीभागवत में दुर्गा पाठ विधि का स्वरुप
2.5 दुर्गा सप्तशती ,पाठ विधि, एवं पूजन विधान
2.6 दुर्गा सप्तशती में त्रयोदश अध्याय का परिचय एवं स्वरुप
2.7 दुर्गा कवच, अर्गला स्तोत्र,कीलक,देव्याथर्वशीर्ष, पाठ फल विचार
2.8 नवार्ण विधि,सिद्धकुंजिका विचार
2.9 सारांश
2.10 पारिभाषिक शब्दावली
2.11 अभ्यास प्रश्न
2.12 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर
2.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
2.14 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! प्रस्तुत पाठ्यक्रम बी.ए.के.ए (एन) 350 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है? इस इकाई का शीर्षक "दुर्गासप्तशती पाठ विधि"हैं। इस इकाई मैं हम सभी शास्त्रों के अनुसार विधिपूर्वक दुर्गासप्तशती पाठविधि के बारे मैं जानने का प्रयास करेंगे? की दुर्गासप्तशती जिसमें भगवती के स्वरूप का उल्लेख महर्षि वेदव्यास जी ने पुराणों मैं लिखा। यहां यह भी जानने का प्रयास हम करते हैं कि दुर्गासप्तशती ग्रथ का परिचय तथा इस ग्रंथ का वैशिष्ट्य क्या हैं? कहां से दुर्गासप्तशती पाठ विधि या पाठ को लिया गया हैं?इस बारे मैं हमारे प्राचीन ऋषियों ने हजारों वर्ष पूर्व गहन अध्ययन किया। सनातन संस्कृति मैं प्रमाण के रुप मैं वेदों की बात की जाती हैं, उसके बाद पुराणों का नं आता हैं, अष्टादश पुराणों की रचना वेद व्यास द्वारा की गयी हैं। जिसमें मार्कंडेय पुराण भी हैं 1 मार्कंडेय पुराण 9000 श्लोकों तथा 137 अध्याय मैं विभक्त हैं,जिसमैं देवी माहत्म्य का भी वर्णन किया गया हैं, मार्कंडेय पुराण के 81 अध्याय से लेकर 93 अध्याय तक देवी के महात्म्य का उल्लेख किया गया हैं।जिसमें 700 श्लोक,और त्रयोदश अध्याय हैं जिसे दुर्गासप्तशती के नाम से जाना जाता हैं बाद मैं दुर्गासप्तशती को ग्रंथ के नाम से भी जाना जाने लगा । यहां पर यह प्रश्न खड़ा होता हैं कि श्री दुर्गासप्तशती की पाठ विधि क्या हैं? इस ग्रंथ मैं किसका। विशेष रुप से वर्णन किया गया हैं? दुर्गासप्तशती के पाठ करनें से किस फल की प्राप्ति अधिक होती हैं?इन सभी विषयों का उल्लेख इस इकाई मै किया गया हैं, जिसका अध्ययन आप आगे करेंगे जो हमारे जीवन के लिए सार्थक होगा।

2.2 उद्देश्य

- ❖ दुर्गासप्तशती के स्वरूप को जान सकेंगें।
- ❖ सप्तशती पाठविधि का विस्तृत अध्ययन कर पायेगें।
- ❖ कवच, अर्गला, कीलक, पाठ से अवगत हो सकैगें।
- ❖ नवार्ण विधि को समझनें का प्रयास करेंगें ।
- ❖ पाठ विधि से होनें वाले लाभों को समझ सकेंगें।

2.3 मार्कंडेय पुराण में दुर्गा सप्तशती का स्वरुप

प्रायः देखने मैं आता हैं कि भारतीय संस्कृति के आधार पर ही व्यक्ति के जीवन मैं बदलाव आता हैं। जिसे भारतीय ज्ञान परम्परा भी कहा जा सकता हैं। इस परंपरा के द्वारा ही सुख एवं समृद्धि की प्राप्ति संभव हैं। यहां पर भारतीय संस्कृति के ग्रंथो के माध्यम से षोडश संस्कार के द्वारा मनुष्य के सारे कार्य संपन्न किये जाते हैं। जो कि आवश्यक हैं। वो कार्य कैसे सिद्ध होंगे उसके लिए भारतीय संस्कृति के प्रमाण के रुप मैं वेदों का अनुसरण करनें के पश्चात् पुराणों का अनुसरण आवश्यकता हैं। महर्षि वेदव्यास जी ने अष्टादश पुराणों की रचनाएं व्यास स्थान पर बैठकर संपन्न किया उनमें से एक पुराण मार्कंडेय पुराण भी हैं, जिसमें ऋषि मार्कण्डेय का वर्णन तथा देवी के चरित्रों का वर्णन किया गया हैं, जिसे दुर्गासप्तशती के नाम से जाना जाता हैं। मार्कंडेय पुराण के 81 अध्याय से लेकर 93 अध्याय तक मां भगवती के चरित्रों का माँ दुर्गा के चरित्रों का वर्णन 700 श्लोकों तथा 13 अध्याय मैं किया गया हैं। 700 श्लोकों के होने से इस ग्रथं का नाम दुर्गा सप्तशती ग्रंथ नाम रखा गया जो मार्कंडेय पुराण से उद्धृत हैं। इस ग्रंथ मैं पाठ विधि से लेकर न्यास तक विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता हैं । हमेशा नित्य पाठ के लिए दुर्गासप्तशती के ग्रंथ का पूजन कर संकल्प लेकर पाठ करतें हैं, जिससे सभी लोगों की मनोकामना पूर्ण हो सके यहां पर मुख्य विषय के रुप मैं दुर्गा सप्तशती कै बारे मैं विस्तार पूर्वक कहा गया हैं। इस ग्रंथ के स्वरूप के बारे मैं जानतै हैं कि यह ग्रंथ शुद्ध रुप से संशोधित दिखाई देती हैं जिससे इस ग्रंथ की महत्ता बढ़ जाती हैं। मार्कंडेय पुराण 9000 श्लोकों तथा 137 अध्याय मैं विभक्त हैं,जिसमैं देवी माहत्म्य का भी वर्णन किया गया हैं, मार्कंडेय पुराण के 81 अध्याय से लेकर 93 अध्याय तक देवी के महात्म्य का उल्लेख किया गया हैं।जिसमें 700 श्लोक,और त्रयोदश अध्याय हैं। जो दुर्गासप्तशती के नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थ बन गया।

2.4 देवीभागवत में दुर्गा पाठ विधि का स्वरुप

श्रीमद्देवीभागवत नामक पुराण सभी पुराणों में अतिश्रेष्ठ पुराण है, जिसमें तीनों लोकों की जननी साक्षात् सनातनी भगवती की महिमा का वर्णन किया गया हैं। जो श्रीमद्देवीभागवत के आधे श्लोक या चौथाई श्लोक को भी प्रतिदिन सुनता या पढ़ता है, वह परम गति को प्राप्त होता है। शास्त्रों के द्वारा इन सभी विषयों का ज्ञान संभव हैं। श्री मद्देवीभागवत में दुर्गा नवाहन की विधि का वर्णन भी इस ग्रन्थ में किया गया हैं। सनातन संस्कृति में नवरात्रों का उल्लेख मिलता हैं, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, कार्तिक, मार्गशीर्ष, माघ एवं फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तिथि तक इसके अनुष्ठान के विधान का वर्णन किया गया हैं जिसे इसे 'नवाहयज्ञ' के नाम से जाना जाता हैं। प्रतिपद् को प्रातः उठकर हृदय या शिरोदेशमें उज्वल पद्म के अन्तर्गत गुरु का ध्यान करना चाहिये। फिर शिखा के बीच इस

रूप में देवी का ध्यान करना चाहिये तत्पश्चात् किसी नदी, तड़ाग, सरोवर या पहाड़ी झील, झरने आदि में स्नानकर नित्यकृत्य करना चाहिये। फिर भूतशुद्धि, मातृकान्यास एवं हल्लेखा-मातृकान्यास करना चाहिये। इसकी विधि यह है कि मूलाधारमें 'ह' कार, हृदयमें 'र'कार, भ्रमध्य में 'ई'कार और मस्तक में 'हीं 'कार का न्यास करे। फिर उपयुक्त ब्राह्मणों का वरणकर वेदी पर सिंहासन रखकर उस पर क्षौम वस्त्र युक्त चार हाथों वाली जगदम्बिका की प्रतिमा स्थापित करे। उन्हें रत्नाभूषण तथा हारादि से विभूषित कर चार हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कराये या अठारह भुजावाली प्रतिमा स्थापित करे। प्रतिमा के अभाव में' नवार्ण मन्त्र' का यन्त्र रखकर पंचपल्लवादि से एक कलश वेद-मन्त्रों से संस्कृत कर श्रेष्ठ तीर्थ के जल से भरकर पास ही स्थापित करने के तत्पश्चात् पंचांग पूजन, गणपति पूजन, बटुक, क्षेत्रपाल, योगिनी, मातृका, नवग्रह, तुलसी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, लोकपाल, दिक्पाल आदि की पूजाकर षोडशोपचार तथा श्रीसूक्त या नवार्णमन्त्र माँ भगवती महाशक्ति की पूजा करना चाहिए। यह पर यह ध्यान रखना है की देवी-पूजन में चन्दन, अगर या अष्टगन्ध तथा अशोक, चम्पा, करवीर, मालती, मन्दार आदि के पुष्पों, बिल्व तथा तुलसी आदि का प्रयोग श्रेष्ठ माना जाता हैं। देवी को फलों में नारियल, नारंगी, अनार, कदली,तथा आम्र फल प्रिय हैं। तत्पश्चात् १६ षोडशोपचार से माँ भगवती का पूजन तथा दुर्गासप्तशती ग्रन्थ का पूजन करना अतिशुभ माना जाता हैं। पूजन करने के बाद अन्त में माँ भगवती की स्तुति करनी चाहिये।

कात्यायनि महामाये भवानि भुवनेश्वरि ॥ संसारसागरे मग्नं मामुद्धर कृपामये।

ब्रह्मविष्णुशिवाराध्ये प्रसीद जगदम्बिके ॥ मनोऽभिलषितं देवि वरं देहि नमोऽस्तु ते।

(श्रीमद्देवीभा० माहात्म्य ५ ३१-३३)

हे कात्यायनि हे महामाये। हे भुवनेश्वरि हे कृपामये भवानि। मैं संसार सागर में डूब रहा हूँ, मेरा उद्धार कीजिये तथा हे ब्रह्मा, विष्णु, महेश से पूजनीया माता जगदम्बिके। मेरे ऊपर प्रसन्न होइये। हे देवि आप मेरा कल्याण कीजिये। "चन्दनागुरुकर्पूरचौरकुङ्कुमरीचनाः। जटामांसी कपियुता शक्तेर्गन्धाष्टकं विदुः" अर्थात्, चन्दन, अगुरु, कपूर कृष्णशुंठी, कुंकुम केसर, गोरोचन, जटामांसी तथा गांटना मिलाकर शक्ति का अष्टगन्ध बनाकर ग्रन्थ पर तिलक लगाकर पाठ आरम्भ करने के बाद फिर अध्याय के बीच में नहीं रुकना चाहिये। रुक जाने पर पुनः उसी अध्याय को आरम्भ से पढ़ना चाहिये। मध्यम स्व रसे श्रद्धापूर्वक धीरे- धीरे स्पष्ट पाठ करना अशुद्ध या अस्पष्ट उच्चारण करना, बिना अर्थ समझे ही पाठ करना ये पाठ के दोष होते हैं। पाठ में यथा साध्य इन दोषों से बचे रहना

चाहिये। क्रोध, मद, बाधक होते हैं। मन की पवित्रता, शरीर की पवित्रता अधिक सहायक होती है। मध्यान के बाद एक घड़ी विश्राम कर पुनःपाठ आरम्भ करना चाहिये ।चंडीपाठ के लिए शुभ मुहुर्त सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, हस्त, अनुराधा, मूल तथा श्रवण नक्षत्र शुभ हैं। बृहस्पति ग्रह जिस नक्षत्र में हों वहाँ से चौथे में लक्ष्मीप्राप्ति, पुनः ९ में सिद्धि, की प्राप्ति होती हैं। अनुष्ठान के समय ब्रह्मचर्य, भूमिशयन, सत्यवचन तथा इन्द्रिय संयम का पालन करना आवश्यक हैं। प्रतिदिन कुमारी पूजन करना चाहिये। अन्तिम दिन गायत्रीसहस्रनाम का पाठ सप्तशती के मन्त्रों गायत्री या नवार्णमन्त्र से यज्ञ करना चाहिए।

श्री दुर्गासप्तशती पारायण एवं अनुष्ठान-विधि

जो लोग विधि-विधान पूर्वक श्री दुर्गासप्तशती पारायण पाठ करते है, उनके लिये पूजन आदि की विस्तृत विधि और क्रम आगे दिया जा रहा है। सर्वप्रथम स्नान-सन्ध्योपासनादि कृत्य से निवृत्त होकर पवित्र आसन पर सपत्नीक पूर्वाभिमुख बैठ जाय और पत्नी को अपने दाहिनी ओर बैठाकर चन्दन आदि से तिलक कर दोनों हाथों की अनामिका अँगुली में पवित्री धारण कर आचमन, प्राणायाम कर शिखा में ग्रन्थि लगाकर दीप प्रज्वलित कर संकल्प करना चाहिए 1 विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे विष्णुपर्वे श्रीश्वेतवाराहनाम्नि प्रथमकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगस्य प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भूलोंके भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तकदेशे क्षेत्रे (यदि काशी हो तो अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने महाश्मशाने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे बोले) बौद्धावतारे नाम्नि संवत्सरे श्रीसूर्य अयने ऋतु महामाङ्गल्यप्रदे मासोत्तमे मासे पक्षे तिथौ वासरे नक्षत्रे योगे करणे श्रीसूर्ये राशिस्थिते चन्द्रे राशिस्थिते देवगुरों शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथो गोत्रः शर्मा/वर्मा गुप्तः सपत्नीकोऽहं अतीतानेकजन्मसञ्चिताखिल-

दुष्कृतनिवृत्तिपुरस्सरैहिकामुष्मिकाध्यात्मिकादितापत्रयोपशमनपूर्वककायिकादित्रिविधपापानां समूलोन्मूल-नार्थ मनोभिलषितफलप्राप्तिपूर्वक श्रीपराम्बाप्रीत्या-विर्भावकामः गोत्रोत्पन्न शर्माब्राह्मणवदनार-विन्दात् अनेकश्रोतृश्रवणपूर्वके श्रीदुर्गासप्तशती नवाह्नविधिना श्रोष्यामि। तदङ्गतया विहितं स्वस्ति-पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्य-मन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धमाचार्यादि-वरणानि च करिष्ये। तत्रादौ प्रारीप्सितसम्पूर्तिप्रति-बन्धकविघ्नव्यूहध्वंसकामः गणेशाम्विकयोः यथोपचरिः पूजनमहं करिष्ये। संकल्पजल छोड़ दे

तदनन्तर संक्षेप में स्वस्तिवाचन, गणपतिपूजन, कलशस्थापन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजष तथा नान्दीमुखश्राद्ध करे। इसके बाद आचार्य आदिका वरण करे। उसके बाद सर्वतोभद्रमण्डल पर कलश स्थापित कर पराम्बाभगवती का पोडशोपचारपूजन करे। इसके बाद सूर्यादि नवग्रहों का स्थापन-पूजन,असंख्यात रुद्रकलशकी स्थापना और पूजा, कुमारीपूजन, बटुकपूजन, पुस्तकपूजन आदि सम्पन्न कर पाठ प्रारम्भ करना चाहिये। हाथ में कुशाक्षत, जल, वरण द्रव्य एवं वरणसामग्री लेकर सर्वप्रथम आचार्यके वरण का संकल्प करे-ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगणगुणविशेषण-विशिष्टायां शुभपुण्यतिथी गोत्रः शर्मा वर्मा/गुप्तोऽहं मम सर्वविधपापक्षयद्वारा पूर्वोक्त-संकल्पितकार्यसिद्धयचं श्रीजगदम्बाप्रीत्यथञ्च श्रीम-देवीभागवतनवाह्नकथाश्रवणार्थ गोत्रं शर्माणं नवाहकथाश्रवयितारं ब्राहाणं एभिर्वरणद्रव्यैः भवन्तमहं वृणे। संकल्पजल छोड़ दे और वरणसामग्री आचार्यको प्रदान करे।आचार्य बोले- ॐ वृतोऽस्मि । अस्मिन् कर्मणि ये विप्राः वृता गुरुमुखादयः । सावधानाः प्रकुर्वन्तु स्वं स्वं कर्म यचोदितम् ॥ अस्य यागस्य निष्पत्ती भवन्तोऽभ्यर्थिता मया। सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं कर्मदं विधिपूर्वकम् ॥ तदनन्तर दिग्रक्षण, पंचगव्यप्रोक्षण करके सर्वतोभद्रमण्डलमें देवताओंका आवाहन पूजन करे। कलशके ऊपर देवी की प्रतिमा का स्थापन सर्वतोभद्रमण्डल के मध्य में प्रधान कलश की स्थापना कर कलश के ऊपर अग्न्युत्तारणपूर्वक स्वर्णनिर्मित देवीकी प्रतिमा स्थापित कर प्रतिमा की प्रतिष्ठा कर ले और श्रीसूक्त से षोडशोपचारपूजन कर प्रतिमा के ऊपर पंचरंगा वितान बाँधकर सपत्नीक यजमान श्रीभगवती के समीप में बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन की सामग्री स्थापित करे। तत्त्वशुद्धि या शरीरशुधि के लिये से आचमन कनने का विधान हैं।

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

प्राणायाम- पूरक-कुम्भक रेचक के क्रम से प्राणायाम कर पवित्रीकरण निम्न मन्त्र से अपने ऊपर तथा पूजन सामग्री पर जल का प्रोक्षण करे।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु। ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु । ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु।

आसन-पवित्रीकरण पहले विधि पूर्वक विनियोग करे-

पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दःकूर्मो देवता आसनपवित्रकरणे विनियोगः।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥

शिखाबन्धन निम्न मन्त्रसे शिखाका स्पर्श करे-

ॐ ऊर्ध्वकेशि विरूपाक्षि मांसशोणितभोजने ।

तिष्ठ देवि शिखामध्ये चामुण्डे बापराजिते ॥

भैरव ध्यान -

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम। नमस्तुभ्यं अनुज्ञां दातुमर्हसि भैरवा

दुर्गापूजन का संकल्प

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य यथोक्तगुण विशिष्टतिथ्यादी गोत्रः शर्मा वर्मा गुप्तो ऽहम् अस्मिन् श्रीमद्देवीभागवतनवाहकथायज्ञकर्मणि मम आत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्यर्थं श्रीभगवत्या जगदम्बिकायाः त्रिगुणात्मिकायाः श्रीदुगदिव्याः पूजनं करिष्ये। पूजनकर्मणि आत्मनोऽधिकारपूर्वकयोग्यता-सम्पादनार्थ नवार्णेन न्यासान् करिष्ये। संकल्पजल छोड़ दे।

हाथमें पुष्प लेकर मंत्रो से दुर्गा देवी का ध्यान करे-

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डी शिरःशङ्ख संदधतीं करैरिवनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।

नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकों सेवे महाकालिकां यामस्तीत्वपिते हरी कमलजो हन्तुं मधु कैटभम्

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्

गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥

ॐ अग्निऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः।

ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वाटु धियावसुः ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपाये त्रिगुणात्मिकाये दुर्गायै नमः श्रीदुर्गा ध्यायामि। ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। हाथके फूल चढ़ा दे।

आवाहन

हाथमें पुष्प लेकर श्रीदुर्गादेवीका आवाहन करे-

हिरण्यवर्णां हरिणों सुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपाये त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः श्रीदुर्गा आवाहयामि। आवाहनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि।

आसन

तो म आ यह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकार्य दुर्गायै नमः आसनार्थे पुष्याणि समर्पयामि। पुष्प चढ़ाये।

पाद्य

अश्वपूर्वा रधमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्, श्रियं देवीमुष ह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्य-

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्दा ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।

पनीस्थितां पद्मवर्णा तामिहोप हुये श्रियम् ॥

ओमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकार्य दुर्गायै नमः हस्तयोरवं समर्पयामि। अर्घ्य का जल चढ़ाये।

अश्वपूर्वा रधमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्। श्रियं देवीमुष ह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि। जल चढ़ाये।

आचमनीय

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्। तां पद्मिनीमों शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीमें नश्यतां त्वां वृणे॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः, आचमनीयं जलं समर्पयामि। जल चढ़ाये।

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः, स्नानीयं जलं समर्पयामि। जल चढ़ाये।

पञ्चामृतस्नान

पञ्च नद्य: सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः, पंचामृतस्नानं समर्पयामि। पंचामृतसे स्नान कराये।

शुद्धोदकस्नान

शुद्धकालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्वेतालोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः॥

महाभिषेकस्नान

श्रीसूक्तके मन्त्रोंद्वारा जलसे स्नान कराये।

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणा-त्मिकायै दुर्गायै नमः, महाभिषेकस्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्र

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कोर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः वस्वोपवस्त्रं समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। वस्त्र तथा उपवस्त्र चढ़ाये। एक आचमनी जल छोड़े।

यज्ञोपवीत

क्षुत्पिपासामानां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निणद मे गृहात् ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः यज्ञोपवीते समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। यज्ञोपवीत चढ़ाये। एक आचमनी जल छोड़े।

चन्दन

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। अलक्ष्मीः ॥ ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोप ह्वये श्रियम्

श्रीमहाकाली महालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः विलेपनार्थे चन्दनं समर्पयामि। भगवती दुगदिवीको चन्दन लगाये।

अक्षत

अक्षन्नमीमदन्त हाव प्रिया अश्रूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी॥

श्रीमहाकाली महालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकार्य दुर्गायै नमः चन्दनोपरि अक्षतान् समर्पयामि। भगवती दुर्गादेवीको चन्दनके ऊपर अक्षत लगाये।

पुष्प तथा पुष्पमाला

मनसः काममाकृति वाचः सत्यमशीमहि।

पशूनां रूपमन्नस्य मचि श्रीः श्रपतों यशः ॥

श्रीमहाकाली महालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै

त्रिगुणात्मिकायै दुर्गावै नमः पुष्पमालां समर्पयामि।

सौभाग्यद्रव्य-

अहिरिव भोगैः पर्येति बाहु ज्याया हेति परिवाधमानः।

हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमाःसं परि पातु विश्वतः ॥

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायै त्रिगुणात्मिकार्य दुर्गायै नमः सौभाग्यद्रव्याणि समर्पयामि। भगवती दुर्गादेवीको हल्दी-रोरी आदि सौभाग्यद्रव्य चढ़ाये।

सिन्दूर

सिन्धोरिव प्राध्वने शूधनासो वात प्रमियः पतयन्ति यद्वाः।

घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नुर्षिभिः पिन्वमानः ॥

धूप

कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥

दीप

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।

निज देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥

श्रीमहाकाली महालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपायैम त्रिगुणात्मिकायै दुर्गायै नमः दीपं दर्शयामि। भगवती

नैवेद्य

आर्द्रा पुष्करिणों पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

दक्षिणा

हिरण्यगर्भः समवर्ततात्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

नीराजन

इदं हविः प्रजननं मे अस्तु दशवीरः सर्वगणः स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि। अग्निः प्रजां बहुलां में करोत्वन्नं पयोरेतोअस्मासु धत ॥

प्रदक्षिणा

तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्यो ऽएवान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥

पुष्पाञ्जलि

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादान्यमन्वहम् ।

सुकं पञ्चदशर्च च श्रीकामः सततं जपेत् ॥

दुर्गासप्तशती का विधि पूर्वक पूजन एवं अर्चन करना चाहिए।

2.5 दुर्गा सप्तशती ,पाठ विधि, एवं पूजन विधान

दुर्गासप्तशती पाठ के लिए सर्वप्रथम स्नान करके पवित्र होकर आसन-शुद्धि की क्रिया सम्पन्न करके शुद्ध आसन पर बैठे; साथमें शुद्ध जल, पूजनसामग्री और श्रीदुर्गासप्तशती ग्रन्थ काष्ठ आदि के शुद्ध आसन पर विराजमान कर दे। ललाट में भस्म, चन्दन अथवा रोली लगा ले, शिखा बाँध ले; फिर पूर्वाभिमुख होकर तत्त्व-शुद्धिके लिये चार बार आचमन करना चाहिए। यदि नवरात्र आदि का विशेष समय हो तोशतचण्डी आदि अनुष्ठानों में विस्तृत विधि का उपयोग कर उसमें यन्त्रस्थ कलश, गणेश, नवग्रह, मातृका, वास्तु, सप्तर्षि, सप्तचिरंजीव, ६४ योगिनी, क्षेत्रपाल तथा अन्यान्य देवताओं की वैदिक विधि द्वारा पूजा का विधान हैं। उसके बाद अखण्ड दीप प्रज्वलित कर है। देवीप्रतिमाकी अंगन्यास और अग्न्युत्तारण आदि विधि के साथ विधिवत् पूजा की जाती है। नवदुर्गापूजा, ज्योतिः पूजा, वटुक-गणेशादिसहित कुमारी पूजा, अभिषेक, नान्दीश्राद्ध, रक्षाबन्धन, पुण्याहवाचन,

मंगलपाठ, गुरुपूजा, तीर्थावाहन, मन्त्र-स्नान आदि, आसनशुद्धि, प्राणायाम, भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, अन्तर्मातृकान्यास, बहिर्मातृकान्यास, सृष्टिन्यास, स्थितिन्यास, शक्तिकलान्यास, शिवकलान्यास, हृदयादिन्यास, षोढान्यास, विलोमन्यास, तत्त्वन्यास, अक्षरन्यास, व्यापकन्यास, ध्यान, पीठपूजा, विशेषार्घ्य, क्षेत्रकीलन, मन्त्रपूजा, विविध मुद्राविधि, आवरणपूजा एवं प्रधानपूजा आदिका शास्त्रीय पद्धति के अनुसार अनुष्ठान होता है। इस प्रकार विस्तृत विधि से पूजा करने की इच्छावाले भक्तों को अन्यान्य पूजा-पद्धतियों की सहायता से भगवती की आराधना करके पाठ का आरम्भ करना चाहिये।

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।,ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥

ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।,ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा ॥

तत्पश्चात् प्राणायाम करने के बाद गणेश आदि देवताओं एवं गुरुजनों को प्रणाम करने के बाद 'पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ' इत्यादि मन्त्रसे कुश की पवित्री धारण करके हाथ में लाल फूल, अक्षत और जल लेकर निम्नांकितरूप से संकल्प का विदां हैं 1

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः । ॐ नमः परमात्मने, श्रीपुराणपुरुषोत्तमस्य श्रीविष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्ध श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत-मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गतब्रह्मावर्तेकदेशे पुण्यप्रदेशे बौद्धावतारे वर्तमाने यथानामसंवत्सरे अमुकायने महामाङ्गल्यप्रदे मासानाम् उत्तमे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरान्वितायाम् अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते सूर्ये अमुकामुकराशिस्थितेषु चन्द्रभौमबुधगुरुशुक्रशनिषु सत्सु शुभे योगे शुभकरणे एवंगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ सकलशास्त्र श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तिकामः अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा अहं ममात्मनः सपुत्रस्त्रीबान्धवस्य श्रीनवदुर्गानुग्रहतो ग्रहकृतराजकृतसर्व-विधपीडानिवृत्तिपूर्वकं नैरुज्यदीर्घायुः पुष्टिधनधान्यसमृद्ध्यर्थं श्रीनवदुर्गाप्रसादेन सर्वा पन्निवृत्तिसर्वाभीष्टफलावाप्तिधर्मार्थकाममोक्ष चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धिद्वारा श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी महासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थं शापोद्धारपुरस्सरं कवचार्गलाकीलकपाठ-

वेदतन्त्रोक्तरात्रिसूक्तपाठदेव्यथर्वशीर्षपाठन्यासविधिसहितनवार्णजपसप्तशतीन्यास-

ध्यानसहितचरित्रसम्बन्धिविनियोगन्यासध्यानपूर्वकं च 'मार्कण्डेय उवाच ॥ सावर्णिः सूर्यतनयो यो

मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।' इत्याद्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं दुर्गासप्तशतीपाठं तदन्ते न्यासविधिसहितनवार्णमन्त्रजपं वेदतन्त्रोक्तदेवीसूक्तपाठं रहस्यत्रयपठनं शापोद्धारादिकं च करिष्ये ।

इस प्रकार शास्त्रों के अनुसार विधि पूर्वक प्रतिज्ञा संकल्प करके देवी का ध्यान करते हुए पंचोपचार विधि दुर्गासप्तशती ग्रंथ का मंत्रो के द्वारा पूजन कर, पुष्प अर्पित कर, धूप,दीप, से ग्रन्थ की आरती ,योनिमुद्रा का प्रदर्शन करके माँ भगवती को प्रणाम करे, उसके बाद मूल नवार्णमन्त्रसे पीठ आदि में आधारशक्ति की स्थापना करके उसके ऊपर पुस्तक को विराजमान करे। इसके बाद शापोद्धार का पाठ करना चाहिये। इस पाठ को करने का अनेक प्रकार हैं। 'ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिकादेव्यै शापनाशानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा'- इस मन्त्र का आदि और अन्त में 7 बार जप करे। यह शापोद्धार मन्त्र कहलाता हैं। इसके अनन्तर उत्कीलन मन्त्र का जप किया जाता है। इसके बाद पुस्तक पूजन का मन्त्र आगे दिया जा रहा हैं

ॐ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥

ध्यात्वा देवीं पञ्चपूजां कृत्वा योन्या आधारं स्थाप्य मूलेन स्थापयेत्तत्र पुस्तकम् ॥

'सप्तशती-सर्वस्व' के उपासना में पहले शापोद्धार करने के बाद में षडंग सहित पाठ करने का विधान हैं, यहा पर कवच आदि पाठ से पूर्व शापोद्धार कर लेना चाहिये। कात्यायनी तन्त्र सप्तशती के अध्यायों का तेरह-एक, बारह- दो, ग्यारह-तीन, दस-चार, नौ-पाँच तथा आठ-छः के क्रम से पाठ करके अन्त में सातवें अध्याय को दो बार पढ़कर शापोद्धार करना चाहिए। पहले मध्यम चरित्र का, फिर प्रथम चरित्र का, तत्पश्चात् उत्तर चरित्र का पाठ करना उत्कीलन होता हैं। इक्कीस इक्कीस बार इस पाठ को किया जाता हैं। यह मन्त्र इस प्रकार है- 'ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशति चण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा।' इसके जप के बाद आदि और अन्त में सात-सात बार मृतसंजीवनी विद्या का जप करने का विधान हैं। जो इस प्रकार 'ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृतसंजीवनि विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा।' - 'ॐ श्रीं श्रीं क्लीं हूं ॐ ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय उत्कीलय उत्कीलय ठं ठं।' इस मन्त्रका आरम्भ में ही एक सौ आठ बार जप करना चाहिये, पाठके अन्त में नहीं। अथवा रुद्रयामल महातन्त्र के अन्तर्गत दुर्गाकल्प में कहे हुए चण्डिका-शाप-विमोचन मन्त्रों का आरम्भ में ही पाठ करना चाहिये। -

ॐ अस्य श्रीचण्डिकाया ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापविमोचनमन्त्रस्य वसिष्ठ-
नारदसंवादसामवेदाधिपतिब्रह्माण ऋषयः सर्वैश्वर्यकारिणी श्रीदुर्गा देवता चरित्रत्रयं बीजं ह्रीं शक्तिः
त्रिगुणात्मस्वरूपचण्डिकाशापविमुक्तौ मम संकल्पितकार्यसिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

ॐ (ह्रीं) रीं रेतः स्वरूपिण्यै मधुकैटभमर्दिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १॥ ॐ श्रीं बुद्धिस्वरूपिण्यै महिषासुरसैन्यनाशिन्यै ब्रह्मवसिष्ठ विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ २॥ ॐ रं रक्तस्वरूपिण्यै महिषासुरमर्दिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ३॥

ॐ भुं क्षुधास्वरूपिण्यै देववन्दितायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥

ॐ छां छायास्वरूपिण्यै दूतसंवादिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥

ॐ शं शक्तिस्वरूपिण्यै धूम्रलोचनघातिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ६ ॥ ॐ तूं तृषास्वरूपिण्यै चण्डमुण्डवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ७ ॥ ॐ क्षां क्षान्तिस्वरूपिण्यै रक्तबीजवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ८ ॥ ॐ जां जातिस्वरूपिण्यै निशुम्भवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ९॥ ॐ लं लज्जास्वरूपिण्यै शुम्भवधकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १० ॥ ॐ शां शान्तिस्वरूपिण्यै देवस्तुत्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ११ ॥ ॐ श्रं श्रद्धास्वरूपिण्यै सकलफलदात्र्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १२ ॥ ॐ कां कान्तिस्वरूपिण्यै राजवरप्रदायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भवl १३ ॐ मां मातृस्वरूपिण्यै अनर्गलमहिमसहितायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १४॥ ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सं सर्वैश्वर्यकारिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १५, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्यकवचस्वरूपिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥१६ ॐ क्रीं काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेदस्वरूपिण्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ १७॥ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महाकाली-महालक्ष्मीमहासरस्वतीस्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गादेव्यै नमः१८

इत्येवं हि महामन्त्रान् पठित्वा परमेश्वर। चण्डीपाठं दिवा रात्रौ कुर्यादेव न संशयः

एवं मन्त्रं न जानाति चण्डीपाठं करोति यः आत्मानं चैव दातारं क्षीणं कुर्यान्न संशयः ॥

इस प्रकार विधि पूर्वक शापोद्धार का पाठ करने के बाद अन्तर्मातृका बहिर्मातृका आदि देवियों का न्यास कर, श्रीदेवी का ध्यान करके के उपरांत इस विधि के द्वारा दुर्गासप्तशती का पाठ विधि को किया जाता है जो शास्त्र सम्मत हैं।

2.6 दुर्गा सप्तशती में त्रयोदश अध्याय का परिचय एवं स्वरुप

इससे पूर्व हमने यह मार्कण्डेय पुराण का एक अंश है जिसमें कुल 700 श्लोक और 13 अध्याय हैं। सप्तशती में देवी की महिमा, असुरों का संहार और भक्तों को भक्ति, भोग तथा मोक्ष का उपदेश मिलता है। यह ग्रंथ तीन चरित्रों में विभाजित है—प्रथम, मध्यम और उत्तर।

प्रथम अध्याय - मै मधु-कैटभ वध इत्यादि का वर्णन मिलता हैं। एक बार भगवान विष्णु योगनिद्रा में थे उस समय मधु और कैटभ असुरों ने ब्रह्मा जी पर आक्रमण कर दिया ब्रह्मा जी ने जब देखा तो वो चकित रह गये। यह सब देखकर ब्रह्मा जी ने आदिशक्ति माँ दुर्गा की स्तुति की, देवी ने विष्णु भगवान को जगाया तब भगवान विष्णु ने असुरों का वध कर दिया । इस कथा के स्वरुप का ज्ञान अज्ञान और आलस्य का नाश करता हैं।

मध्यम चरित्र- में 3 अध्यायों का समावेश किया गया हैं। इन सभी अध्यायों में अलग अलग चरित्रों का उल्लेख किया गया हैं उनमे से महिषासुर का उत्पात,महिषासुर ने देवताओं को हराया और स्वर्ग पर अधिकार कर लिया। जिससे देवशक्तियों के संयोग से देवी का आविर्भाव हो गया। तृतीय अध्याय में महिषासुर मर्दिनी देवी का वर्णन हुआ है दुर्गा देवी ने महिषासुर का वध कर देवताओं को पुनः स्वर्ग पर प्रतिष्टित करा कर सत्य की स्थापना किया । जिसमे साहस, शक्ति और धर्म की विजय हुई ।

चतुर्थ अध्याय में- स्तुति एवं आशीर्वाद कथा का वर्णन किया गया हैं। इसमें देवताओं ने देवी की स्तुति की और देवी ने देवताओ को आशीर्वाद भी दिया। उत्तर चरित्र में चण्ड-मुण्ड वध का वर्णन किया गया हैं। दुर्गा देवी ने चण्ड-मुण्ड का वध कर क्रोध और अहंकार का नाश कर धर्म की स्थापना किया। षष्ठ अध्याय में रक्तबीज वध रक्तबीज की प्रत्येक बूंद से नया असुर उत्पन्न होता था। उसके बाद भी देवी ने अपने अस्त्र शस्त्रों से उस देत्य का वध किया सप्तम अध्याय में शुम्भ-निशुम्भ के उत्पात का वर्णन है इन दोनों देत्यों के साथ अत्याचार और अन्याय का अंत भी हुआ। अष्टम अध्याय में देवी ने देत्यों के साथ अनेक रूप धारण कर युद्ध में देत्यों का प्रस्थ किया। नवम अध्याय में माँ दुर्गा ने शुम्भ-निशुम्भ वध कर धर्म का कार्य किया। दशम अध्याय में देवताओं की

स्तुति देवताओं ने देवी की महिमा का बखान किया। जिससे शांति और समृद्धि प्राप्त हुई। **।एकादश अध्याय में देवी का उपदेश** देवी ने धर्म और भक्ति का महत्व बताते हुए ।साधना और शरणागति का उपदेश भी दिया। **द्वादश अध्याय में फलश्रुति** सप्तशती पाठ के सम्पूर्ण फल को बताया गया हैं। कि चंडी पाठ करने से किन किन वस्तुओं की प्राप्ति होती हैं। **त्रयोदश अध्याय में सुरथ और वैश्य को देवी ने वरदान दिया तथा इन सभी का कल्याण भी किया।** दुर्गासप्तशती पाठ करने से किन किन वस्तुओं की प्राप्ति होती हैं उसके बारे में प्रथम चरित्र में बताया गया हैं। प्रथम चरित्र का पाठ करने से अज्ञान का नाश और ज्ञान की रक्षा होती हैं मध्यम चरित्र में शक्ति का आविर्भाव और धर्म की विजय का वर्णन किया गया हैं।उत्तर चरित्र में देवी ने असुरों का संहार, तथा भक्तों को उपदेश और वरदान भी दिया । यह पर यह विचार किया जाता है कि श्री दुर्गासप्तशती का पाठ पाठ नही यह बल्कि साधना का शास्त्र है। इसमें देवी की महिमा, भक्ति का महत्व और जीवन में संकट निवारण का मार्ग बताया गया है। यह ग्रंथ हमें सिखाता है कि देवी की शरण में जाने से मनुष्य को भोग, सुख, समृद्धि और अंततः मोक्ष की प्राप्ति होती है। दुर्गा सप्तशती में केवल असुर-वध की कथा ही नहीं बल्कि यह मानव जीवन के भीतर चल रहे अज्ञान,अहंकार, मोह और विकारों के संघर्ष का प्रतीक भी हैं।

2.7 दुर्गा कवच, अर्गला स्तोत्र,कीलक,देव्याथर्वशीर्ष, पाठ फल विचार

पुराणों के अन्तर्गत दुर्गासप्तशती पाठ विधि का विस्तृत उल्लेख किया गया हैं। दुर्गा पाठ करनें से पूर्व नित्यकर्म इत्यादि से निवृत होकर शुभ मुहूर्तानुसार दुर्गा पाठ पूजन अनुष्ठान किया जाता हैं। दुर्गा सप्तशती पाठ विधि के अनन्तर कवच, कीलक, अर्गला, रात्रि सूत्त, दैव्याथर्वशीर्ष, नवार्ण मंत्र इत्यादि पाठ कर न्यास पूर्वक पाठ का आरम्भ प्रथम चरित्र से किया जाता हैं। यहां पर कवच, अर्गला, कीलक दैव्याथर्वशीर्ष पाठ फल का विचार किया जा रहा हैं। पाठ करनें से पूर्व दुर्गा कवच पाठ को किया जाता हैं। जो भी रुकावट या विध्न, शारीरिक पीड़ा या शत्रु द्वारा विध्न होता हैं, उस विध्न से रक्षा के लिए दुर्गा कवच, यानि कवच का अर्थ हुआ रक्षा करने वाला सुरक्षा या साधन, जिस साधन से रक्षा की जाती हैं, जो साधक को भीतरी और बाहरी संकटों से सुरक्षा प्रदान करता है तथा साधक के चारों ओर आध्यात्मिक कवच निर्मित होता है ,उसे दुर्गा कवच कहते हैं। इसके उपरांत अर्गलास्तोत्र का पाठ किया जाता हैं इस पाठ का फल, अवरोध को हटाना हैं। इस स्तोत्र में देवी से कृपा और वरदान की याचना की जाती है। कीलक पाठ करनें से बंधन यानि उस स्थान को बांधना इस पाठ के करनें से साधक को ज्ञान, वैराग्य, और मोक्ष की प्राप्ति होती हैं। अर्गला पाठ करनें से

शत्रुओं का विनाश, धन की वृद्धि, सुख की प्राप्ति, संतान प्राप्ति तथा मोक्ष की प्राप्ति होती हैं। देव्याअथर्वशीर्ष को अथर्ववेद का अंग माना जाता हैं , जिसमें देवी को ब्रह्मस्वरूप माना गया है। जो सृष्टि, पालन और संहार की शक्ति हैं। इस पाठ के करने से ज्ञान, वैराग्य और मोक्ष की की प्राप्ति होती हैं ।

2.8 नवार्ण विधि, सिद्धकुंजिका महात्म्य विचार

अथ नवार्णविधिः अब यहा पर दुर्गासप्तशती पाठ से पूर्व नवार्णमन्त्र का विधि पूर्वक विनियोग के बाद अलग अलग न्यास कर नवार्णमन्त्र विधि पूर्वक विनियोग, न्यास और ध्यान किया जाता हैं। जो आगे दिया जा रहा हैं। श्रीगणपतिर्जयति । 'ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः। विनियोग के जल को माँ दुर्गा की मूर्ति के आगे छोड़ना चाहिए। इसके बाद एक-एक का उच्चारण करके दाहिने हाथ की अँगुलियों से क्रमशः सिर, मुख, हृदय, गुदा, दोनों चरण और नाभि इन अगों का स्पर्श करना चाहिए ।

ऋष्यादिन्यासः

ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः, मुखे।
महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः, हृदि। ऐं बीजाय नमः, गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः,
पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' - इस मूलमन्त्र से हाथों की शुद्धि कर ले।

दोनों समय अध्ययन करनेवाला निष्पाप होता है। मध्यरात्रिमें तुरीय संध्याके समय जप करनेसे वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। नयी प्रतिमापर जप करनेसे देवतासान्निध्य प्राप्त होता है। प्राणप्रतिष्ठाके समय जप करनेसे प्राणोंकी प्रतिष्ठा होती है। भौमाश्विनी (अमृतसिद्धि) योगमें महादेवीकी सन्निधिमें जप करनेसे महामृत्युसे तर जाता है। जो इस प्रकार जानता है, वह महामृत्युसे तर जाता है। इस प्रकार यह अविद्यानाशिनी ब्रह्मविद्या है।

श्रीविद्याके उपासकों के लिये चार संध्याएँ आवश्यक हैं। इनमें तुरीय संध्या मध्यरात्रि में होती है।

करन्यासः

करन्यास में हाथ की विभिन्न अँगुलियों, हथेलियों और हाथके पृष्ठभाग में मन्त्रों का न्यास किया जाता है इसी प्रकार से अंगन्यास में हृदयादि अंगों में मन्त्रों की स्थापना होती रहती हैं। मन्त्रों को चेतन और मूर्तिमान् मानकर उन-उन अंगों का नाम लेकर उन मन्त्रमय देवताओं का ही स्पर्श और वन्दन किया जाता है, इस विधि से करने से पाठ या जप करनेवाला स्वयं मन्त्रमय होकर मन्त्रदेवताओं द्वारा सर्वथा सुरक्षित हो जाता है।

ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथोंकी तर्जनी अँगुलियोंसे दोनों अँगूठोंका स्पर्श)।

ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः (दोनों हाथोंके अँगूठोंसे दोनों तर्जनी अँगुलियोंका स्पर्श)।

ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः (अँगूठोंसे मध्यमा अँगुलियोंका स्पर्श)।

ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका अँगुलियोंका स्पर्श)।

ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः (कनिष्ठिका अँगुलियोंका स्पर्श)।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः (हथेलियों और उनके पृष्ठभागों का परस्पर स्पर्श)।

हृदयादिन्यासः

इसमें दाहिने हाथकी पाँचों अँगुलियोंसे 'हृदय' आदि अंगोंका स्पर्श किया जाता है।

ॐ ऐं हृदयाय नमः (दाहिने हाथकी पाँचों अँगुलियोंसे हृदयका स्पर्श)।

ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा (सिरका स्पर्श)।

ॐ क्लीं शिखायै वषट् (शिखाका स्पर्श)।

ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम् (दाहिने हाथकी अँगुलियोंसे बायें कंधे का और बायें हाथकी अँगुलियों से दाहिने कंधे का स्पर्श)।

ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथकी अँगुलियोंके अग्रभागसे दोनों नेत्रों और ललाटके मध्यभागका स्पर्श)।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् (यह वाक्य पढ़कर दाहिने हाथको सिरके ऊपरसे बायीं ओरसे पीछेकी ओर ले जाकर दाहिनी ओरसे आगेकी ओर ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अँगुलियोंसे बायें हाथकी हथेलीपर ताली बजाये)।

अक्षरन्यासः

शिखा आदि का दाहिने हाथ की अँगुलियोंसे स्पर्श करे।

ॐ ऐं नमः, शिखायाम्। ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे। ॐ क्लीं नमः, वामनेत्रे। ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे। ॐ मुं नमः, वामकर्णे। ॐ डां नमः, दक्षिणनासापुटे। ॐ मैं नमः, वामनासापुटे। ॐ विं नमः, मुखे। ॐ च्चें नमः, गुह्ये।

इस प्रकार न्यास करके मूलमन्त्र से आठ बार व्यापक (दोनों हाथों द्वारा सिर से लेकर पैर तक के सब अंगोंका) स्पर्श करे, फिर प्रत्येक दिशा में चुटकी बजाते हुए न्यास करे-

दिङ्न्यासः

ॐ ऐं प्राच्यै नमः। ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः। ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः। ॐ ह्रीं नैऋत्यै नमः। ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः। ॐ क्लीं वायव्यै नमः। ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः। ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः

यहाँ प्रचलित परम्परा के अनुसार न्यास विधि के बाद ध्यान करना चाहिए।

ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः शङ्ख संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्। नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधु कैटभम्॥ १॥ अक्षस्त्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्म धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्। शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥ २॥ घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्। गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥

इसके बाद 'ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः' इस मन्त्र के द्वारा जप माला का पूजन तथा ध्यान करना चाहिए।

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि । चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥ ॐ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे। जपकाले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

ॐ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्वमन्त्रार्थसाधिनि साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा। इसके बाद 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इस मन्त्र का जप करना चाहिए।

सिद्धकुञ्जिकास्तोत्र-

दुर्गासप्तशती पाठ पूर्ण करने के बाद न्यासादि कर पाठ की समाप्ति पर सिद्धकुञ्जिकास्तोत्र का पाठ करने से सम्पूर्ण पाठ का फल मिल जाता हैं। यदि सम्पूर्ण पाठ करने के बाद सिद्धकुञ्जिकास्तोत्र का पाठ नही करते है तो दुर्गादुर्गासप्तशती पाठ का फल निष्फल हो जाता हैं। पाठ का विस्तृत वर्णन आगे किया जा रहा हैं।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् । येन मन्त्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत् ॥ न कवचं नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न च वार्चनम् ॥ कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं अति गुह्यतरं देवि देवानामपि लभेत् । दुर्लभम् ॥ पार्वति । स्तम्भनोच्चाटनादिकम् । गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव मारणं मोहनं वश्यं पाठमात्रेण संसिद्धयेत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् ॥ अथ मन्त्रः ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॥ ॐ ग्लौं हूं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा ॥ ॥ इति मन्त्रः नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि । नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि ॥ निशुम्भासुरघातिनि । नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च जाग्रतं हि महादेवि जपं सिद्धं कुरुष्व मे ॥ ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका। क्लींकारी कामरूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते ॥ चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते वरदायिनी। मन्त्ररूपिणि ॥ धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी। क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शां शीं शृं मे शुभं कुरु ॥ हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी । भ्रां भ्रीं भ्रं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ॥ अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हंक्षं धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ॥ पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा। सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्रसिद्धिं कुरुष्व मे ॥ इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे । अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ॥ यस्तु कुञ्जिकया देवि हीनां सप्तशतीं पठेत् । न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा ॥

2.9 सारांश-

बी.ए.के.एन. नामक इकाई मैं आप सभी ने दुर्गासप्तशती पाठ विधि का अध्ययन कर लिया होगा कि दुर्गा पाठ विधि किस प्रकार किया जाता हैं यह सप्तशती पाठविधि या पाठ कहां से उद्धृत हैं। इस बारे मैं अठारह पुराण के अंतर्गत वेदव्यास जी ने मार्कंडेय पुराण की रचना भी की हैं, जिसके 83अध्याय93 अध्याय पर्यन्त देवी माहत्म्य पाठ के बारे मैं महर्षि वेदव्यास जी ने विस्तृत वर्णन कीमा हैं। देवी के स्वरूपों मैं महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती, इन तीनों देवियों के स्वरूप का उल्लेख किया गया हैं। 700श्लोक 13 अध्यायों का यह देवी चरित्र ग्रंथ मैं प्रथम चरित्र मैं महाकाली, द्वितीय चरित्र मैं महालक्ष्मी, तृतीय चरित्र मैं महासरस्वती, देवियों के स्वरूप का उल्लेख किया गया हैं। प्रथम चरित्र मैं प्रथम अध्याय, मध्यम चरित्र मैं 2 से 4अध्याय, उतरचरित्र मैं 5से13अध्यायों का उल्लेख अलग अलग प्रसंगों मैं मिलता हैं। यहां पर मधु,कैटभ ,शुंभ, निशुंभ इत्यादि कथाओं का उल्लेख किया गया हैं जिनके पाप अधिक बढ़ने से तीनों देवियों ने इन दैत्यों का वध कर सत्य को स्थापित किया। मुख्य रूप से मां भगवती का पाठ यानि दुर्गासप्तशती कि पाठ नवरात्र मैं पवित्रता के साथ किया जाता हैं, जिससे की सुख शांति की प्राप्ति होती हैं। इस इकाई के माध्यम से आप समझ गये होंगे की ईकाई का उद्देश्य क्या हैं।

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

1.	कवच	सुरक्षा करनें का साधन।
2.	सप्तशती	सात सो।
3.	परम्परा	जो वैदिक काल से चली आ रही हैं।
4.	पारायण	पाठ
5.	अर्गला	अवरोध को दूर हटाना
6.	वध	किसी जीव को मारना
7.	असुर	राक्षस
8.	कीलक	बंधन करना
9.	मोक्ष	कैवल्य की प्राप्ति
10.	नेत्रत्रयाय वोषट्	नेत्र पर हाथ स्पर्श करना

2.11 अभ्यास प्रश्न

1. मार्कंडेय पुराण मैं किसका वर्णन हैं।
2. पुराणों की संख्या

3. नवार्ण मंत्र कैसे जपना जाता हैं
4. दुर्गा कवच से क्या फल मिलता हैं।
5. दुर्गासप्तशती मैं श्लोक संख्या हैं।
6. मार्कंडेय पुराण के किस अध्याय मैं दुर्गा सप्तशती का वर्णन प्राप्त होता है।
7. देवी भागवत मैं किसका वर्णन किया गया हैं।
8. सिद्ध कुंजिका स्तोत्र किस ग्रंथ मैं हैं।

2.12 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर

1. दुर्गा सप्तशती का
2. अठारह
3. गुप्त रूप से
4. शरीर, तथा शत्रुओं की रक्षा होती हैं।
5. 700
6. 81अध्याय से 91अध्याय तक
7. मां दुर्गा का
8. दुर्गासप्तशती मैं

2.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. मार्कंडेयपुराण
2. श्रीमददेवीभागवतपुराण
3. नित्यकर्मपूजा पद्धति
4. श्रीदुर्गासप्तशती

2.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. दुर्गा सप्तशती पाठ विधि का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. मार्कंडेय पुराण के अनुसार दुर्गा के स्वरूप का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. नवार्ण विधि क्या हैं प्रकाश डालिए।
4. दुर्गा सप्तशती के त्रयोदश अध्यायों का सार लिखिए।

इकाई -3 श्रीमद्भागवदमहापुराण पाठ विधि

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पुराण अर्थ प्रकार एवं लक्षण विचार
3.4 श्रीमदभागवत पुराण परिचय, रचनाकाल एवं विषय वस्तु
3.5 श्रीमदभागवतमहापुराण की पाठ विधि, पूजन विधान एवं विनियोग
3.6 सारांश
3.7 पारिभाषिक शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्न
3.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर
3.10 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
3.11 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! प्रस्तुत पाठ्यक्रम बी.ए.के.ए (एन) 350 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है? इस इकाई का शीर्षक"श्रीमदभागवतमहापुराण पाठ विधि" हैं 1 इस इकाई मैं पुराणों के अन्तर्गत भागवत महापुराण का भगवान वेदव्यास जी ने विस्तृत उल्लेख किया हैं। इस पुराण मैं 12 स्कंध,335 अध्याय एवं 18000 श्लोकों का यह विशाल ग्रंथ जिसकी रचना भगवान वेदव्यास जी सरस्वती नदी के तट पर देवभूमि उत्तराखंड के बद्रीनाथ मैं व्यास गुफा मैं बैठकर की हैं।यहां पर प्रश्न यह उठता हैं कि व्यास जी ने कहां पर अष्टादश पुराणों की रचना की इस प्रश्न का उत्तर यह हैं कि 17पुराण लिखनें के बाद वेदव्यास जी संतुष्ट नही हुए उस स्थान पर नारद मुनि के आने के बाद नारद मुनि ने वेदव्यास जी से कहा हे वेदव्यास जी आपने पुराणों की रचना तो कर ली हैं, परन्तु इन पुराणों मैं जगतकर्ता उस ईश्वर के लीलाओं का आपने वर्णन नहीं किया हैं जिससे आपके मन को संतुष्टि तथा ईश्वर के बिना यह पुराण अधूरा हैं।, अब आप अठारह पुराण की रचना कीजिए उसके बाद वेदव्यास जी ने अठारह पुराण के रूप में श्रीमद्भागवत जी की रचना की जिससे वेद व्यास जी प्रसन्न होकर ईश्वर की भक्ति करनें लगें इस पुराण मैं सभी पुराणों की विशेषता का उल्लेख तथा कथा आख्यानों का उल्लेख किया गया हैं,जिसका आप आगे अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- ❖ पुराणों के अर्थ, प्रकार एवं लक्षणों के बारे मैं जान सकेंगे।
- ❖ श्रीमद्भागवत महापुराण की विशेषता से अवगत हो सकेंगें।
- ❖ भागवत महापुराण के वैशिष्ट्य तथा आख्यानों से परिचित होंगें
- ❖ श्रीमद्भागवत महापुराण के पाठ विधि का ज्ञान कर सकेंगे
- ❖ भागवत जी के विषय वस्तुओं से अवगत होंगे।

3.3 पुराण का अर्थ प्रकार एवं लक्षण विचार

भारतीय ज्ञान परम्परा मै व्याकरण के अनुसार 'पुरा भवं पुराणम्' बनता हैं। जो प्राचीन होकर भी नवीन दिखाई देता है वह पुराण कहलाता हैं। पुराण शब्द की शाब्दिक प्रक्रिया में एक शब्द है 'पुरा'

जो अव्यय है, जिसका अर्थ हैं 'पुरति अग्रे गच्छति इति पुरा' और दूसरा है 'ट्यु' (अन) प्रत्यय, इन दोंनो से पुराण शब्द निष्पन्न होता हैं। पुरा इस अव्यय का अर्थ कोश ग्रन्थों में प्रबन्ध, अतीतकाल इन तीन अर्थों में मिलता हैं। अब इससे अतीतकाल इस अर्थ को लेने पर स्पष्ट होता है कि अत्यन्त प्राचीन काल में जो हुआ उसे 'पुराण' कहते हैं। निरुक्तकार आचार्य यास्क भी इस अर्थ को स्पष्ट करते हुये 'पुराणं कस्मात् पुरा नवं भवति' अर्थात् जो प्राचीन काल में नया था उसे पुराण कहते हैं। अन्य एक व्युत्पत्ति के अनुसार 'पुरा' इस अव्यय के पूर्व रहने पर अदादि गण की इस धातु से 'अण' प्रत्यय होने पर 'पुराण' शब्द बनता हैं। 'इतिहासपुराणमित्वहरहः स्वारस्यायमधीते यह पर पुराण शब्द का प्रयोग विशेषण और संज्ञा दोंनो रूपों में किया जाता हैं। विशेषण के रूप में प्रयोग यथा- 'अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणः यहाँ पुराण शब्द प्राचीन अर्थ का वाचक है। संज्ञा अर्थ में पुराण शब्द का प्रयोग ग्रन्थ विशेष के रूप में किया जाता रहा हैं। जिसका अर्थ है 'प्राचीन आख्यानों से युक्त ग्रन्थ' को ही पुराण कहते हैं। विभिन्न उद्धरणों में पुराण शब्द का अर्थ यह दिया गया हैं। ब्रह्मपुराण में वर्णन किया गया है कि जो प्राचीन काल में रहा हो उसे पुराण कहते हैं। 'यस्मात्पुरा ह्यभूच्चैतत्पुराणं तेन तत्स्मृतम्' पद्मपुराण में वर्णन किय गया है कि जो साहित्य को प्राचीन विषयों की और ले जाता है, उस साहित्य को पुराण कहते हैं 'पुरार्थेषु आनयतीति पुराणम्' वायुपुराण में कहा गया है जो प्राचीन काल में घटनाएं देखने को मिलती थी उनसे लेकर वर्तमान तक की घटनाओं को पुराण कहते हैं। महाभारत के अनुसार प्राचीन काल को ही पुराण कहा जाता है "पुराख्यानं पुराणम्" पुराणों महर्षि चरक के अनुसार जो प्राचीन काल में नवीन रहा हो वह पुराण कहलाता हैं। "पुरा कवं भवति इति पुराणम्' महर्षि पाणिनी जी कहते हैं जो पूर्व में हुआ हो वह पुराण कहलाता है 'पुरा भवमिति पुराणम्' आचार्य सायण कहते हैं? संसार की उत्पत्ति और विकास के क्रम को बताने वाले साहित्य को पुराण कहते हैं। 'जगतः प्रागवस्थामनुक्रम्य सर्गप्रतिपादिकं वाक्यं पुराणम्" साहित्य शास्त्र के आचार्य राजशेखर के कहते है कि वेदों के आख्यानों को संङ्कलित करने वाला साहित्य पुराण कहलाता हैं। 'वेदाख्यानोपनिबन्धप्रायं पुराणम्' आचार्य मधुसूदन सरस्वती ने भी पुराण के बारे में अपने ग्रंथो उल्लेख किया है कि विश्व सृष्टि के इतिहास को पुराण के नाम से जाना जाता हैं। 'विश्वसृष्टेरितिहासः पुराणम्' इस प्रकार शास्त्रों में अलग अलग स्थानों में पुराण के अर्थ वर्णित किया गया हैं । पुराण का क्या लक्षण हैं इस बारे में भी शास्त्रों में वर्णन किया गया हैं। पुराणों की विशेषताओं के विषय में पाँच लक्षणों का उल्लेख पुराणों में ही प्राप्त होता हैं। यह पर कोश ग्रन्थ में पुराणों के आधार पर ही पुराणों को पञ्चलक्षणात्मक कहा गया वायु पुराण में भी पञ्चलक्षण तथा श्रीमदभागवत पुराण में 10 लक्षणों से युक्त बताया गया हैं। जिसका अध्ययन आगे किया जा रहा हैं।

पुराण के पाँच लक्षण- बाराहपुराण के अनुसार पञ्चलक्षण के मध्य सर्ग (सृष्टि), प्रतिसर्ग (प्रलय के पुनः सर्ग), वंश (देवों, सूर्य, चन्द्र, कुलस्वामी और राजाओं का वंश), वंशानुचरित-सूर्य, चन्द्र एवं अन्य वंशों के उत्तराधिकारियों के कार्य एवं इतिहास इन पाँच विषयों का प्रतिपादन शास्त्रों में किया गया हैं जिसे पुराण 'पञ्चलक्षण' कहा जाता हैं।वायुपुराण के अनुसार पुराणों के लक्षणों को कहा गया हैं।

'सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।

वंशानुचरितं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

विष्णुपुराण में भी पञ्चलक्षणात्मक कहा गया हैं। एवं अन्य स्थानों पर भी पुराण के पांच लक्षणों का वर्णन किया गया हैं।

1. सर्ग - सर्ग से तात्पर्य है संसार तथा संसार से उत्पन्न नाना पदार्थों की उत्पत्ति ही 'सर्ग' कहलाती श्रीमद्भागवत महापुराण पुराण में 'सर्ग' का लक्षण इस प्रकार कहा गया हैं।

अव्याकृतगुणक्षोभान्महतस्त्रिवृतोऽहमः।

भूतमात्रेन्द्रियार्थानां संभवः सर्ग उच्यते॥

यह कहा गया है कि मूल प्रकृति में लीन गुण से क्षुब्ध होने पर महत् तत्त्व की सृष्टि होकर महत तत्त्व से त्रिविध अहङ्कार, अहङ्कार से पञ्चतन्मात्रा, इन्द्रिय तथा पञ्चमहाभूतों की उत्पत्ति होना ही 'सर्ग' कहलाता हैं।

2. प्रतिसर्ग - सर्ग से विपरीत प्रतिसर्ग होता है अर्थात् सृष्टि के विपरीत प्रलय का नाम 'प्रतिसर्ग' है। विष्णु पुराण में प्रतिसर्ग का लक्षण इस प्रकार कहा गया हैं।

प्रकृतौ संस्थितं व्यक्तमतीतं प्रलये तु यत्।

तस्मात् प्राकृतसंज्ञोऽयमुच्यते प्रतिसंचरः।।

3- वंश - श्रीमद्भागवत् पुराण में कहा गया है-"राज्ञां ब्रह्मप्रसूतानां वंशस्त्रैकालिकोऽन्वयः" ब्रह्मा द्वारा उत्पन्न राजाओं की भूत, वर्तमान और भविष्य कालिक सन्तति को वंश के नाम से जाना जाता हैं।

परन्तु अन्य पुराणों में वंश के अन्तर्गत ऋषि वंश,देव वंश के अन्तर्गत देवों तथा ऋषियों के वंशो का भी समावेश प्राप्त होता हैं।

देवतानामृषीणां च राज्ञां चामितेजसाम्।

वंशानां धारणं कार्यं श्रुतानां च महात्मनाम्।।

४. मन्वन्तर - मन्वन्तर सनातन परम्परा में बहुत ही प्राचीन काल सृष्टि के काल को बताने वाला कहा गया हैं। यह पर आचार्य मनु ने कहा है कि ७ मनु होते हैं, मन्वन्तर की परिभाषा एवं काल गणना का वर्णन भी मनु के ग्रन्थ में प्राप्त होता हैं। जहां से पौराणिक कालगणना के किया जाता हैं।

मन्वन्तरं मनुर्देवा मनुपुत्राः सुरेश्वरः।

ऋषयोंऽशावताराश्च हरेः षड्विधमुच्यते।।

मनु देवता, मनुपुत्र, इन्द्र, सप्तर्षि और भगवान के अंशावतार इन छः विशेषाताओं से युक्त समय को 'मन्वन्तर' कहा जाता हैं।

5. वंशानुचरित - सूर्य, चन्द्र, राजाओ के'वंश को वंशानुचरित जिसमे राजाओं के सभी पीढ़ी का जन्म होता है तथा आगे बढ़ता रहता हैं उसे वंशानुचरित्र कहते हैं। इस प्रकार से पुराणों के पञ्चलक्षणत्व का वर्णन पुराणों में प्राप्त होता हैं। श्रीमद्भागवतपुराण के अनुसार दशलक्षणों का उल्लेख किया जा रहा हैं।

पुराणलक्षणं ब्रह्मन् ब्रह्मर्षिभिर्निरूपितम्। शृणुष्व बुद्धिमाश्रित्य वेदशास्त्रानुसारतः।।

सर्गश्चाथ विसर्गश्च वृत्तिरक्षन्तराणि च। वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः।।

दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः। केचित् पञ्चविधं ब्रह्मन् महदल्पव्यवस्थया।।

श्रीमदभागवत के अनुसार पुराणों के दश विषय हैं, सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, अन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु और अपाश्रय। श्रीमद्भागवत् पुराण के १२वें स्कन्ध के ७वें अध्याय श्लोक संख्या ११ से लेकर १९ दशलक्षणों का विस्तृत वर्णन किया गया हैं। अर्थ दिया गया है।

1 सर्ग-

२. विसर्ग - विसर्ग से तात्पर्य है नाश के उपरान्त विलयन या सृष्टि का होना।

३. वृत्ति - वृत्ति से तात्पर्य है 'शास्त्र द्वारा व्यवस्थित या स्वाभाविक जीवन वृत्तिया

४. रक्षा- जो हमारे शास्त्रों की रक्षा करते है

६ वंश- जिसमे सूर्य – चन्द्र वंश का वर्णन किया जाता हैं। का वर्णन पूर्व में हो चुका है।

७ वंशानुचरित - जो ऋषि, देवताओं से चली आ रही हो वह वंश कहलाता हैं।

८.संस्था- प्रलय होंना ही संस्था कहलाता हैं।

९. हेतु - हेतु शब्द से सृष्टि में 'कर्म वासना' का ग्रहण होता है। हेतु के विषय में श्रीमद्भागवतमहापुराण में वर्णन हैं।

हेतुर्जीवोऽस्य सर्गादेरविद्याकर्मकारकः। ये चानुशयिनं प्राप्हुरव्याकृतमुतापरे।।

अर्थात् सृष्टि का कारण, यथा आत्मा जो अविद्या के वश में होकर कर्म एकत्र करता है वहीं 'हेतु' कहलाता हैं। हेतु का पञ्चलक्षणात्मक पुराण में सृष्टि के अन्तर्गत ही अन्तर्भाव हो जाता है।

१०. अपाश्रय- अर्थात् आत्माओं का आश्रय, अर्थात् ब्रह्मा 'अपाश्रय' से सामान्य रूप से ईश्वर का ग्रहण होता है और वह ईश्वर सृष्टि का निर्माता है। इसके विषय में श्रीमद्भागवत में कहा गया है -

व्यतिरेकान्वयो यस्य जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु। मायामयेषु तद् ब्रह्म जीववृत्तिष्वपाश्रयः॥

आगे 18 पुराणों का उल्लेख किया गया हैं जो की वर्णित हैं।

ब्राह्मं पाद्यं वैष्णवञ्च शैव लैङ्गं सगारूडम्। नारदीयं भागवतमाग्नेयं स्कान्दसंज्ञितम्॥

भविष्यं ब्रह्मवैवर्त्त मार्कण्डेयं सवामनम्। वाराहं मात्स्यं कौमै ब्रह्माण्डाख्यमिति त्रिषट् ॥

'मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं व चतुष्टयम्। अनापलिङ्गकूस्कानि पुराणानि प्रचक्षते

मद्वयम् = मत्स्यपुराण-मार्कण्डेयपुराण। भद्वयम् अग्निपुराण-= भविष्यपुराण-भागवत्पुराण। ब्रत्रयम् - ब्रह्मपुराण-ब्रह्माण्डपुराण-ब्रह्मवैवर्तपुराण। वचतुष्टयम् = विष्णुपराण-वामनपुराण-वराहपुराण-

वायुपराण। अनापलिङ्गकूस्कानि नारदपुराण-पद्मपुराण-लिङ्गपुराण-कूर्मपुराण-स्कन्दपुराण। इस क्रम से हम पुराणों के बारे में वर्णन करते हैं।

3.4 श्रीमदभागवत पुराण जी का परिचय,रचनाकाल एवं विषय वस्तु

श्रीमदभागवत के रचनाकाल के सम्बन्ध में विद्वानों के मतानुसार पूर्व में कुछ आचार्यों द्वारा भागवत के काल को ज्ञात करने का प्रयास किया गया हैं। श्रीमदभागवत में पुराण के दस लक्षणों का विशद् निरूपण प्राप्त होता हैं जिससे उसकी तिथि का अनुमान किया जा सकता है। इस पुराण के उद्धरण मिताक्षर, अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका तथा कल्पतरु आदि प्राथमिक निबन्ध ग्रंथों में प्राप्त नहीं होते हैं। इसे . तथा उसकी तिथि पांचवी शती से लेकर एक हजार ईसा तक वर्णित किया जा सकता हैं। अलबरूनी के अनुसार अभिनवगुप्त के गीतार्थ संग्रह और गौणपादा के उत्तर-गीता-भाष्य में भागवत के वर्णन से अनुमान लगाया जा सकता है, कि भागवत इनसे पूर्व रचित रहा हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण का काल 9वीं-10वीं शताब्दी के आस पास माना जाता हैं। आचार्य शंकरा, आचार्य दण्डी और माघ ने प्रमाणित किया है, कि श्रीमदभागवत उनके बाद का रचित ग्रन्थ है। इनके मतानुसार गुप्तकाल अर्थात ईसा की छठवीं शताब्दी से पूर्व श्रीमदभागवत रचनाकाल स्वीकार किया गया हैं। विद्वानों ने विष्णु, भागवत और वराह इन तीनों पुराणों को 12वीं शती का रचित ग्रन्थ माना है। श्रीमद्भागवत पुराण में 12 स्कन्ध वेदव्यास जी ने लिखे हैं। प्रथम स्कंध में 18, द्वितीय में10, तृतीय स्कन्ध में 33, चतुर्थ स्कन्ध में 31, पंचम में 26, षष्ठ स्कन्ध में 19, सप्तम स्कन्ध में 15, अष्टम स्कन्ध में 24, नवम स्कन्ध में 24, दशम स्कन्ध में ७०, एकादश रकन्ध में 31, और द्वादश स्कन्ध में 13, अध्यायों के संकलन से कुल335 अध्यायों का वर्णन किया गया हैं। दशलक्षण से लक्षित भागवत में भारतीय पुराण परम्परा में श्रीमदभागवतमहापुराण के द्वादश स्कन्धों को अंगीकृत किया गया है जो श्रीमन्नारदीयपुराण ग्रन्थ में द्वादश स्कन्धों की कथानुक्रमणिका प्राप्त होती हैं 1 अब यहा प्रथम स्कन्ध में वर्णित विषय वस्तुओं का उल्लेख किया जा रहा हैं जिसे अधिकार स्कन्ध के नाम से भी जाना जाता हैं। दस लक्षण का वर्णन, सुखदेव जी का वर्णन, अश्वत्थामा को अर्जुन के द्वारा बन्दी बनाना, ब्रह्मान से पीडित उत्तरा का श्रीकृष्ण को बुलाना। इस स्कन्ध में अर्जुन की माता पृथा का कृष्णा दर्शन न होने के कारण दुःखी होने का वर्णन केवल दुःख से भगवत की प्राप्ति नहीं हो सकती। श्रीकृष्ण की प्रसन्नता से ही मुक्ति की प्राप्ति और दर्शन होंगे, द्वितीय स्कन्ध में परम तत्त्व का ज्ञान श्रीमद्भागवत रसिक इस स्कन्ध को साधन स्कन्ध के नाम से भी जाना जाता हैं। इस स्कन्ध में 10 अध्याय है, जिनमें भगवत प्राप्ति के तीन साधनों की व्याख्या का उल्लेख मिलता हैं। तृतीय

स्कन्ध दस लक्षणों, में प्रथम लक्षण सर्ग की विस्तारपूर्वक व्याख्या की गई है। इसीलिए इस स्कन्ध को सर्गस्कन्ध के नाम से भी जाना जाता हैं। विदुरमैत्रेय संवाद के द्वारा सृष्टिक्रम का निरूपण, बारहवें अध्याय तक अमूर्त सर्ग रूप के वर्णन के बाद प्रकृति के तीनों गुणों को स्पष्ट करने के लिए कुछ गाथाओं का एकत्रीकरण किया गया है। कपिलदेवहुति संवाद, इत्यादि विषयों का वर्णन किया गया हैं। चतुर्थ स्कन्ध को विसर्ग स्कन्ध भी कहा जाता है। इस स्कन्ध में ब्रह्माजी द्वारा ब्रह्माण्ड चर्चा, इस स्कन्ध में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय का वर्णन है। सप्त अध्याय तक दक्षवर्णन के ध्रुव चरित्र का वर्णन, पृथुचरित का वर्णन, किया गया हैं। पंचम स्कन्ध को स्थान स्कन्ध के नाम से भी जाना जाता हैं। 1.भूगोलवर्णन,**2.**खगोलवर्णन 3 पाताल वर्णन इसके अतिरिक्त सृष्टि पालन से सम्बनिधत्त नियमों का पालन करते हुए प्रियव्रत अग्नीघ्रा आदि राजाओं का चरित्र बताया गया हैं। षष्ठ स्कन्ध को पोषण स्कन्ध भी कहा जाता है। इस स्कन्ध का प्रथम प्रश्न जीय नरक आदि से कैसे मुक्त होगा, है- उक्त प्रश्न के समाधान श्रीशुकदेव जी विविध प्रायश्चित अनुष्ठान आदि का उपदेश देने के पश्चात् सारभूत में सिद्धान्त निरूपित करते हैं- सप्तम स्कन्ध को ऊति स्कन्ध भी कहा जाता हैं। ऊति शब्द से जीव की वासना का ग्रहण किया जाता है। इसका सामान्य लक्षण विद्वानों द्वारा अविद्या बताया गया है।अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेश, अभिनिवेश रूप में दिखाई देता हैं। अष्टम स्कंध के आरम्भ से लेकर स्वायम्भू आदि चार मन्वन्तरों का वर्णन किया गया हैं। रैवतचाक्षुष मन्वंतरों का वर्णन किया गया हैं। अन्य अध्यायों में उचित धर्मो का प्रतिपादन करने वाले यज्ञजिल मोहिनी, वामन, मत्स्यादि मन्वन्तरों,गजेन्द्र मोक्ष, इत्यादि विषयों का उल्लेख मिलता हैं। नवम स्कन्ध में चौबीस अध्याय हैं। इसके बारह अध्यायों में सूर्य प्रधान तथा शेष में सोम प्रधान भगवान के अवतार के कुलों का वर्णन किया गया हैं। सूर्यवंश,चन्द्रवंश के चौबीस अध्यायों में भगवान् के चौबीस अवतारों का वर्णन किया गया हैं। इस प्रकार इस स्कन्ध को ईशानुकथा स्कन्ध के नाम से भी जाना जाता हैं। दशम स्कन्ध में भागवत के अनुसार अविद्या चक्र का वास्तविक अवसान भागवत कथा श्रवण, मनन, ध्यान से उत्पन्न भगवत अनुराग से ही सम्भव है। भगवान के उत्तम वर्णन उनके श्लोक में उपस्थित गुणों का अनुसरण ही संसार के रोगों का निवारण कर सकता हैं। इस स्कंध में भगवान श्रीकृष्ण के लीलाओ का सम्पूर्ण वर्णन प्राप्त होता हैं। जिसे भागवत का प्राण कहा जाता हैं। एकादश स्कन्ध में मुक्ति के बारे में बताया गया हैं कि सांसारिक बन्धनों से निवृति होने के पश्चात् स्वयं में स्थित होना ही मुक्ति कहलाता हैं। इस स्कन्ध में मुक्ति के साधन तत्त्व को बताया गया है, श्रीकृष्ण उद्धव सम्वाद में अवधूत उपाख्यान स्वयं को, संसार बन्धन को, बद्ध और मुक्ति के उचित लक्षणो का कथन और भक्ति उपाय का वर्णन इस स्कंध में किया गया हैं। इन सभी स्कन्धो के माध्यम से

सत्मार्ग पर चलने कि प्रेरणा दि गयी है जो मनुष्यों को मोक्ष का मार्ग बताता हैं। भगवान् का हंस रूप में ब्रह्मा के लिए ज्ञानोपदेश आदि का वर्णन। द्वादश स्कन्ध में आभास और विरोध परम आश्रय भगवत स्वरूप कृष्ण के प्रमुख तत्वों का उल्लेख किया गया हैं।

3.5 श्रीमदभागवतपुराण की पाठ विधि, पूजन विधान एवं विनियोग

सर्वप्रथम प्रातःकाल जागरण के बाद स्नान,ध्यान कर नित्य-नेमितिक कर्म करने के बाद स्तोत्रों एवं पदों के द्वारा मंगलाचरण कर गुरु एवं अपने ईष्ट का पूजन कर आचमन और प्राणायाम करके भागवत जी का पूजन करने का विधान शास्त्रों में बताया गया हैं। ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिर्व्यशेमहिदेवहितं यदायुः इत्यादि मन्त्रोंसे शान्तिपाठ करे। इसके पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण, व्यासजी, शुकदेव जी तथा श्रीमद्भागवत ग्रन्थ की षोडशोपचार विधि से पूजन करने का विधान बताया गया हैं। यहाँ पर श्रीमद्भागवतमहापुराण -पुस्तक के षोडशोपचार पूजन की मन्त्र सहित विधि का वर्णन किया जा रहा है। इस के साथ ही भगवान श्रीकृष्ण का भी पूजन किया जाता हैं। पूजन करने से पूर्व संकल्प करने का विधान हैं।

ॐ तत्सत् ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ओ३महद्येतस्य ब्रह्मणो द्वितीयपराधे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तेकदेशान्तर्गते पुण्यस्थाने कलियुगे कलिप्रथमचरणे अमुकसंवत्सरे अमुकमासे अमुकयोगवारांशकलग्नमुहूर्तकरणान्वितायां अमुकपक्षे शुभपुण्यतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नस्य अमुकशर्मणः (वर्मणः गुप्तस्य वा) मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य श्रीगोवर्धनधरणचरणारविन्दप्रसादात् भगवदनुग्रहपूर्वक भगवदीयप्रेमोपलब्धये सर्वसमृद्धिप्राप्त्यर्थ च श्रीभगवन्नामात्मकभगवत्स्वरूप श्रीभागवतस्य श्रीमद्भागवतस्य प्रतिष्ठां पूजनं चाहं करिष्ये।

इसके बाद षोडशोपचार पूजन के द्वारा भगवान नारायण का विधिपूर्वक पूजन आगे दिया जा रहा हैं।

पूजन-मन्त्र

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।

स भूमिं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठदशाङ्गुलम् ।।१।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमः आवाहयामि ।

ॐ पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमः। आसनं समर्पयामि।

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःपाद्यं समर्पयामि।

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःअर्घ्यं समर्पयामि।

ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः।।

भगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःआचमनं समर्पयामि।

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् ।

पशून् ताँश्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्च ये ।।६।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःस्नानं समर्पयामि।

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तमादजायत ।।७।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःवस्त्रं समर्पयामि।

इस मन्त्र से वस्त्र समर्पित करे।

ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

इस मन्त्रसे यज्ञोपवीत अर्पित करे।

ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।

तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःगन्धं समर्पयामि।

इस मन्त्र के द्वारा गन्ध-चन्दनादि भगवान को चढ़ाये।

ॐ यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किम्बाहू किमूरू पादा उच्येते।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःतुलसीदलं च पुष्पाणि समर्पयामि।

इस मन्त्रसे तुलसीदल एवं पुष्प चढ़ावे।

ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःधूपमाघ्रापयामि।

ॐ सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिःसप्त समिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अवध्नन् पुरुषं पशुम्।।१५।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःदक्षिणां समर्पयामि।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमः नमस्कारं समर्पयामि।

ॐ धाता पुरस्ताद्यमुदाजहार शक्रः प्रविद्वान् प्रदिशश्चतस्रः।

तमेवं विद्वानमृत इह भवति नान्यः पन्था अयनाय विद्यते ।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

इस मन्त्रसे प्रदक्षिणा करे ।

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा-स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व साध्याः सन्ति देवाः ।।१८।।

श्रीभगवन्नामस्वरूपिणे भागवताय नमःमन्त्रपुष्पं समर्पयामि ।

इस मन्त्रसे पुष्पांजलि समर्पित करना चाहिए ।

इसके बाद भागवत जी का विनियोग देकर

ॐ अस्य श्रीमद्भागवताख्यस्तोत्रमन्त्रस्य नारद ऋषिः बृहती छन्दः श्रीकृष्णः परमात्मा देवता ब्रह्म बीजम् भक्तिः शक्तिः ज्ञानवैराग्ये कीलकम् मम श्रीमद्भगवत्प्रसादसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः। श्रीमद्भागवतस्तोत्र-मन्त्र के देवर्षि नारदजी ऋषि हैं, बृहती छन्द है, परमात्मा श्रीकृष्णचन्द्र देवता हैं, ब्रह्म बीज है, भक्ति शक्ति है, ज्ञान और वैराग्य कीलक है। इसके बाद विधिपूर्वक न्यास करना चाहिए

न्यास विधि -

विनियोग में आये हुए ऋषि आदि का तथा प्रधान देवता के मन्त्राक्षरों का अपने शरीर के विभिन्न अंगों में जो स्थापन किया जाता है, उसे 'न्यास' कहते हैं। मन्त्र का एक-एक अक्षर चिन्मय होता है, उसे मूर्तिमान् देवता के रूपमें देखना चाहिये। इन अक्षरों के स्थापन से साधव स्वयं मन्त्रमय हो जाता है, उसके हृदय में दिव्य चेतनाका प्रकाश फैलता है, मन्त्र के देवता उसके स्वरूप होकर उसकी सर्वथा रक्षा करते हैं। इस प्रकार वह 'देवो भूत्वा देवं यजेत्' इस श्रुति के अनुसार स्वयं देवस्वरूप होकर देवताओं का पूजन करता है। ऋषि आदिका न्यास सिर आदि कतिपय अंगोंमें होता है। मन्त्रपदों अथवा अक्षरों का न्यास प्रायः हाथकी अँगुलियों और हृदयादि अंगोंमें होता है। इन्हें क्रमशः 'करन्यास' और 'अंगन्यास' कहते हैं। किन्हीं-किन्हीं मन्त्रों का न्यास सर्वांग में होता है। न्यास से बाहर भीतर की शुद्धि, दिव्यबल की प्राप्ति और साधना की निर्विघ्न पूर्ति होती है।

ऋष्यादिन्यास-

नारदर्षये नमः शिरसि बृहतीच्छन्दसे नमो मुखे श्रीकृष्णपरमात्मदेवतायै नमो हृदये। ब्रह्मबीजाय नमो गुह्ये। भक्तिशक्तये नमः पादयोः ज्ञानवैराग्यकीलकाभ्यां नमो नाभौ विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे

ऊपर न्यास के सात वाक्य उद्धृत किये गये हैं। इनमें पहला वाक्य पढ़कर दाहिने हाथ की अँगुलियों से सिर का स्पर्श करे, दूसरा वाक्य पढ़कर मुख का, तीसरे वाक्य से हृदय का, चौथे से गुदा का, पाँचवें से दोनों पैरों का, छठे से नाभि का और सातवें वाक्य से सम्पूर्ण अंगों का स्पर्श करना चाहिये।

करन्यास-

'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इस द्वादशाक्षरमन्त्र के एक-एक अक्षर को प्रणव से सम्पुटित करके दोनों हाथों की अंगुलियों में स्थापित करना है। ॐ नमो दक्षिणतर्जन्याम्' ऐसा उच्चारण करके दाहिने हाथ के अँगूठे से दाहिने हाथ की तर्जनी का स्पर्श करे। 'ॐ नं ॐ नमो दक्षिणमध्यमायाम्'- यह उच्चारण कर दाहिने हाथ के अँगूठे से दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ नमों ॐ नमो दक्षिणानामिकायाम्' - यह पढ़कर दाहिने हाथके अँगूठेसे दाहिने हाथ की अनामिका अंगुलि का स्पर्श करे। 'ॐ भं ॐ नमो दक्षिणकनिष्ठिकायाम्'- इससे दाहिने हाथ के अँगूठे से दाहिने हाथ की कनिष्ठि का अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ गं ॐ नमो वामकनिष्ठिकायाम्' - इससे बायें हाथके अँगूठेसे बायें हाथ की कनिष्ठिका अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ वं ॐ नमो वामानामिकायाम्' - इससे बायें हाथके अँगूठेसे बायें हाथ की अनामिका अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ तें ॐ नमो वाममध्यमायाम्' - इससे बायें हाथ के अँगूठे से बायें हाथ की मध्यमा अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ वां ॐ नमो वामतर्जन्याम्' - इससे बायें हाथ के अँगूठे से बायें हाथ की तर्जनी अंगुलिका स्पर्श करे। 'ॐ सुं ॐ नमः ॐ दें ॐ नमो दक्षिणाङ्गुष्ठपर्वणोः' इसको पढ़कर दाहिने हाथकी तर्जनी अंगुलिसे दाहिने हाथके अँगूठेकी दोनों गाँठोंका स्पर्श करे। 'ॐ वां ॐ नमः ॐ यं ॐ नमो वामाङ्गुष्ठपर्वणोः' -इसका उच्चारण करके बायें हाथकी तर्जनी अंगुलिसे बायें हाथके अँगूठेकी दोनों गाँठों का स्पर्श करे।

अङ्गन्यास-

यहाँ द्वादशाक्षरमन्त्र के पदों का हृदयादि अंगों में न्यास करने का विधान हैं।

'ॐ नमो हृदयाय नमः' - इसको पढ़कर दाहिने हाथकी पाँचों अंगुलियोंसे हृदयका स्पर्श करे।

'ॐ भगवते नमः शिरसे स्वाहा' - इसका उच्चारण करके दाहिने हाथ की सभी अंगुलियों से सिर का स्पर्श करे। 'ॐ वासुदेवाय नमः शिखायै वषट्'- इसके द्वारा दाहिने हाथ से शिखा का स्पर्श करे। 'ॐ

नमो नमः कवचाय हुम्'- इस को पढ़कर दायें हाथ की अंगुलियों से बायें कंधे का और बायें हाथ की अंगुलियोंसे दायें कंधे का स्पर्श करे। 'ॐ भगवते नमः नेत्रत्रयाय वौषट्'- इसको पढ़कर दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभागसे दोनों नेत्रोंका तथा ललाटके मध्यभागमें गुप्तरूपसे स्थित तृतीय नेत्र (ज्ञानचक्षु) का स्पर्श करे। 'ॐ वासुदेवाय नमः अस्त्राय फट्'- इसका उच्चारण करके दाहिने हाथको सिरके ऊपरसे उलटा अर्थात् बायीं ओरसे पीछेकी ओर ले जाकर दाहिनी ओर से आगे की ओर ले जाये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये। अंगन्यासमें आये हुए 'स्वाहा', 'वषट्', 'हुम्', 'वौषट्' और 'फट्'- ये पाँच शब्द देवताओंके उद्देश्यसे किये जानेवाले हवनसे सम्बन्ध रखनेवाले हैं। यहाँ इनका आत्मशुद्धिके लिये ही उच्चारण किया जाता हैं ।

ध्यान

किरीटकेयूरमहार्हनिष्कै-र्मण्युत्तमालङ्कृतसर्वगात्रम् ।

पीताम्बरं काञ्चनचित्रनद्ध-मालाधरं केशवमभ्युपैमि ।।

निर्विघ्न कार्य पूर्ण हो-इसके लिये गणेशमन्त्र, द्वादशाक्षरमन्त्र तथा गायत्री-मन्त्र का जप और विष्णुसहस्रनाम एवं गीता का पाठ करनेके लिये अपनी शक्तिके अनुसार सात, पाँच या तीन ब्राह्मणोंका वरण करे। श्रीमद्भागवत का भी एक पाठ अलग ब्राह्मण द्वारा कराये। देवताओं की स्थापना और पूजा के पहले स्वस्तिवाचनपूर्वक हाथ में पवित्री, अक्षत, फूल, जल और द्रव्य लेकर एक महासंकल्प कर लेना चाहिये। संकल्प इस प्रकार है-

ॐ तत्सदद्य श्रीमहाभगवतो विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्ते ष्णुप्रजापतिक्षेत्रेवैवस्वतमनुभोग्यैकसप्ततियुगचतुष्टयान्तर्गताष्टाविंशति-तमकलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे अमुकसंवत्सरे अमुकायने अमुकर्ती अमुकराशिस्थिते भगवति सवितरि अमुकामुकराशिस्थितेषु चान्येषु ग्रहेषु महामाङ्गल्यप्रदे मासानामुत्तमे अमुकमासे अमुकपक्षे योगे कर संकल्प करना चाहिए।

ॐ विष्णवे नमः, ॐ शिवाय नमः, ॐ सूर्याय नमः, ॐ चन्द्रमसे नमः, ॐ भौमाय नमः, ॐ बुधाय नमः, ॐ बृहस्पतये नमः, ॐ भार्गवाय नमः, ॐ शनैश्चराय नमः, ॐ राहवे नमः, ॐ केतवे नमः इन नाम-मन्त्रोंसे पाद्य, अर्घ्य आदि सब उपचार समर्पण करके निम्नांकित मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करे-

ॐ ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च ।

गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु ॥

-अनया पूजया ब्रह्मविष्णुशिवसहित सूर्यादिनवग्रहाः प्रीयन्तां न मम

तत्पश्चात् 'ॐ भूर्भुवः स्वः भो गौर्यादिषोडशमातर इहागच्छत मम पूजां गृह्णीत' इस प्रकार आवाहन करके नाम-मन्त्रोंद्वारा पाद्य-अर्घ्य आदि निवेदन करे- १ ॐ गौर्यै नमः । २ ॐ पद्मायै नमः । ३ ॐ शच्यै नमः । ४ ॐ मेधायै नमः । ५ ॐ सावित्र्यै नमः । ६ ॐ विजयायै नमः । ७ ॐ जयायै नमः । ८ ॐ देवसेनायै से पुष्प अर्पण करना चाहिए 1 इसके अनन्तर सर्वतोभद्रमण्डलस्थ देवताओं का आवाहन-पूजन देवपूजापद्धतियोंके अनुस अनुसार करके मध्य में ताम्रकलश स्थापित करे। उसकी संक्षिप्त विधि यह है- 'ॐ भूरसि०' इत्यादि मन्त्रसे भूमिकी प्रार्थना करके हाथसे कलशके नीचेकी)भूमिका स्पर्श करे। उस समय 'ॐ मही द्यौः पृथ्वी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पितृतान्नौ वरीमभि ।' इस मन्त्रको पढ़ना चाहिये। उसी भूमि पर कुंकुम आदि से अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर 'ॐ धान्यमसि०' इत्यादि मन्त्रसे सप्तधान्य स्थापित करे। फिर उस सप्तधान्यपर कलश स्थापित करे; उस समय 'ॐ आजिघ्र कलश०' इत्यादि मन्त्रका उच्चारण करना चाहिये। इसके बाद 'ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि०' इत्यादि मन्त्र पढ़ते हुए कलशको शुद्ध जलसे भर दे। तत्पश्चात् 'ॐ स्थिरो भव०' इत्यादि मन्त्र पढ़कर कलशको ऐसा सुस्थिर कर दे, कलश के पूर्व भाग में 'ॐ अग्निमीळे०' इत्यादि मन्त्र से ऋग्वेदका, दक्षिण भाग में 'ॐ इषे त्वोर्जेत्वा०' इत्यादि मन्त्रसे यजुर्वेदका, पश्चिम भागमें 'ॐ अग्न आयाहि वीतये०' इत्यादि मन्त्र से सामवेद का तथा 'ॐ शन्नो देवी०' इत्यादि मन्त्र से उत्तर भागमें अथर्ववेद का स्थापन करे। पाँच कलश हों तो पृथक् पृथक् कलशों पर वेदों की स्थापना करनी चाहिये। इसके अनन्तर आम, बड़, पीपल, पाकर और गूलर के पल्लवों को कलश में डाले और 'ॐ अश्वत्थे०' इत्यादि मन्त्रका पाठ करे। फिर 'ॐ काण्डात्काण्डात् प्ररोहन्ती०' इत्यादि मन्त्रसे कलशमें दूर्वादल छोड़े, 'ॐ पवित्रे स्थो०' इत्यादि मन्त्रसे कुशा, 'ॐ याः फलिनी०' इत्यादि मन्त्रसे पूगीफल, 'ॐ हिरण्यगर्भः ०' इत्यादि मन्त्रसे दक्षिणा, 'ॐ परिवाजपतिः०' से पंचरत्न, 'ॐ या ओषधीः०' इत्यादिसे सर्वोषधी, 'ॐ गन्धद्वारां०' इत्यादिसे गन्ध और 'ॐ अक्षन्नमीमदन्त०' इत्यादिसे अक्षतको कलशमें छोड़े। तदनन्तर 'ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्चइत्यादिसे फूल छोड़े। 'ॐ धूरसि०' इत्यादि से धूप की आहुति अग्नि में छोड़े। 'ॐ अग्निर्ज्योतिः इत्यादि मन्त्र से अलग दीप जलाकर रख दे। उसके बाद कल शमें तीर्थोदक डाले और 'ॐ पञ्चनद्यः इत्यादि मन्त्रको पढ़े। फिर 'ॐ उपह्वरे०' इत्यादि मन्त्रसे नदी-संगमका जल डाले। तत्पश्चात् 'ॐ समुद्राय त्वा०' इत्यादि मन्त्रसे समुद्रका जल

कलशमें डाले। फिर 'ॐ स्योना पृथिवि०' इत्यादि से सप्तमृत्तिका डालकर 'ॐ वसोः पवित्रमसि०' इत्यादि मन्त्रको पढ़ते हुए लाल वस्त्रसे कलशको आच्छादित करे। तदनन्तर 'ॐ पूर्णादर्वि०' इत्यादि मन्त्रसे एक पूर्णपात्र चावलसे भरा हुआ काँसी या ताँबेका पात्र कलशके ऊपर रखे। इसके बाद 'ॐ श्रीश्च ते०' इत्यादि मन्त्रसे उस पूर्णपात्रपर लाल कपड़ेमें लपेटा हुआ श्रीफल गरीका गोला या नारियल रखे। फिर हाथमें अक्षत ले 'ॐ मनो जूतिः०' इत्यादि मन्त्र पढ़ते हुए कलश पर अक्षत छोड़े और इस प्रकार कलशकी प्रतिष्ठा सम्पन्न करे। तदनन्तर 'सर्वे समुद्राः सरितः०' इत्यादि श्लोकोंका पाठ करते हुए कलशमें तीर्थोंका आवाहन करे। फिर गन्ध आदि उपचारोंसे तीर्थोंका पूजन **करके**

कलश की प्रार्थना करे-

देवदानवसंवादे मध्यमाने जलार्णवे । उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ।।

त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।।

शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः।।

त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ।।

सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा । ब्रह्मणैर्निर्मितस्त्वं हि मन्त्रैरेवामृतोद्भवैः ।।

प्रार्थयामि च कुम्भ त्वां वाञ्छितार्थं ददस्व मे । पुरा हि सृष्टश्च पितामहेन महोत्सवानां प्रथमो वरिष्ठः ।

दूर्वाग्रसाश्वत्थसुपल्लवैर्युक् करोतु शान्तिं कलशः सुवासाः ।।

इसके अनन्तर कलशमें 'ॐ गणानां त्वा०' इत्यादिसे गणेशका तथा 'ॐ तत्त्वायामि' इत्यादि मन्त्रसे वरुणदेवताका आवाहन करके इनका षोडशोपचारसे पूजन करे। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा, प्रदक्षिणा और पुष्पांजलि - ये ही षोडश उपचार कहे गये हैं। पूजनके पश्चात् 'अनया पूजया वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम्' कहकर फूल छोड़ दे । तदनन्तर कलशके ऊपर लक्ष्मीनारायणप्रतिमाको संस्कार करके स्थापित करे। पुरुषसूक्तके षोडश मन्त्रोंसे षोडश-उपचार चढ़ाकर पूजन करे। साथ ही शालग्रामजीकी भी पूजा करे।

(षोडशोपचार पूजनविधि अन्यत्र इसीमें 'श्रीमद्भागवतकी पूजनविधि' शीर्षक लेखमें दी गयी है) पूजाके पश्चात् इस प्रकार भगवान से प्रार्थना करे-

ब्रह्मसत्रं, करिष्यामि तवानुग्रहतो विभो। तन्निर्विघ्नं भवेद्देव रमानाथ क्षमस्व मे॥

अनया पूजया लक्ष्मीसहितो भगवन्नारायणः प्रीयतां न मम।' यों कहकर पुष्पांजलि अर्पण करना चाहिए

इसके बाद 'ॐ नरनारायणाभ्यां नमः' इस मन्त्रसे भगवान् नर-नारायणका

आवाहन और पूजन करके के बाद इस प्रकार प्रार्थना करे-

यो मायया विरचितं निजमात्मनीदं खे रूपभेदमिव तत्प्रतिचक्षणाय।

एतेन धर्मसदने ऋषिमूर्तिनाद्य प्रादुश्चकार पुरुषाय नमः परस्मै॥

सोऽयं स्थितिव्यतिकरोपशमाय सृष्टान् सत्त्वेन नः सुरगणाननुमेयतत्त्वः।

दृश्याददभ्रकरुणेन विलोकनेन यच्छ्रीनिकेतममलं क्षिपतारविन्दम्॥

अनया पूजया भगवन्तौ नरनारायणौ प्रीयतां न मम।'

तत्पश्चात् वक्ता और श्रोताओं के सब विकारों को दूर करनेके लिये वायुदेवता का आवाहन एवं पूजन करे- 'ॐ वायवे सर्वकल्याणकर्ते नमः।' इस मन्त्रसे पाद्य आदि निवेदन करके निम्नांकित रूप से प्रार्थना करे-

अन्तः प्रविश् भूतानि यो विभर्त्यात्मकेतुभिः। अन्तर्यामीश्वरः साक्षात् पातु नो यद्वशे स्फुटम्॥

अनया पूजया सर्वकल्याणकर्ता वायुः प्रीयतां न मम।'

वायु की पूजा के पश्चात् गुरु का 'ॐ गुरवे नमः।' इस मन्त्रसे पूजन करके प्रार्थना करे-

ब्रह्मस्थानसरोजमध्यविलसच्छीतांशुपीठस्थितं स्फूर्जत्सूर्यरुचिं वराभयकरं कर्पूरकुन्दोज्ज्वलम्।
श्वेतस्रग्वसनानुलेपनयुतं विद्युद्धचा कान्तया संश्लिष्टार्धतनुं प्रसन्नवदनं वन्दे गुरुं सादरम्॥

अनया पूजया गुरुदेवः प्रीयतां न मम।'

तदनन्तर श्वेतपुष्प आदिसे 'ॐ सरस्वत्यै नमः ।' इस मन्त्रद्वारा सरस्वतीका पूर्ववत् पूजन करके प्रार्थना करे-

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता

या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।

या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता

सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥

अनया पूजया भगवती सरस्वती प्रीयतां न मम ।'

सरस्वतीपूजनके पश्चात् 'ॐ शेषाय नमः', 'ॐ सनत्कुमाराय नमः', 'ॐ सांख्यायनाय नमः,' 'ॐ पराशराय नमः', 'ॐ बृहस्पतये नमः,' 'ॐ मैत्रेयाय नमः,' 'ॐ उद्धवाय नमः' इन मन्त्रोंसे शेष आदिकी पूजा करके प्रार्थना करे-

शेषः सनत्कुमारश्च सांख्यायनपराशरौ ।

बृहस्पतिश्च मैत्रेय उद्धवश्चात्र कर्मणि ॥

प्रत्यूहवृन्दं सततं हरन्तां पूजिता मया ।

अनया पूजया शेषसनत्कुमारसांख्यायनपराशरबृहस्पतिमैत्रेयोद्धवाः प्रीयन्तां न मम ।'

इसके बाद 'ॐ त्रय्यारुणये नमः', 'ॐ कश्यपाय नमः,' 'ॐ रामशिष्याय नमः,' 'ॐ अकृतव्रणाय नमः,' 'ॐ वैशम्पायनाय नमः' 'ॐ हारीताय नमः' - इन मन्त्रोंसे त्रय्यारुणि आदि छः पौराणिकोंकी पूर्ववत् पूजा करने के बाद प्रार्थना करे -

त्रय्यारुणिः कश्यपश्च रामशिष्योऽकृतव्रणः ।

वैशम्पायनहारीतौ षड् वै पौराणिका इमे ॥

सुखदाः सन्तु मे नित्यमनया पूजयार्चिताः ।

अनया पूजया त्रय्यारुणिप्रभृतयः षट् पौराणिकाः प्रीयन्तां न मम ।'

तत्पश्चात् 'ॐ भगवते व्यासाय नमः' इस मन्त्र से भगवान् व्यासदेव की स्थापना

और पूजा करके इस प्रकार प्रार्थना करे-

नमस्तस्मै भगवते व्यासायामिततेजसे ।प्रपुर्ज्ञानमयं सौम्या यन्मुखाम्बुरुहासवम् ॥

अनया पूजया भगवान् व्यासः प्रीयतां न मम ।'

इसके बाद सप्ताहयज्ञके उपदेशक भगवान् सूर्यकी स्थापना करके प्रतिदिन उनकी भी पूजा करे। उनकी पूजाका मन्त्र 'ॐ सूर्याय नमः' है। पूजनके पश्चात् इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये ।लोकेश त्वं जगच्चक्षुः सत्कर्म तव भाषितम् । करोमि तच्च निर्विघ्नं पूर्णमस्तु त्वदर्चनात् ॥अनया पूजया सप्ताहयज्ञोपदेष्टा भगवान् सूर्यः प्रीयतां न मम ।' इसके बाद दशावतारोंकी तथा शुकदेवजीकी भी यथास्थान स्थापना करके पूजा करनी चाहिये । तदनन्तर नारदपीठ और पुस्तकपीठ दोनोंकी एक ही साथ पूजा करे। पहले उन दोनों पीठोंका जलसे अभिषेक करके उनपर चन्दनादिसे अष्टदल कमल बनावे। फिर 'ॐ आधारशक्तये नमः', 'ॐ मूलप्रकृतये नमः', 'ॐ क्षीरसमुद्राय नमः', 'ॐ श्वेतद्वीपाय नमः,' 'ॐ कल्पवृक्षाय नमः,' 'ॐ रत्नमण्डपाय नमः,' 'ॐ रत्नसिंहासनाय नमः' इन मन्त्रोंसे दोनों पीठोंमें आधारशक्ति आदिकी भावना करके पूजा करे। फिर चारों दिशाओंमें पूर्वादिके क्रमसे 'ॐ धर्माय नमः,' 'ॐ ज्ञानाय नमः,'ॐ वैराग्याय नमः,' 'ॐ ऐश्वर्याय नमः' - इन मन्त्रोंद्वारा धर्मादिकी भावना एवं पूजा करे। फिर पीठोंके मध्यभागमें 'ॐ अनन्ताय नमः' से अनन्तकी और 'ॐ महापद्माय नमः' से महापद्मकी पूजा करे। फिर यह चिन्तन करे-उस महापद्मका कन्द (मूलभाग) आनन्दमय है। उसकी नाल संवित्स्वरूप है, उसके दल प्रकृतिमय हैं, उसके केसर विकृतिरूप हैं, उसके बीज पंचाशत् वर्णस्वरूप हैं- और उन्हींसे उस महापद्म की कर्णिका गद्दी विभूषित है। उस कर्णिकामें अर्कमण्डल, सोममण्डल और वह्निमण्डलकी स्थिति है। वहीं प्रबोधात्मक सत्त्व, रज एवं तम भी विराजमान हैं। ऐसी भावनाके पश्चात् उन सबकी पंचोपचारसे पूजा करे। मन्त्र इस प्रकार हैं-'ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः', 'ॐ संविन्नालाय नमः,' 'ॐ प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः,' 'ॐ विकृतिमयकेसरेभ्यो नमः,' 'ॐ पञ्चाशद्वर्णबीजभूषितायै कर्णिकायै सोममण्डलाय नमः,' 'ॐ वं वह्निमण्डलाय नमः,' 'ॐ सं प्रबोधात्मने सत्त्वाय नमः,' 'ॐ रं रजसे नमः,' 'ॐ तं तमसे नमः' । इन सबकी पूजाके पश्चात् कमलके सब ओर पूर्वादि आठों दिशाओंमें क्रमशः 'ॐ विमलायै नमः,' 'ॐ उत्कर्षिण्यै नमः,' 'ॐ ज्ञानायै नमः,' 'ॐ क्रियाये नमः,' 'ॐ योगायै नमः,' 'ॐ प्रह्वयैनमः', 'ॐ सत्यायै नमः,' 'ॐ ईशानायै नमः' - इन मन्त्रों द्वारा विमला आदि आठ शक्तियों की पूजा करे और

कमलके मध्यभागमें 'ॐ अनुग्रहायै नमः' से अनुग्रहा नामकी शक्ति की पूजा करे। तदनन्तर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय पद्मपीठात्मने नमः' इस मन्त्रसे सम्पूर्ण पद्मपीठ का पूजन करके उसपर सुन्दर वस्त्र डाल दे और उसीके ऊपर स्थापित करनेके लिये श्रीमद्भागवतकी पुस्तकको हाथमें लेकर 'ॐ ध्रुवा द्यौर्भुवा पृथिवी ध्रुवा सा पर्वता इमे । ध्रुवं विश्वमिदं जगत् ध्रुवो राजा विशामसि' इस मन्त्रको पढ़ते हुए उक्त पीठपर स्थापित करे। फिर 'ॐ मनो जूतिः०' इस मन्त्रसे पुस्तककी प्रतिष्ठा करके पुरुषसूक्तके षोडश मन्त्रोंद्वारा षोडशोपचार विधिसे पूजा करे। (यह विधि पहले 'श्रीमद्भागवतकी पूजन विधि' शीर्षक लेखमें दी गयी है।) तत्पश्चात् द्वितीय पीठको श्वेत वस्त्रसे आच्छादित करके उस पर देवर्षि नारदको स्थापित करे और 'ॐ सुरर्षिवरनारदाय नमः' इस मन्त्रसे उनकी विधिवत् पूजा करके निम्नांकितरूपसे प्रार्थना करे -

ॐ नमस्तुभ्यं भगवते ज्ञानवैराग्यशालिने ।

नारदाय सर्वलोकपूजिताय सुरर्षये ।।

अनया पूजया देवर्षिनारदः प्रीयतां न मम ।'

तथा इस प्रकार पूजनके पश्चात् यजमान पुष्प, चन्दन, ताम्बूल, वस्त्र, दक्षिणा, सुपारी रक्षासूत्र हाथमें लेकर 'ॐ अद्यामुकगोत्रममुकप्रवरममुकशर्माणं ब्राह्मणमेभिर्वरणद्रव्यैः सर्वेष्टदश्रीमद्भागवतवक्तृत्वेन भवन्तमहं वृणे' - इस प्रकार कहते हुए कथावाचक आचार्यका वरण करे। हाथमें ली हुई सब सामग्री उनको दे दे। वह सब लेकर कथावाचक व्यास 'वृतोऽस्मि' यों कहें। इसके बाद पुनः उन्हीं सब सामग्रियों को हाथ में लेकर जप और पाठ करनेवाले ब्राह्मणों का वरण करे। इसके लिये संकल्पवाक्य इस प्रकार है- 'अद्याहममुकगोत्रानमुकप्रवरानमुकशर्मणो यथासंख्याकान् ब्राह्मणाने भिर्वरणद्रव्यैर्गाथाविघ्नापनोदार्थ गणेशगायत्रीवासुदेवमन्त्रजपकर्तृत्वेन गीताविष्णुसहस्रनामपाठकर्तृत्वेन च वो विभज्य वृणे ।' इस प्रकार संकल्प करके प्रत्येक ब्राह्मणको वरण-सामग्री अर्पित करे। सामग्री लेकर वे ब्राह्मण कहें 'वृताः स्मः'। इसके बाद पहले कथावाचक आचार्यके हाथमें दिये हुए रक्षासूत्रको लेकर उन्हींके हाथमें बाँध दे। उस समय आचार्य निम्नांकित मन्त्रका पाठ करें-

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम् ।

दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

रक्षा बाँधने के अनन्तर यजमान उनके ललाट में कुंकुम (रोली) और अक्षत से तिलक करे। इसी प्रकार जप कर्ता ब्राह्मणों के हाथों में भी रक्षा बाँधकर तिलक करे। तदनन्तर पीले अक्षत लेकर यजमान चारों दिशाओं में रक्षा के लिये बिखेरे। उस समय निम्नांकित मन्त्रों का पाठ करना चाहिए।

पूर्वे नारायणः पातु वारिजाक्षश्च दक्षिणे ।पश्चिमे पातु गोविन्द उत्तरे मधुसूदनः ।।

ऐशान्यां वामनः पातु चाग्नेय्यां च जनार्दनः ।नैर्ऋत्यां पद्मनाभश्च वायव्यां माधवस्तथा ।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनधरो ह्यधस्ताच्च त्रिविक्रमः ।रक्षाहीनं तु यत्स्थानं तत्सर्वं रक्षतां हरिः ।।

इसके बाद वक्ता आचार्य यजमानके हाथमें -

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।

तेन त्वां प्रतिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ।।

इस मन्त्रको पढ़कर रक्षा बाँधे और-

आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ।

तिलकं ते प्रयच्छन्तु धर्मकामार्थसिद्धये ।।

इस मन्त्रसे उसके ललाटमें तिलक कर दे। फिर यजमान व्यासासनकी चन्दन-पुष्प आदिसे पूजा करे। पूजनका मन्त्र इस प्रकार है- 'ॐ व्यासासनाय नमः' । तदनन्तर कथावाचक आचार्य ब्राह्मणों और वृद्ध पुरुषोंकी आज्ञा लेकर विप्रवर्गको नमस्कार और गुरु-चरणोंका ध्यान करके व्यासासनपर बैठे। मन-ही-मन गणेश और नारदादिका स्मरण एवं पूजन करें। इसके बाद यजमान 'ॐ नमः पुराणपुरुषोत्तमाय' इस मन्त्रसे पुनः पुस्तककी गन्ध, पुष्प, तुलसीदल एवं दक्षिणा आदिके द्वारा पूजा करे। फिर गन्ध, पुष्प आदिसे वक्ताका पूजन करते हुए निम्नांकित श्लोकका पाठ करे-

जयति पराशरसूनुः सत्यवतीहृदयनन्दनो व्यासः ।

यस्यास्यकमलगलितं वाङ्मयममृतं जगत्पिबति ।।

तत्पश्चात् नीचे लिखे हुए श्लोकोंको पढ़कर प्रार्थना करे-शुकरूप प्रबोधज्ञ सर्वशास्त्रविशारद । एतत्कथाप्रकाशेन मदज्ञानं विनाशय ॥ संसारसागरे मग्नं दीनं मां करुणानिधे । कर्ममोहगृहीताङ्गं मामुद्धर भवार्णवात् ॥

इस प्रकार प्रार्थना करनेके पश्चात् निम्नांकित श्लोक पढ़कर श्रीमद्भागवतपर पुष्प, चन्दन और नारियल आदि चढ़ाये

श्रीमद्भागवताख्योऽयं प्रत्यक्षः कृष्ण एव हि । स्वीकृतोऽसि मया नाथ मुक्त्यर्थं भवसागरे ॥

मनोरथो मदीयोऽयं सफलः सर्वथा त्वया । निर्विघ्नेनैव कर्तव्यो दासोऽहं तव केशव ॥

कथा-मण्डप में वायुरूपधारी आतिवाहिक शरीरवाले जीवविशेष के लिये सात गाँठ के एक बाँस को भी स्थापित कर देना चाहिये । तत्पश्चात् वक्ता भगवान्का स्मरण करके उस दिन श्रीमद्भागवतमाहात्म्यकी कथा सब श्रोताओंको वक्ताको चाहिये कि प्रतिदिन पाठ प्रारम्भ करनेसे पूर्व एक सौ आठ बार 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इस द्वादशाक्षरमन्त्रका अथवा 'ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' इस गोपालमन्त्रका जप करे। इसके बाद निम्नांकित वाक्य पढकर **विनियोग करे-**

ॐ अस्य श्रीमद्भागवताख्यस्तोत्रमन्त्रस्य नारदऋषिः बृहतीच्छन्दः श्रीकृष्णपरमात्मा देवता ब्रह्मबीजं भक्तिः शक्तिः ज्ञानवैराग्यकीलकं मम श्रीमद्भगवत्प्रसादसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ।

विनियोगके पश्चात् निम्नांकित रूपसे न्यास करे-

ऋष्यादिन्यासः - नारदर्षये नमः शिरसि । बृहतीच्छन्दसे नमः मुखे । श्रीकृष्णपरमात्मदेवतायै नमः हृदि। ब्रह्मबीजाय नमः गुह्ये। भक्तिशक्तये नमः पादयोः ज्ञानवैराग्यकीलकाभ्यां नमः नाभौ

श्रीमद्भगवत्प्रसादसिद्ध्यर्थकपाठविनियोगाय नमः सर्वांगे ।

द्वादशाक्षरमन्त्र से करन्यास और अंगन्यास करना चाहिये

करन्यासः- ॐ क्लां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ क्लें अनामिकाभ्यां नमः । ॐ क्लौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।ॐ क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

अङ्गन्यासः- ॐ क्लां हृदयाय नमः। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्लूं शिखायै वषट्। ॐ क्लें कवचाय हुम्। ॐ क्लों नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ क्लः अस्त्राय फट्।

इसके बाद नारायण का ध्यान करने का विधान हैं1

कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभं, नासाग्रे वरमौक्तिकं करतले वेणुः करे कङ्कणम्।
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली, गोपस्त्रीपरिवेष्टितो विजयते गोपालचूडामणिः ॥

अस्ति स्वस्तरुणीकराग्रविगलत्कल्पप्रसूनाप्लुतं, वस्तु प्रस्तुतवेणुनादलहरीनिर्वाणनिर्व्याकुलम्।

स्रस्तस्रस्तनिबद्धनीविविलसद्गोपीसहस्रावृतं, हस्तन्यस्तनतापवर्गमखिलोदारं किशोराकृतिः ॥

इस प्रकार ध्यानके पश्चात् कथा प्रारम्भ करनी चाहिये। सूर्योदयसे आरम्भ करके प्रतिदिन साढ़े तीन प्रहरतक कथा बाँचनी चाहिये। मध्याह्नमें दो घड़ी कथा बंद रखनी चाहिये। प्रातःकालसे मध्याह्नतक मूलका पाठ होना चाहिये और मध्याह्नसे सन्ध्यातक उसका संक्षिप्त भावार्थ अपनी भाषामें कहना चाहिये। मध्याह्नमें विश्रामके समय तथा रात्रिके समय भगवन्नाम-कीर्तनकी व्यवस्था होनी चाहिये। कथा श्रवण के लिए श्रोताओं के लिए स्थान वक्ता के सामने श्रोताओ के बैठने के लिये आगे-पीछे सात पंक्तियाँ बना लेनी चाहिये। पहली पंक्ति का नाम सत्यलोक है, इसमें साधु-संन्यासी, विरक्त, वैष्णव आदिको बैठाना चाहिये। दूसरी पंक्ति तपोलोक कहलाती है, इसमें वानप्रस्थ श्रोताओंको बैठाना चाहिये। तीसरी पंक्ति को जनलोक नाम दिया गया है, इसमें ब्रह्मचारी श्रोता बैठाये जाने का विधान हैं। चौथी पंक्ति महर्लोक कहा गया है, यह ब्राह्मण श्रोताओं का स्थान है। पाँचवीं पंक्ति को स्वर्लोक कहते हैं, इसमें क्षत्रिय श्रोताओं को बैठाना चाहिये। छठी पंक्ति का नाम भुवर्लोक है, जो वैश्य श्रोताओं का स्थान है। सातवीं पंक्ति भूर्लोक मानी गयी है, उसमें शूद्रजातीय श्रोताओं को बैठाना चाहिये। स्त्रियाँ वक्ता के वाम भाग की भूमि पर कथा सुनें। ये स्थान उन लोगों के लिये नियत किये गये हैं, जो प्रतिदिन नियमपूर्वक कथा सुनते हैं। जो श्रोता कथा प्रारम्भ होने पर कुछ समयके लिये अनियमितरूप से आते हैं, उनके लिये वक्ता के दक्षिण भागमें स्थान रहना चाहिए 1 इस प्रकार भागवत जी की पाठ विधि का विधिपूर्वक पूजन कर कथा श्रवण कर सत्य मार्ग का अनुसरण करना चाहिए 1

3.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ गये होंगें की पुराणों का रचनाकार, पुराणों की संख्या, पुराणों का वैशिष्ट्य, भागवत पुराण के विषय-वस्तु, सभी अठारह पुराणों मैं श्रीमद्भागवत महापुराण को श्रेष्ठ तथा वृहद पुराण की संज्ञा भी दी गई हैं। जिसमै सभी अठारह पुराणों का सार उपलब्ध होता हैं इसलिए सभी पुराणों मैं श्रीमद्भागवत पुराण को महापुराण कहा गया हैं परमहंसों की संहिता के नाम से भी जाना जाता हैं। इन रहस्यों को परमहंस ही पूर्ण रुप से समझ सकते हैं अन्यथा साधारण व्यक्ति के लिए पुराणों को समझना असंभव ही हैं। यहां पर श्रीमद्भागवत महापुराण की पाठ विधि का भी विस्तृत उल्लेख किया गया हैं जिसमें भागवत जी का पूजन किया जाता हैं जो भगवान की साक्षात् वाड्मय मूर्ति हैं। जो असत्य पर से सत पथ तथा मोक्ष की और ले जाने का मार्ग बताती हैं। इस इकाई मैं भागवत जी के सभी तत्वों का निरुपण भी किया गया हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण के स्वरूप का उल्लेख सभी अठारह पुराणों मैं उपलब्ध होता हैं जो कि भागवत जी की विशेषता को प्रकट करती हैं।

3.7 पारिभाषिक शब्दावली

1. पुराण – प्राचीन आख्यानों से युक्त ग्रंथ
2. पञ्चलक्षण – पुराण के पाँच लक्षण
3. दशलक्षण – श्रीमद्भागवत में वर्णित पुराण के दस विषय
4. सर्ग – मूल प्रकृति से महत्तत्त्व, अहंकार, तन्मात्रा एवं पंचमहाभूतों की उत्पत्ति होना
5. विसर्ग – ब्रह्मा द्वारा की गई सृष्टि।
6. प्रतिसर्ग – प्रलय के बाद पुनः सृष्टि की रचना।
7. मन्वन्तर – एक मनु के शासनकाल की कालावधि।
8. वंश – देवों, ऋषियों एवं राजाओं की परम्परागत होना
9. वंशानुचरित – वंश के उत्तराधिकारियों के जीवन-चरित्र एवं कर्मों उल्लेख।
10. वृत्ति – शास्त्रानुसार जीवन-यापन की विधि।
11. संस्था – सृष्टि का लय या प्रलय की अवस्था।
12. हेतु – सृष्टि का कारण
13. अपाश्रय – समस्त सृष्टि का परम आधार
14. स्कन्ध – पुराण का प्रमुख विभाग
15. विनियोग – मंत्र या ग्रंथ-पाठ के उद्देश्य, ऋषि, छन्द, देवता आदि का को होना।
16. अष्टादश पुराण – अठारह पुराण।

17. महापुराण – वे पुराण जिनमें पञ्चलक्षण अथवा दशलक्षणों का वर्णन हो।
18. नैमिषारण्य – जहां नेमिष के वृक्ष हो।
19. सूतजी – जिन्होंने नैमिषारण्य में श्रीमद्भागवत कथा का उपदेश दिया।
20. शुकदेव – श्रीमद्भागवत के मुख्य वक्ता।
21. परीक्षित – अर्जुन के पौत्र
22. भागवत धर्म – ईश्वर-भक्ति पर आधारित धर्म-मार्ग
23. लीला – ईश्वर के दिव्य एवं अलौकिक लीला

3.8 अभ्यास प्रश्न

1. श्रीमद्भागवत महापुराण की रचना किसने की।
2. श्रीमद्भागवत महापुराण में कुल कितने स्कन्ध हैं।
3. श्रीमद्भागवत महापुराण में कुल कितने अध्याय हैं।
4. श्रीमद्भागवत महापुराण में कुल कितने श्लोक हैं।
5. व्यास जी ने श्रीमद्भागवत की रचना कहाँ की।
6. नारद मुनि ने वेदव्यास जी को क्या उपदेश दिया।
7. 'पुरा भवं पुराणम्' से क्या अभिप्राय है।
8. पुराण शब्द की व्युत्पत्ति किन शब्दों से मानी गई है।
9. पुराणों के पञ्चलक्षण कौन-कौन से हैं।
10. सर्ग से क्या तात्पर्य है।
11. प्रतिसर्ग किसे कहते हैं।
12. मन्वन्तर की परिभाषा क्या है।
13. श्रीमद्भागवत के अनुसार पुराण के दश लक्षण क्या हैं।
14. दशम स्कन्ध को भागवत का प्राण क्यों कहा जाता है।
15. श्रीमद्भागवत महापुराण की पाठ-विधि में सर्वप्रथम क्या किया जाता है।

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भगवान वेदव्यास जी
2. 12 स्कन्ध
3. 335 अध्याय

4. 18,000 श्लोक
5. बद्रीनाथ, सरस्वती नदी के तट पर व्यास गुफा में
6. ईश्वर की लीलाओं एवं भक्ति का वर्णन करने का उपदेश
7. जो प्राचीन होकर भी नवीन प्रतीत हो
8. 'पुरा' अव्यय एवं 'ट्यु (अण)' प्रत्यय से
9. सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, वंशानुचरित
10. सृष्टि एवं पंचमहाभूतों की उत्पत्ति
11. सृष्टि का नाश एवं पुनः सृजन
12. मनु, देवता, इन्द्र, सप्तर्षि एवं भगवान के अंशावतारों से युक्त काल
13. सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, अन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु, अपाश्रय
14. भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का पूर्ण वर्णन होने के कारण
15. प्रातः स्नान, शुद्धि, आचमन एवं मंगलाचरण

3.10 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीमद्भागवत महापुराण
2. वायुपुराण
3. पदमपुराण
4. नारद पुराण

3.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. पुराण का परिचय तथा स्वरुप का विस्तृत वर्णन कीजिये l
2. श्रीमद्भागवतमहापुराण की पाठ विधि का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये l
3. भागवत महापुराण के विषय वस्तु का वर्णन कीजिये l
4. भागवत पुराण में भक्ति के स्वरुप का उल्लेख कीजियेl

इकाई – 4 बाल्मीकी रामायण पाठ विधि

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 महर्षि वाल्मीकि का परिचय
4.4 रामायण का परिचय,रचनाकाल एवं स्वरुप
4.5 रामायण की पाठ विधि, पूजन विधान एवं विनियोग
4.6 वाल्मीकि रामायण सप्तम काण्ड परिचय,विषय वस्तु, एवं भाषा शेली
4.7 वाल्मीकि रामयण में राम,सीता,हनुमान जी का कथानक विचार
4.8 सारांश
4.9 पारिभाषिक शब्दावली
4.10 अभ्यास प्रश्न
4.11 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर
4.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! प्रस्तुत पाठ्यक्रम बी.ए.के.ए (एन) 350 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है? इस इकाई का शीर्षक "वाल्मीकि रामायण पाठ विधि" के अंतर्गत वाल्मीकि रामायण का अध्ययन करते हैं। प्राचीनकाल से ही प्रचलित महाकाव्य के नाम से जाना जाता रहा हैं। भारतीय संस्कृति मैं उल्लेख प्राप्त होता है कि वाल्मीकि रामायण ही सर्वप्रथम काव्य था जिसकी रचना वाल्मीकि ने अपने आसन पर बैठकर किया था। दुनिया का सर्वप्रथम काव्य वाल्मीकि रामायण हैं ,जिसकी रचना भारत भूमि पर हुई थी। महर्षि वाल्मीकि ने संस्कृत श्लोकों से निबद्ध करके इस ग्रंथ की रचना की थी जिसमें दशरथ पुत्र राम के जीवन से जुड़ी सभी प्रकार के घटनाओं का उल्लेख किया गया हैं। 24000 श्लोकों का यह वृहत् ग्रंथ विश्वप्रसिद्ध के साथ साथ लोगों के जीवन मैं सत्मार्ग की प्राप्ति भी कराता हैं। इस ग्रंथ के सात कांडों मैं राम जी के जीवन का उल्लेख हुआ हैं, उनका चारित्रिक जीवन, मर्यादा पूर्वक, अनुशासन के साथ जीवन को दर्शाता हैं। रामायण को आदि काव्य के नाम से भी जाना जाता हैं। जिसका अर्थ हुआ दुनिया का प्रथम महाकाव्य जहां से काव्य की परम्परा आरंभ हुई इसी ग्रंथ के माध्यम से काव्य विद्या का आरंभ अलग अलग विद्वानों ने अपने मति के द्वारा किया, चाहे वह साहित्य का काव्य हो, हिंदी का काव्य हो, या संस्कृत का काव्य हो इन सभी काव्य का प्रारंभ कवियों ने रामायण का अनुसरण करनें के बाद लिखा जो कालान्तर मैं प्रचलित होता गया और आज वर्तमान मैं भी विद्वानों द्वारा काव्यों को लिखा जा रहा हैं जो समाज को सही दिशा मैं ले जानें का कार्य करता हैं।

4.2 उद्देश्य

- ❖ महर्षि वाल्मीकि के बारे मैं ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ❖ आदि काव्य रामायण के बारे मैं जान सकेंगे
- ❖ रामायण के सात कांडों से अवगत हो सकेंगे
- ❖ रामायण की पाठ विधि का ज्ञान प्राप्त करेंगे
- ❖ वर्तमान समय मैं रामायण के महत्व को समझ सकेंगें

4.3 महर्षि वाल्मीकि का परिचय

महर्षि वाल्मीकि संस्कृत भाषा के आदि कवि एवं विश्वविख्यात महाकाव्य रामायण' के रचयिता के रूप में जाने जाते थे। शास्त्रों में महर्षि वाल्मीकि के अनेक नाम प्राप्त होते हैं। विष्णु पुराण में वाल्मीकि को भार्गव ऋक्ष बताया गया हैं। महाभारत में भी भार्गव नाम का उल्लेख किया गया हैं। महाभारत के द्रोणपर्व में भी वाल्मीकि नाम का उल्लेख प्राप्त होता हैं। भार्गव शब्द इनके लिए भृगुवंशीय होने के कारण कहा जाता था। ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार कहा गया है की दीमक की वामी (वल्मीक) से आच्छादित होकर बाहर निकलने के कारण ये वाल्मीकि कहलाए गये। रामायण ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि यह वेदज्ञ ऋषि थे तथा गंगा के दक्षिण में तमसा नदी के तट पर उनका आश्रम होने के साथ साथ राजा दशरथ के परम मित्र भी थे। इसके अतिरिक्त बालकाण्ड के पूर्व भाग में महर्षि वाल्मीकि को शिष्य परम्परा द्वारा भी उनके विषय में लिखा गया था l अध्यात्म रामायण में भी महर्षि वाल्मीकि का कुछ जीवन वृतांत मिलता हैं। महर्षि वाल्मीकि का जीवन बहुत ही संघर्ष रहा हैं, उन्होंने विना सोचे ही मरा मरा का जप करते करते भगवान राम तक पहुँच गये । यहाँ पर आनन्द रामायण के राज्यकाण्ड' में वाल्मीकि के तीन जन्मों का वर्णन किया गया है। पहले जन्म में वह स्तम्भ नामक ब्राह्मण थे , दूसरे जन्म में व्याध, तीसरे जन्म में वह कृणु पुत्र के नाम से प्रसिद्ध हुये। कृत्तिवासकृत रामायण के अनुसार वाल्मीकि च्वयन ऋषि के पुत्र थे। महाभारत के अरण्यपर्व में वाल्मीकि के भार्गव होने का उल्लेख मिलता हैं। वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में भी महर्षि वाल्मीकि को भार्गव शब्द से सम्बोधित किया गया है। दयानन्द भार्गव ने अपने नाटक भृगुवेश' में विभिन्न तथ्यों द्वारा वाल्मीकि को भृगुवंशी ने नाम से पुकारा हैं ।महर्षि वाल्मीकि ने चौबीस सहस्त्र श्लोकों, पाँच सौ सर्गों, सात कांडों में श्रीमद्वाल्मीकि रामायण की रचना करने वाले महर्षि वाल्मीकि का नाम आदि कवि के रूप में बड़े सम्मान के साथ अज भी लिया जाता हैं।महर्षि वाल्मीकि, व्यास और कालिदास, ये तीनों संस्कृत तथा भारतीय संस्कृति के मनीषी माने जाते हैं। इन विद्वानों ने उत्तर और दक्षिण के मध्य सांस्कृतिक सेतु का कार्य किया। वे ही ऐसे प्रथम कवि थे जिन्होंने सभ्य, अर्द्धसभ्य और असभ्य जातियों के आचार-व्यवहार का गंभीरतापूर्वक अध्ययन भी किया था। इन महर्षियों के जीवन-दर्शन और चरित्र सामान्य जन समाज के लिए आदर्श बन गये। इन सभी विन्दुवो से ज्ञात होता है कि रामायण के रचनाकार महर्षि वाल्मीकि अपनी रचना के माध्यम से सभी के हृदय में बसे थे। संस्कृत साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि वाल्मीकि कालिदास से लेकर भवभूति के समय तक मंत्रदृष्टा, आदिकवि एवं प्रचेता के पुत्र के रूप में प्रसिद्ध थे । वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड में वाल्मीकि को प्रचेता का दसवाँ पुत्र कहा गया है। वे सभी विद्याओं में दक्ष

एवं ब्रह्मोपदेष्टा के रूप में भी जाने गए। यद्यपि अत्यधिक लोकप्रियता के कारण महर्षि वाल्मीकि के अनेक रूप जैसे-वैदिक वैयाकरण वाल्मीकि, प्राचेतस एवं भार्गव वाल्मीकि, सुपर्ण वाल्मीकि, ब्रह्मघ्न शिवभक्त वाल्मीकि, प्राकृत वैयाकरण वाल्मीकि, ब्रह्मा-पुत्र एवं ब्रह्मावतार वाल्मीकि, दस्यु वाल्मीकि, श्वपच वाल्मीकि आदि भारतीय साहित्य एवं जनश्रुतियों में उपलब्ध हैं तथापि आमजनों में वे दस्यु वाल्मीकि के रूप में माने गये थे । महर्षि वाल्मीकि के जीवन का सर्वप्रथम उल्लेख स्कंदपुराण के वैष्णव खंड, आवन्त्य खंड, प्रभास खंड तथा नोगर खंड में प्राप्त होता हैं। वहाँ उनके जीवन की कुछ कथाओं में उन्हें प्राथमिक जीवन में दस्यु के रूप में वर्णित किया गया हैं। मुरारि कवि ने 'अनर्घराघव' नाटक में वाल्मीकि की उत्पत्ति वल्मीक कवि से मानी है। इन बातों से यह ज्ञात होता है कि छठी, सातवीं शताब्दी तक वाल्मीकि विषय से कोई भी कथा प्रचलित नहीं थी और उनके नाम की व्युत्पत्ति का वर्णन साहित्य में नहीं की गई थी। अनेक नाटकों एवं काव्यों में जो उनके जीवन से संबंधित कथाओं का वर्णन मिलता है, उन पर विविध पुराणों एवं रामायणों का प्रभाव भी माना जाता रहा हैं । आदिकवि वाल्मीकि के निवास स्थान के बारे में रामायण के बालकाण्ड में कहा गया हैं कि महर्षि वाल्मीकि को रामायण ग्रन्थ लिखने की की प्रेरणा कहा से मिली इस तथ्य से संबंधित जानकारी रामायण के बालकांड में ही वर्णित हैं। इस कांड के प्रथम सर्ग के अनुसार तपस्वी वाल्मीकि ने देवमुनि नारद से पूछा, 'इस समय इस संसार में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, उपकार मानने वाला, सत्यवक्ता और दृढप्रतिज्ञ कौन है?" तब नारद ने उनसे कहा, 'इक्ष्वाकु के वंश में उत्पन्न हुए एक ऐसे पुरुष हैं जो लोगों में राम नाम से विख्यात हैं, वे ही मन को वश में रखने वाले, महाबलवान, कांतिमान, धैर्यवान और जितेन्द्रिय हैं और बाद में उनकी प्रशंसा करते हुए उन्होंने उस समय में प्रचलित राम कथा में राम के वनगमन से लेकर राज्यप्राप्ति पर्यंत तक की कथा सुनाई। वाल्मीकि उस कथा को सुनने के बाद स्नानार्थ तमसा नदी के किनारे चले गए। वहाँ उन्होंने रमणीय कानन में काममोहित एक काँच मिथुन को देखा। उसी समय एक निषाद ने वहाँ आकर नर कौंच का वध कर दिया। पति के वियोग से विह्वल कौंची के हृदयविदारक करुणकंदन को सुनकर वाल्मीकि का हृदय द्रवित हो गया। जिससे वाल्मीकि को दुःख होने लगा की यह 'यह अधर्म हुआ है ऐसा सोचते हुए उनके मुख से अनुष्टुप् छंद में इस श्लोक का प्राकट्य हो गया

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।'

इस श्लोक में कहा गया हैं हे निषाद तुम चिरस्थाई प्रतिष्ठा को प्राप्त न हो क्योंकि तुमने काममोहित इस कौंच के जोड़े में से एक का वध कर दिया है। स्नान के पश्चात् वाल्मीकि अपने आश्रम में आए। किंतु उनका ध्यान अकस्मात् घटी इस घटना पर ही केंद्रित रहा। तभी ब्रह्मा जी वहाँ आए और उनसे कहा, 'हे ब्राह्मण! मेरे आदेश से सरस्वती तुम्हारे भीतर प्रविष्ट हुई हैं। यह सुनकर महर्षि वाल्मीकि धन्य हो गये जिससे बाद उन्होंने रामायण की रचना प्रारम्भ किया जो आज विश्व प्रसिद्ध हो गया।

4.4 रामायण का परिचय,रचनाकाल एवं स्वरुप

विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ रामायण जो आधिकाव्य के रूप में जाना जाता रहा हैं। इस ग्रन्थ के परिचय के बारे में इस सूक्ति में कहा गया हैं।

काव्यं रामायणं कृत्वनं सीतायाश्चरितं महत्। पौलस्त्यवधमित्येवं चकार चरितव्रतः ।।

रामायण शब्द "राम+ अयन" इन दो शब्दों के योग से बना हैं। जिसका मूल अर्थ है राम का अपना अर्थात राम का दर्शाया हुआ सन्मार्गी जीवन से हमेशा से सत्मार्ग को प्राप्त करता रहा हो इस ग्रन्थ में राम के द्वारा दिखाये गये सन्मार्ग का अलौकिक अंकन का वर्णन भी किया गया हैं। इसीलिए इसे रामायण के नाम से जाना जाता रहा हैं। रामायण ग्रन्थ में 24 सहस्र पद्य या लोक एवं सात कांडों में यह ग्रन्थ विभक्त है। इसलिये इस ग्रन्थ को विंशति सहस्री संहिता" के नाम से भी जाना जाता हैं। इस ग्रन्थ में भारतीय धर्म एवं संस्कृति के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के सम्पूर्ण जीवन का काव्यमय वर्णन भी हुआ हैं। रामायण के नायक राम एवं नायिका सीता प्रचलित नायक एवं नायिका की भूमिका में रहते है। रामायण में राम का आदर्श पितृभक्ति, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न की भ्रातृभक्ति, दशरथ का पुत्र प्रेम, कौसल्या, सुमित्रा से हृदय की निर्मलता, सीता से भर्तृभक्ति, बालि से वीरता, अंगद से स्वामिभक्ति, हनुमान जैसा सेवक, तारा एवं मन्दोदरी जैसी दूरदर्शिता इत्यादि का वर्णन मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया हैं , परन्तु रामायण के रचनाकाल को लेकर विद्वानों के मतों में पर्याप्त भिन्नता पाई जाती है। अन्तःसाक्ष्य एवं बाह्य प्रमाणों के आधार पर कोई निश्चित काल निर्धारित नहीं किया जा सकता, परंतु विभिन्न दृष्टिकोणों एवं प्रमाणों के आधार पर कुछ सही निष्कर्ष अवश्य निकाले जा सकते हैं। भारतीय विद्वानों के अनुसार रामायण की रचना त्रेतायुग में हुई थी, जिसकी समय-सीमा लगभग ई.पू. 8,67,100 मानी जाती है, परंतु यह धार्मिक विश्वासों पर आधारित है, इसलिए ऐतिहासिक दृष्टि से इसकी प्रमाणिकता संदिग्ध है। आधुनिक विद्वानों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से रामायण के रचनाकाल का अनुमान लगाने का प्रयास किया हैं। जैसे बाल

गंगाधर तिलक ने ज्योतिषीय गणनाओं के आधार पर रामायण का काल ई. पू. 10000 से 8000 के बीच निर्धारित किया है, वहीं जी. गोरेसिया ने इसे ई. पू. 1200, इलेगल ने ई. पू. 1100, याकोबी ने ई. पू. 800 से 500, कीथ ने ई. पू. 600 तथा कामिल बुल्के ने ई. पू. 200 माना है। डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल रामायण का मूल रचनाकाल ई. पू. 500 तथा उसका संशोधित रूप ई. पू. 200 मानते हैं। यदि हम रामायण एवं महाभारत का तुलनात्मक अध्ययन करें, तो यह ज्ञात होता है कि रामायण, महाभारत से पूर्व की रचना मानी जाती हैं। महाभारत के वनपर्व में वर्णित रामोपाख्यान इस तथ्य की पुष्टि करता है, जहाँ रामकथा का उल्लेख और रामायण के कुछ श्लोक प्राप्त होते हैं। वहीं रामायण में महाभारत अथवा उसके पात्रों का कोई उल्लेख नहीं मिलता। यह अन्तर स्पष्ट रूप से रामायण की प्राचीनता का संकेत देता है। रामायण एवं बौद्ध साहित्य के सम्बन्ध का विवेचन भी रचनाकाल के निर्धारण में सहायक है। कुछ पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि रामायण किसी बौद्धउपरोक्त सभी साक्ष्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रामायण की रचना बौद्ध और जैन साहित्य की रचनाओं से पहले हई थी। इसलिए रामायण को ई.पू. 500 से पूर्व का, सम्भवतः छठी या सातवीं शताब्दी ईसा पर्व काग्रन्थ मानना अधिक युक्तिसंगत और सही मानी जाती हैं । वाल्मीकि रामायण महाकाव्य का आदर्श रूप में दिखाई देता हैं । भारतीय विद्वानों तथा साहित्यशास्त्रियों ने महाकाव्य के रामायण में महाकाव्य के सभी लक्षण मिलते हैं ऐसा कहा हैं। जिसमें प्रमुख विषय की उदात्तता, महनीय चरित्र का उदात्त चित्र, घटनाओं का वैचित्र्यपूर्ण एवं मनोहारी विन्यास, रस की अन्विति तथा भाषा सौष्ठव आदि है। यह ग्रन्थ भावपक्ष काव्य की आत्मा के साथ साथ कला पक्ष भी हैं 1 रामायण की पाठ विधि, पूजन विधान एवं विनियोग का आगे वर्णन किया जा रहा हैं।

4.5 रामायण की पाठ विधि, पूजन विधान एवं विनियोग

वाल्मीकीय रामायण की अनेक प्रकार की पारायण विधियाँ शास्त्रों में प्राप्त होती हैं। श्री रामसेवाग्रन्थ, अनुष्ठानप्रकाश, स्कान्दोक्त रामायण-माहात्य, वृद्धर्मपुराण तथा शाङ्कर, रामानुज, मध्व, रामानन्द आदि विभिन्न सम्प्रदायोंकी अलग-अलग विधियाँ रामायण पाठ विधि में वर्णित हैं, वाल्मीकि के परम प्रसिद्ध नवाह्न-पारायण विधि का उल्लेख रामायण में मिलती हैं। मासों के अनुसार देखा जाय तो चैत्र, माघ तथा कार्तिक शुक्ल पञ्चमी से त्रयोदशी तक नवाह-पारायण की विधि का वर्णन हुआ हैं। यहाँ पर रामायण पाठ किसी पुण्यक्षेत्र, पवित्र तीर्थ, मन्दि पर या अपने गृह पर ही भगवान् विष्णु तथा तुलसी के समीप में आसन विछाकर पूर्व मुख कर पद्मासन या सिद्धासन में स्थित होकर शारीरिक शुधि के लिए तीन बार आचमन कर प्रणायाम कर वाल्मीकि रामायण ग्रन्थ का पूजन कर

संकल्प लेकर के स्व ईष्टदेव का ध्यान, गुरुदेव का ध्यान कर रामायण पाठ आरम्भ करना चाहिये। इसके बाद यथासम्भव जिस स्थान में रामायण का पाठ या कथा होनी हैं उस स्थान का दिशा के अनुसार भूमि का चयन कर, मुहुर्तानुसार, मार्जन, लेपनादि संस्कारों से कदली-स्तम्भ तथा ध्वजा-पताका-वितानादि से मण्डित कर सजाना चाहिए। इसके बाद मण्डप का माप तथा मान का शुल्वसूत्र के अनुसार मापन करना चाहिए। मंडप का मान १६ हाथ लंबा-चौडा हो और उसके बीच में सर्वतोभद्र से युक्त एक वेदी का निर्माण करने के बाद अन्य वेदियाँ, कुण्ड तथा स्थण्डिल आदि का भी निर्माण करना चाहिए। वेदी मण्डप के दक्षिण-पश्चिम भाग में वक्ता व्यास एवं श्रोता का आसन शुभ माना जाता हैं। व्यास आसन के आगे भाग में ग्रन्थ का आसन लगाकर श्रोताओं का आसन विस्तृत व्यास का आसन श्रोता से तथा ग्रन्थ का आसन वक्ता से भी ऊँचा होना चाहिये। इसके बाद प्रायश्चित्त तथा नित्यकृत्य करके भगवान् श्रीराम की प्रतिमा का पूजन प्रतिस्ठा कर स्थापित करनी चाहिये। इसके बाद सीताराम जी का भगवान् श्रीरामचन्द्र, भगवती सीता , लक्ष्मण, भरत , शत्रुघ्न जी, श्री हनुमान्जी आदि का आवाहन करना चाहिये। तत्पश्चात्, सभी पञ्चपल्लवादि से युक्त कलश स्थापित कर स्वस्त्ययनपू र्वक गणपतिपूजन, बटुक, क्षेत्रपाल, योगिनी, मातृ क, नवग्रह, तुलसी, लोकपाल, दिक्पाल आदिका पूजन तथा नान्दीश्राद्ध करके भगवान् राम की षोडशोपचार से पूजन अर्चन कर पूजन आरती कर शांति पाठ करने क विधान शास्त्रों में दिया गया हैं 1 आगे वाल्मीकि रामायण ग्रन्थ का पूजन तथा विधान के बारे में दिया जा रहा हैं।

तदनन्तर काल-तिथि-गोत्र-नाम आदि बोलकर -

ॐ भूर्भुवः स्वरोम् ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकं श्री सीतारामप्रीत्यर्थं श्रीसीतालक्ष्मणभरतशत्रुघ्नहनुमत्समेत श्रीरामचन्द्र प्रसादसिद्धार्थ च श्रीरामचन्द्रप्रसादेन सर्वाभीष्टसिद्धार्थ श्रीराम-चन्द्रपूजनमहं करिष्ये। श्रीवाल्मीकीयरामायणस्य पारायणं चकरिष्ये, तदङ्गभूतं कलशस्थापनं स्वस्त्ययनपाठं गणपतिपूजनं वटुकक्षेत्रपालयोगिनीमातृ कनवग्रहतुलसीलोकपालदिक्पालादि-पूजनं चाहं करिष्ये। इस प्रकार संकल्प करने के बाद पूजन प्रारंभ करे।

ॐ अच्युताय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ माधवाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः, ॐ दामोदराय नमः, ॐ मुकुन्दाय नमः, ॐ वामनाय नमः, ॐ पद्मनाभाय नमः, ॐ केशवाय नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ श्रीधराय नमः, ॐ श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

इस प्रकार नमस्कार करके निम्न प्रकार से पूजा करे श्रीसीतालक्ष्मणभरतशत्रुघ्नहनुमत्समेतं श्रीरामचन्द्रं ध्यायामि इसके बाद भगवान राम का ध्यान करना चाहिए।

आवाहयामि - आवाहन करे। श्रीसीतालक्ष्मणभरतशत्रुघ्नहनुमत्समेताय

श्रीरामचन्द्राय नमः – रन्तसिंहासनं समर्पयामि सिंहासन अर्पण करे।

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि . ॥ **पाद्यं समर्पयामि ।**

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥ **अर्घ्यं समर्पयामि ।**

ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।

पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥ **स्नानीयं जलं समर्पयामि**

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ **आचमनीयं समर्पयामि**

ॐ युवा सुवासा परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः ।

तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो 3 मनसा देवयन्तः ॥ **वस्त्रं समर्पयामि वस्त्र अर्पण करे।**

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम् ।

पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥ **अलङ्करणार्थं आभूषणानि समर्पयामि**

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते l

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी: ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥ **पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि**

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः ।

देवानामसि वह्नितम : सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥ **धूपं समर्पयामि**

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योंतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्वच ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥

ज्योति:सूर्य: सूर्यो ज्योति: स्वाहा ॥ दीपं समर्पयामि

नैवेद्यम्-

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण घेरा लगाकर भगवान को नेवेद्य का भोग लगाये

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौ: समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्॥

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ **मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी।**

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तो ऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शब्द्धविः ॥ .**एलालवङ्गपूगीफलयुतं ताम्बूलं समर्पयामि।**

स्तवपाठ-

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

नमस्कार

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।

साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

नमस्कारान् समर्पयामि ।

तत्पश्चात् निम्न प्रकार से पञ्चोपचार से श्रीरामायण-ग्रन्थ की विधिवत पूजन पूजा करे1

ॐ सदा श्रवणमात्रेण पापिनां सद्गतिप्रदे।

शुभे रामकथे तुभ्यं गन्धमद्य समर्पये ॥ इति गन्धं समर्पयामि।

ॐ बालादिसप्तकाण्डेन सर्वलोकसुखप्रद।

रामायण महोदार पुष्पं तेऽद्य समर्पये ॥ पुष्पाणि पुष्पमालां च समर्पयामि।

ॐ यस्यैकश्लोकपाठस्य फलं सर्वफलाधिकम् ।

तस्मै रामायणायाद्य दशाङ्गं धूपमर्पये ॥

ॐ यस्य लोके प्रणेतारो वाल्मीक्यादिमहर्षयः।

तस्मै रामचरित्राय घृत्दीपं समर्पयेत ॥ इति दीपं दर्शयामि।

ॐ श्रूयते ब्रह्मणो लोके शतकोटिप्रविस्तरम्।

रूपं रामायणस्यास्य तस्मै नैवेद्यमर्पये ॥

पूजा करने के बाद कर्पूर की आरती करके चार बार प्रदक्षिणा कर पुष्पाञ्जलि अर्पण करे। फिर साष्टाङ्ग प्रणाम कर इस प्रकार नमस्कार करे -

वाल्मीकिगिरिसम्भूता रामसागरगामिनी।

पुनाति भुवनं पुण्या रामायणमहानदी ॥

श्लोकसारसमाकीर्ण सर्गकल्लोलसंकुलम् ।

काण्डग्राहमहामीनं वन्दे रामायणार्णवम् ॥

फिर देवी .देवता, ब्राह्मणादि की पूजा कर पाठ का संकल्प करके ऋष्यादिन्यास करे। पूजन के द्वारा या अनुसार कामना भेद से यदि पूरी रामायण का पाठ न हो सके तो अलग-अलग काण्डों के अनुष्ठान की भी विधि है। जैसे पुत्र की कामनावाला बालकाण्ड पढ़े, लक्ष्मी की इच्छावाला अयोध्याकाण्ड का पाठ करे । इसी प्रकार नष्टराज्य की प्राप्ति की इच्छावालों को किष्किन्धाकाण्ड का, सभी कामनाओं की इच्छावालोंको सुन्दरकाण्डका और शत्रुनाशकी कामनावालोंको लङ्काकाण्डका पाठ करना चाहिये। 'बृद्धर्मपुराण के अनुसार - ॐ अस्य श्रीवाल्मीकिरामायणमहामन्त्रस्य भगवान् वाल्मीकिर्ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामः परमात्मा देवता। अभयं सर्वभूतेभ्य इति बीजम्। अङ्गल्यग्रेण तान् हन्यामिति शक्तिः। एतदस्त्रबलं दिव्यमिति कीलकम्। भगवान्नारायणो देव इति तत्त्वम्। धर्मात्मा सत्यसंधश्चेत्यस्त्रम् । पुरुषार्थचतुष्टयसिद्धार्थं पाठे विनियोगःनमः।

ॐ श्रीं रां आपदामपहर्तारमित्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रीं रीं दातारमिति तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ रों रुं सर्वसम्पदामिति मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ श्रीं हैं लोकाभिराममित्यनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ श्रीं रौं श्रीराममिति कनिष्ठिकाभ्यां

ॐ रौं रः भूयो भूयो नमाम्यहमिति करतलकरपृष्ठभ्याम नमः ।

इन्हीं मन्त्रों से इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे। फिर –

ब्रह्मा स्वयम्भूर्भगवान् देवाश्चैव तपस्विनः ।

सिद्धिं दिशन्तु मे सर्वे देवाः सर्षिगणास्त्विह

इस मन्त्र को कहकर कहकर चारों ओर हाथ घुमाकर अन्त में फिर इस प्रकार ध्यान करे-

वामे भूमिसुता पुरस्तु हनुमान् पश्चात् सुमित्रासुतः ।

शत्रुघ्नो भरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषु च।

सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान्।

मध्ये नीलसरोजकोमलरुचिं रामं भजे श्यामलम्॥

'आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।

लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्॥'

इन सम्पुट मंत्रो के द्वारा सम्पुटित पाठ करने से समस्त मनः कामनाओं की सिद्धि होती है।

पुनः मङ्गलाचरण करके पाठ आरम्भ करना चाहिये –

गणपति जी का ध्यान

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

वागीशाद्याः सुमनसः सर्वार्थानामुपक्रमे। यं नत्वा कृतकृत्याः स्युस्तं नमामि गजाननम्॥

गुरु वन्दना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

सरस्वती का स्मरण

दोर्भिर्युक्ता चतुर्भिः स्फटिकमणिमयीमक्षमालां दधाना।

हस्तेनैकेन पद्मं सितमपि च शुकं पुस्तकं चापरेण।

भासा कुन्देन्दुशङ्खस्फटिकमणिनिभा भासमानासमाना

सा मे वाग्देवतेयं निवसतु वदने सर्वदा सुप्रसन्ना॥ वाल्मीकि जी की वन्दना

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम्।

आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥

यः पिबन् सततं रामचरितामृत्सागरम्।

अतूपस्तं मुनिं वन्दे प्राचेतसमकल्मषम् ॥

हनुमान्जी को नमस्कार

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम् ।

रामायणमहामालारन्तं वन्देऽनिलात्मजम् ॥

अञ्जनानन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम्।

कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम् ॥

उल्लङ्घय सिन्धोः सलिलं सलीलं यः शोकवहिं जनकात्मजायाः।

आदाय तेनैव ददाह लङ्कां नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥

आञ्जनेयमतिपाटलाननं काञ्चनाद्रिकमनीयविप्रहम्।

पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम् ॥

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम्।

बाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।

वातात्मजं वानरयूथमुख्य श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥

श्रीराम जी का ध्यान

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे मध्ये पुष्पकमासने मणिमये वीरासने संस्थितम्।

अग्रे वाचयति प्रभञ्जनसुते तत्त्वं मुनिभ्यः परं व्याख्यान्तं भरतादिभिः परिवृ तरामं भजे श्यामलम् ॥

वामे भूमिसुता पुरस्तु हनुमान् पश्चात् सुमित्रासुतः शत्रुघ्नो भरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषु च।

सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान् मध्ये नीलसरोजकोमलरुचिं रामं भजे श्यामलम् ॥

श्रीरामपरिकर को नमस्कार

रामं रामानुजं सीतां भरतं भरतानुजम् । सुग्रीवं वायुसूनुं च प्रणमामि पुनः पुनः ॥ नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै। नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो नमोऽस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः ॥

रामायण ग्रन्थ का ध्यान

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्। एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥

वाल्मीकिगिरिसम्भूता रामाम्भोनिधिसंगता। श्रीमद्रामायणी गङ्गा पुनाति भुवनत्रयम् ॥

वाल्मीकेर्मुनिसिंहस्य कवितावनचारिणः । श्रृण्स् रामकथानादं को न याति परां गतिम् ॥

पाठ आरम्भ करने के बाद अध्याय के बीचमें रुकना नहीं चाहिये। रुक जानेपर फिर उसी अध्याय को आरम्भ से पढ़ने का विधान हैं। मध्यम स्व रसे, स्पष्ट उच्चारण करते हुए श्रद्धा तथा प्रेम से पाठ करना चाहिये। गीत गाकर, सिर हिलाकर, जल्दबाजीसे तथा बिना अर्थ समझे पाठ करना ठीक नहीं है। संध्या-समय निम्नलिखित स्थलों पर प्रतिदिन विश्राम करते जाना चाहिये।

प्रथम विश्राम

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथ्वी सस्यशालिनी। देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः । अधनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ॥ चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं प्रोक्तं महापातकनाशनम् ॥ श्रृ ण्क् रामायणं भक्त्या यः पादं पदमेव वा। स याति ब्रह्मणः स्थानं ब्रह्मणा पूज्यते सदा ॥ रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे। रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥ यन्मङ्गलं सहस्राक्षे सर्वदेवनमस्कृते । वृ ऋाशे समभवत् तत् ते भवतु मङ्गलम् ॥ यन्मङ्गलं सुपर्णस्य विनताकल्पयत् पुरा। अमृ तप्रार्थयानस्य तत्ते भवतु मङ्गलम् ॥ मङ्गलं कोसलेन्द्राय महनीयगुणात्मने। चक्रवर्तितनूजाय सार्वभौमाय मङ्गलम् ॥ अमृ तेत्पादने दैत्यान् घ्नतो वज्रधरस्य यत्। अदितिर्मङ्गलं प्रादात् तत् ते भवतु मङ्गलम् ॥ त्रीन् विक्रमान् प्रक्रमतो विष्णोरमिततेजसः । यदासीन्मङ्गलं राम तत् ते भवतु मङ्गलम् ॥ ऋषयः सागरा द्वीपा वेदा लोका दिशश्च ते। मङ्गलानि महाबाहो दिशन्तु तव सर्वदा ॥

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्धद्याऽऽत्मना वा प्रकृतिस्वभावात् ।

करोमि यद् यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पये तत् ॥

अलग-अलग काण्डोंके सकाम पाठका ऋष्यादिन्यास इस प्रकार है-

बालकाण्डका विनियोग

ॐ अस्य श्रीबालकाण्डमहामन्त्रस्य ऋष्यश्रृ ङ्ग ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। दाशरथिः परमात्मा देवता। रां बीजम्। नमः शक्तिः। रामायेति कीलकम्। श्रीरामप्रीत्यर्थे बालकाण्डपारायणे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ ऋष्यश्रृ ङ्गश्वये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ दाशरथिपरमात्मदेवतायै नमः हृदि। ॐ रां बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ रामाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सुप्रसन्नाय अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ शान्तमनसे तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सत्यसन्धाय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ जितेन्द्रियाय अनामिकाभ्यां नमः। ॐ धर्मज्ञाय नयसारज्ञाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ राज्ञे दाशरथये जयिने करतलकरपृ ष्ठभ्यां नमः।

हृदयादि न्यास कर निम्न प्रकारसे ध्यान करे -

श्रीराममाश्रितजनामरभूरुहेश-मानन्दशुद्धमखिलामरवन्दिताङ्घ्रिम्।

सीताङ्गनासुमिलितं सततं सुमित्रा-पुत्रान्वितं धृ त्मनुः शरमादिदेवम् ॥

ॐ सुप्रसन्नः शान्तमनाः सत्यसंधो जितेन्द्रियः।

धर्मज्ञो नयसारज्ञो राजा दाशरथिर्जयी ॥

इस मन्त्र के द्वारा भगवान राम की पूजा करने के बाद अथवा श्रीराम मन्त्र से सम्पुटित कर बालकाण्ड का पाठ करे। ग्रहशान्ति, करने से सुखसमृद्धि की प्राप्ति होती हैं l

अयोध्याकाण्ड का विनियोग तथा ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीअयोध्याकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् वसिष्ठ ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। भरतो दाशरथिः परमात्मा देवता। भं बीजम्। नमः शक्तिः। भरतायेति कीलकम्। मम

भरतप्रसादसिद्धार्थमयोध्याकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ दाशरथिभरतपरमात्मदेवतायै नमः हृदि। ॐ भं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ भरताय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ भरताय नमस्तस्मै - अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ सारज्ञाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ महात्मने मध्यमाभ्यां नमः। ॐ तापसाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ अतिशान्ताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शत्रुघ्नसहिताय च करतलकरपृ ष्छभ्यां नमः।

इसी प्रकार हृदयादि न्यास करके के बड निम्नलिखित श्लोकानुसार ध्यान करने का विधान हैं।

श्रीरामपादद्वयपादुकान्तसंसक्तचित्तं कमलायताक्षम्।

श्यामं प्रसन्नवदनं कमलावदातशत्रुघ्नयुक्तमनिशं भरतं नमामि ॥

भरताय नमस्तस्मै सारज्ञाय महात्मने।

तापसायातिशान्ताय शत्रुघ्नसहिताय च ॥

अरण्यकाण्ड का विनियोग एवं ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीमदरण्यकाण्डमहामन्त्रस्य भगवानृ त्रिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामो दाशरथिः परमात्मा महेन्द्रो देवता। इं बीजम्। नमः शक्तिः। इन्द्रायेति कीलकम्। इन्द्रप्रसादसिद्धार्थे अरण्यकाण्डपारायणे जपे विनियोगः। ॐ भगवदृषये नमः शिरसि। ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ दाशरथिश्रीराम-परमात्ममहेन्द्रदेवतायै नमः हृदि। ॐ ई बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ इन्द्राय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास- ॐ सहस्रनयनाय अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ देवाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सर्वदेवनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ दिव्यवज्रधराय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ महेन्द्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शचीपतये करतलकरपृ ष्वभ्यां नमः।

हृदयादिन्यास करके ध्यान करना चाहिए l

शचीपतिं सर्वसुरेशवन्द्यं सर्वार्तिहर्तारमचिन्त्यशक्तिम्।

श्रीरामसेवानिरतं महान्तं वन्दे महेन्द्रं धृ त्मज्रमीड्यम् ॥

सहस्त्रनयनं देवं सर्वदेवनमस्कृतम्।

दिव्यवज्रधरं वन्दे महेन्द्रं च शचीपतिम् ॥

किष्किन्धाकाण्ड का ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीकिष्किन्धाकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । सुग्रीवो देवता। सुं बीजम्। नमः शक्तिः। सुग्रीवेति कीलकम्। मम सुग्रीवप्रसादसिद्धार्थे किष्किन्धाकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ भगवदृषये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ सुग्रीवदेवतायै नमः हृदये। ॐ सुं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ सुग्रीवाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सुग्रीवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ सूर्यतनयाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सर्ववानरपुङ्गवाय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ बलवते अनामिकाभ्यां नमः। ॐ राघवसखाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ वशी राज्यं प्रयच्छतु इति करतलकरपृ ष्वभ्यां नमः।

इन्हीं मन्त्रों से हृदयादिन्यास कर इस प्रकार ध्यान करे-

सुग्रीवमर्कतनयं कपिवर्यवन्ध-मारोपिताच्युतपदाम्बुजमादरेण ।

पाणिप्रहारकुशलं बलपौरुषाढ्य -माशास्यदास्यनिपुणं हृदि भावयामि ॥

'सुं सुग्रीवाय नमः

सुग्रीवः सूर्यतनयः सर्ववानरपुङ्गवः ।

बलवान् राघवसखा वशी राज्यं प्रयच्छतु ॥ इस मन्त्र से सुग्रीव की पूजा करे

सुन्दरकाण्डका विनियोग एवं ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीमत्सुन्दरकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् हनुमान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । श्रीजगन्माता सीता देवता। श्रीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सीतायै कीलकम् । सीताप्रसादसिद्धार्थं सुन्दरकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ भगवद्धनुमदृषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। श्रीजगन्मातृ समादेवतायै नमः हृदि। श्रीं बीजाय नमः गुह्ये। स्वाहा शक्तये नमः पादयोः। सीतायै कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सीतायै अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ विदेहराजसुतायै तर्जनीभ्यां नमः। रामसुन्दर्यै मध्यमाभ्यां नमः। हनुमता समाश्रितायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ भूमिसुतायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शरणं भजे करतलकरपृ ष्ठभ्यां नमः ।

हृदयादिन्यास तथा ध्यान-

श्रीराममाश्रितजनामरभूरुहेश-मानन्दशुद्धमखिलामरवन्दिताङ्घ्रिम्।

सीताङ्गनासुमिलितं सततं सुमित्रा-पुत्रान्वितं धृ त्मनुः शरमादिदेवम् ॥

ॐ सुप्रसन्नः शान्तमनाः सत्यसंधो जितेन्द्रियः।

धर्मज्ञो नयसारज्ञो राजा दाशरथिर्जयी ॥

इस मन्त्र के द्वारा से श्रीराम की पूजा करे और इसी से अथवा श्री राममन्त्र से सम्पुटित कर बालकाण्ड का पाठ करे।

अयोध्याकाण्ड का विनियोग तथा ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीअयोध्याकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् वसिष्ठ ऋषिःअनुष्टुप् छन्दः।भरतो दाशरथिः परमात्मा देवता। भं बीजम्। नमः शक्तिः। भरतायेति कीलकम्। मम भरतप्रसादसिद्धार्थमयोध्याकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ वसिष्ठऋषये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ दाशरथिभरतपरमात्मदेवतायै नमः हृदि। ॐ भं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ भरताय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ भरताय नमस्तस्मै - अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ सारज्ञाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ महात्मने मध्यमाभ्यां नमः। ॐ तापसाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ अतिशान्ताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शत्रुघ्नसहिताय च करतलकरपृ ष्छभ्यां नमः।

ध्यानं -

श्रीरामपादद्वयपादुकान्तसंसक्तचित्तं कमलायताक्षम्।

श्यामं प्रसन्नवदनं कमलावदातशत्रुघ्नयुक्तमनिशं भरतं नमामि ॥

भरताय नमस्तस्मै सारज्ञाय महात्मने। तापसायातिशान्ताय शत्रुघ्नसहिताय च ॥

अरण्यकाण्ड विनियोग

ॐ अस्य श्रीमदरण्यकाण्डमहामन्त्रस्य भगवानृ त्रिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीरामो दाशरथिः परमात्मा महेन्द्रो देवता। इं बीजम्। नमः शक्तिः। इन्द्रायेति कीलकम्। इन्द्रप्रसादसिद्धार्थे अरण्यकाण्डपारायणे जपे विनियोगः। ॐ भगवदृषये नमः शिरसि। ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ दाशरथिश्रीराम-परमात्ममहेन्द्रदेवतायै नमः हृदि। ॐ ई बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ इन्द्राय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सहस्रनयनाय अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ देवाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सर्वदेवनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ दिव्यवज्रधराय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ महेन्द्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शचीपतये करतलकरपृ ष्वभ्यां नमः।

इन्हीं मन्त्रोंसे हृदयादिन्यास करके इस श्लोकसे ध्यान करना चाहिये।

शचीपतिं सर्वसुरेशवन्द्यं सर्वार्तिहर्तारमचिन्त्यशक्तिम्।

श्रीरामसेवानिरतं महान्तं वन्दे महेन्द्रं धृ त्मज्रमीड्यम् ॥

सहस्त्रनयनं देवं सर्वदेवनमस्कृतम्।

दिव्यवज्रधरं वन्दे महेन्द्रं च शचीपतिम् ॥

किष्किन्धाकाण्ड का ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीकिष्किन्धाकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । सुग्रीवो देवता। सुं बीजम्। नमः शक्तिः। सुग्रीवेति कीलकम्। मम सुग्रीवप्रसादसिद्धार्थे किष्किन्धाकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ भगवदृषये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ सुग्रीवदेवतायै नमः हृदये। ॐ सुं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ सुग्रीवाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सुग्रीवाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ सूर्यतनयाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सर्ववानरपुङ्गवाय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ बलवते अनामिकाभ्यां नमः। ॐ राघवसखाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ वशी राज्यं प्रयच्छतु इति करतलकरपृ ष्वभ्यां नमः।

ध्यानं

सुग्रीवमर्कतनयं कपिवर्यवन्ध-मारोपिताच्युतपदाम्बुजमादरेण ।

पाणिप्रहारकुशलं बलपौरुषाढ्य -माशास्यदास्यनिपुणं हृदि भावयामि ॥

'सुं सुग्रीवाय नमः

सुग्रीवः सूर्यतनयः सर्ववानरपुङ्गवः

बलवान् राघवसखा वशी राज्यं प्रयच्छतु ॥

इस मन्त्र के माध्यम से सुग्रीव का पूजन कर सम्पुटित पाठ करना शुभ माना जाता हैं।

सुन्दरकाण्डका विनियोग एवं ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीमत्सुन्दरकाण्डमहामन्त्रस्य भगवान् हनुमान् ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । श्रीजगन्माता सीता देवता। श्रीं बीजम्। स्वाहा शक्तिः। सीतायै कीलकम् । सीताप्रसादसिद्धार्थं सुन्दरकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ भगवद्धनुमदृषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। श्रीजगन्मातृ समादेवतायै नमः हृदि। श्रीं बीजाय नमः गुह्ये। स्वाहा शक्तये नमः पादयोः। सीतायै कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यास

ॐ सीतायै अङ्गष्ठाभ्यां नमः। ॐ विदेहराजसुतायै तर्जनीभ्यां नमः। रामसुन्दर्यै मध्यमाभ्यां नमः। हनुमता समाश्रितायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ भूमिसुतायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ शरणं भजे करतलकरपृ ष्ठभ्यां नमः ।

ध्यानं -

सीतामुदारचरितां विधिसाम्बविष्णुवन्द्यां त्रिलोकजननीं शतकल्पवल्लीम्।

हेमैरनेकमणिरञ्जितकोटिभागैर्भूषाचयैरनुदिनं सहितां नमामि ॥

सुन्दरकाण्ड के पाठ की विशेष विधि यह है कि प्रतिदिन एक-एक सर्ग पाठ बढ़ाते हुए ग्यारह वें दिन पाठ पूर्ण कर १२ वें दिन अवशिष्ट दो सर्गक साथ आरम्भके १० सर्ग पाठ कर , १३ वें दिन ११ से २३ तक इस तरह तीन आवृतपाठ पढने से सम्पूर्ण कार्य की सिद्धि होती है। दूसरा क्रम यह है की है- प्रतिदिन ५ अध्याय पाठका। इसमें भी पूर्व की भाँति १४ वें दिन अन्त के ३ तथा प्रारम्भ के दो सर्ग का पाठ करने से सुख के प्राप्ति होती हैं। सम्पुट पाठ का मन्त्र है- "श्रीसीतायै नमः।

लंकाकाण्ड का विनियोग एवं ऋष्यादिन्यास

ॐ अस्य श्रीयुद्धकाण्डमहामन्त्रस्य विभीषण ऋषिः। अनुष्टुप्छन्दः। विधाता देवता। बं बीजम्। नमः शक्तिः। विधातेति कीलकम्। श्रीधातृ प्रसादसिद्धार्थे युद्धकाण्डपारायणे विनियोगः। ॐ विभीषणऋषये नमः शिरसि । ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ॐ विधातृ सतायै नमः हृदि। ॐ बं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। ॐ विधातेति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।ॐ विधात्रे नमः अङ्गष्ठाभ्यां भक्तानामभयप्रदाय मध्यमाभ्यो नमः। भगवत्प्रियाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ नमः । ॐ महादेवाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ॐ सर्वदेवप्रीतिकराय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ इश्वराय करतलकरपृ ष्वभ्यां नमः ।

करन्यास

इन्हीं मन्त्रों से हृदयादि न्यास करके इस प्रकार ध्यान करना चाहिये -

देवं विधातारमनन्तवीर्यं भक्ताभयं श्रीपरमादिदेवम्।

सर्वामरप्रीतिकरं प्रशान्तं वन्दे सदा भूतपतिं सुभूतिम् ॥

विधातारं महादेवं भक्तानामभयप्रदम् ।

सर्वदेवप्रीतिकरं भगवत्प्रियमीश्वरम् ॥

पुनर्वसु नक्षत्र से प्रारम्भ कर आर्द्रा तक २७ दिनों में भी पूर्ण रामायण पाठ की विधि है। ४० दिनों का भी एक पारायण होता है, तथा नवरात्र में भी इसके नवाह्नपाठ का विदां शास्त्रों में दिया गया हैं, जो विधि पूर्वक इस पाठ को नित्य करता है उसकी सभी समस्या का समाधान हो जाता हैं।

4.5 वाल्मीकि रामायण सप्तम काण्ड परिचय,विषय वस्तु, एवं भाषा शैली

वाल्मीकि रामायण की कथा का वर्णन विस्तार पूर्वक वाल्मीकि जी नारद मुनि से पहले ही श्रवण कर लिया था । एक बार क्या हुआ महर्षि वाल्मीकि, नारद मुनि के पास गये और नारद मुनि ने विस्तार पूर्वक वाल्मीकि को कथा का श्रवण कराया जिसके बाद वाल्मीकि जी ने अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड, रामायण के सात काण्डों को 500 सर्गो में विभक्त किया जिसका सार आगे दिया जा रहा हैं।

1. बालकाण्ड- 77 सर्गो वाला बालकाण्ड के आरम्भ के सर्गो में में रामायण की रचना की पूर्वपीठिका का वर्णन किया गया हैं, जिसमे नारद ने महर्षि वाल्मीकि को रामकथा का श्रवण कराया रामायण में राम कथा का आरंभ पंचम सर्ग से प्रारम्भ होती है, जो बालकाण्ड में एक-एक विषय का सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य में विस्तृत वर्णन करते हुए क्रमशः अयोध्या में दशरथ द्वारा अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान, पायस की प्रामि देवताओं की प्रार्थना, रामावतार, राम की बाल्यावस्था, विश्वामित्र द्वारा राम-लक्ष्मण को ले जाने की याचना, दशरथ का कठिनाई से इसे मानना, राम को बला, अतिबला विद्याओं की प्राप्ति का होना , ताड़कावध का वर्णन, अस्त्रोपदेश, यज्ञरक्षा, मिथिला प्रस्थान, कोशिक वंश में विश्वामित्र के जन्म की कथा, सगर और गंगा की कथाएं अहिल्या का उद्धार, जनक की का वर्णन, राम-लक्ष्मण तथा विश्वामित्र का पहुँचना, शतानन्द-द्वारा विश्वामित्र का इतिवृत्त-वर्णन, राम द्वारा धनुर्भग, दशरथ का आना, राम और सीता के विवाह का विस्तृत वर्णन, अयोध्या प्रस्थान, मार्ग में परशुराम भेट, विष्णु के धनुष पर बाण च ढ़ाकर राम द्वारा परशुराम का मद दूर करना तथा अयोध्या-प्रवेश के वृत्तान्त वर्णित किआ गया हैं ।

अयोध्याकाण्ड- 119 सर्गो का यह काण्ड अयोध्या के राजप्रासाद की घटनाएं, भरत की अनुपस्थिति में राम के राज्याभिषेक की तैयारी, मन्थरा के परामर्श से कैकेयी द्वारा दशरथ से अपने

पुत्र भरत के राज्याभिषेक एवं राम के वनवास का वर माँगने का वर्णन, राम का वन-गमन, दशरथ का देहावसान का होना, भरत का राज्य लोटने पर राज्य स्वीकार न करके राम को मनाने के लिए चित्रकूट के और जाना, राम द्वारा भरत के अनुरोध की अस्वीकृति तथा भरत का राम की पादुकाएं लेकर अयोध्या लौटना-इन घटनाओ को वर्णित किया गया हैं। इस काण्ड में कुछ अन्य महत्वपूर्ण प्रसंगों का वर्णन भी किया गया हैं। जैसे राम का दैव की प्रबलता दिखाना और लक्ष्मण का पुरुषकार को बलवान् बताना, कौशल्या का स्वस्ति-वाचन, सीता की अनुगमन प्रार्थना, वनवास के दुखों का वर्णन, भरत का संताप, भरत का शपथ ग्रहण, राज्य की दुर्गति का वशिष्ठ द्वारा वर्णन। राम द्वारा भरत का कुशल प्रश्न पूछने के बहाने राजधर्म का उपदेश, भरत को दार्शनिक उपदेश, जाबालि का नास्तिक मत एवं राम द्वारा खण्डन एवं अनसूया द्वारा पातिव्रत्य धर्म का उपदेश देना। इसके अन्तिम सर्ग में राम चित्रकूट छोडकर दण्डकारण्य में प्रवेश करते हैं इन सभी कथानको का उल्लेख इस काण्ड में किया गया हैं।

4. किष्किन्धाकाण्ड- 67 सर्गो का इस काण्ड में पम्पा सरोवर में बसन्त ऋतु की छटा देखकर राम का सीता के वियोग में होना, हनुमान द्वारा राम और सुग्रीव की मैत्री कराने का वर्णन, सुग्रीव का राम को आधासन, राम द्वारा बालि पथ बालि द्वारा मरते समय राम की भर्त्सना करना तथा राम का प्रसवण गिरि पर चतुरमास यापन, वर्षा का वर्ण, शरद-वर्णन, लक्ष्मण का कोप याचना तारा का विलाप और राम द्वारा सांत्वना, सुग्रीव तथा अंगद का राज्याभिषेक, सुग्रीव का राम के समीप आकर वानर-सेना को सीता की खोज में लगाना, विभिन्न दिशाओं में वानर सेना का प्रेषण, दक्षिण दिशा में हनुमान का जाना, अन्य दिशाओं में भेजे गये वानरों का आगमन, हनुमान् आदि द्वारा सीता का गहन अन्वेषण, संपाती से भेंट, सीता के स्थान की सूचना, सम्पाती की कथा, जाम्बवान् द्वारा हनुमान् का उद्बोधन एवं हनुमान् का सागर-लंघन के लिए प्रवृत्त होना इन सभी कथा प्रसंगों का वृत्तान्त वर्णित हैं।

5. सुन्दरकाण्ड- 68 सर्गो वाला यह काण्ड हनुमान् द्वारा सागर पार करके अनेक विघ्नों को दूर करते हुए लंका में प्रवेश पाना, रावण के अंतःपुर में सीता की खोज करना, स्त्रियों के मध्य सीता के न मिलने पर हनुमान् का दुखी होना, सीता की मृत्यु की आशंका, अशोक वाटिका में अन्वेषण, सीता दर्शन, हनुमान् का सीता को अपना परिचय देना, राम की दी हुई अँगूठी सीता को देना तथा श्रीराम के शारीरिक चिन्हों तथा गुणों का वर्णन करना, अशोक वाटिका का ध्वंश तथा राक्षसों का वध, हनुमान् का बन्दी होकर रावण की सभा में जाना, विभीषण द्वारा दूतवध का निषेध, हनुमान् की पूँछ में आग लगाना, लंका-दहन, हनुमान् का प्रत्यावर्तन, वानरों का मधुवन-घर्षण, राम को हनुमान् द्वारा

सीता की चूड़ामणि दिया जाना तथा सीता का वृत्तान्त सुनाना इन प्रसंगों का वर्णन क्या गया हैं। इस काण्ड को सुन्दर कहे जाने का कारण नायक और नायिका दोनों को संकट के विषमकाल में शुभ-समाचार का मिलना है। इस काण्ड के नायक हनुमान जी है, जिनको 'सुन्दर' के नाम से भी जाना जाता हैं।

6. युद्धकाण्ड- 128 सर्गो का यह काण्ड जिसमे भगवान राम और रावण के युद्ध का वर्णन, श्री राम का वानर सेना के साथ समुद्र तट पर पड़ाव, रावण की सभा में मन्त्रणा" तथा विभीषण का लंका परित्याग, राम की शरण में विभीषण का पहुँचना और रावण के वृत्तान्त का निवेदन करना, नल द्वारा समुद्र पर पुल का निर्माण तथा राम सहित वानर सेना का उस पार पहुँचकर पढ़ाव डालना, रावण द्वारा गुप्तचरों का प्रयोग, अङ्गद का दूत बनकर रावण के महल में जाना, युद्ध का आरम्भ, इन्द्रजित् के बाणों से श्रीराम और लक्ष्मण का अचेत होना', विभिन्न राक्षसों का वध, कुम्भकर्ण को जगाना, कुम्भकर्ण का भयंकर युद्ध तथा राम के हाथ से उसका वध, नरान्तक आदि राक्षसों का वध, इन्द्रजित् द्वारा ब्रह्मास्त्र का प्रयोग", सीता का वध देखकर राम की मूर्च्छा, इन्द्रजित् तथा लक्ष्मण का युद्ध. इन्द्रजित् का वध अन्य राक्षसों के वध के बाद रावण का युद्ध, रावण की शक्ति से लक्ष्मण का मूच्छित होना, राम द्वारा सूर्यपूजा", रावण की पराजय के सूचक अपशकुनों का वर्णन", राम के द्वारा रावण का वध, विभीषण का राज्याभिषेक", सीता की अग्निपरीक्षा", ब्रह्मा द्वारा राम की स्तुति, दशरथ का दोनो पुत्रों को संदेश देना" इन सभी कथानकों का वर्णन किया गया हैं।

उत्तरकाण्ड- 111 सर्गो में भगवान् राम के द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर अगस्त्य ऋषि रावण के वंश की कथा का सुनाना,महर्षि अगस्त्य के द्वारा हनुमान जी की उत्पत्ति कथा का उल्लेख, राजा जनक बुधाजित अन्य नरेशों की अयोध्या से विदाई गुप्तचर द्वारा सीता सम्बन्धी अपवाद की चर्चा से राम को अवगत कराना तथा सीता का परित्याग का वर्णन, राजा नृग-उर्वशी वसिष्ठ-ययाति के आख्यान' तथा कुछ प्रशिप्तसर्ग लवणासुर से पीड़ित मुनियों की रक्षा के लिए राम का शत्रुघ्न को लवण वध के कार्य में नियुक्त करना, लव-कुश का जन्म, शत्रुघ्न और लवणासुर का युद्ध तथा लवण के वध का वर्णन, रामचरित की रचना और गान, शम्बूक का वध वृत्तासुर-इल-पुरुरवा की कथा, अश्वमेध यज्ञ का राम द्वारा अनुष्ठान, कुश लव द्वारा रामायण-गान, सीता को शपथ लेने के लिए राम का अनुरोध', शपथ लेकर सीता का रसातल में प्रवेश, ब्रह्मा द्वारा राम को आश्वासन', कौसल्या आदि माताओं के परलोक गमन का वर्णन, काल द्वारा राम को ब्रह्मा का संदेश देना, कुश-लव का राज्याभिषेक, भाइयों

सहित श्रीराम का विष्णु के तेज से मिल जाना', रामायण-काव्य का उपसंहार और इसकी महिमा का प्रतिपादन करने का वर्णन मिलता हैं।

भाषा शैली

यह पर यह भी विचार किया गया है की वाल्मीकि रामायण की भाषा केसी हो, रामायण की भाषा सरल, सरस, ललित, प्राञ्जल एवं परिष्कृत के साथ साथ प्रसाद व माधुर्य गुण से युक्त वैदर्भी रीति का युक्त दिखाई देती हैं। इसमें यह ज्ञात होता है की भाव-भाषा का समन्वय, सरलता, सुबोधता आदि सभी गुण रामायण विद्यमान हैं।महर्षि वाल्मीकि का भाषा पर असाधारण अधिकार दिखाई देता हैं। जो प्रसंग एवं भावों के अनुरूप शब्दावली का चयन करते हैं। जेसे इक उदहारण से ज्ञात होता हैं। यथा-किष्किन्धाकाण्ड में सुमुखी नायिकावत् शरत्कालीन रात्रि की शोभा का वर्णन द्रष्टव्य है-

रात्रिः शशाकोदितसौम्यवक्त्रा तारागणोन्मीलित चारूनेत्रा।

ज्योत्स्नांशुक प्रावरणा विभाति नारीव शुक्लांशुक संवृताङ्गी ।।

महर्षि वाल्मीकि ने रामायण के पद्यों में अनुष्टुप छन्द का प्रयाग किया हैं। जो छोटी-छोटी सूक्तियां है वे बड़े स्वाभाविक प्रकार से प्रस्तुत की गयी हैं। यथा रामो दिनभि भावते मुदपिरि भूयते इन्द्रवा उपेन्द्रस्यन्दों का प्रयोग बढी मार्मिकता के साथ मुख्यतः सर्ग के अन्त धोदतिक्रम आदि अनुबन्ध का रामायण में प्राधान्य रूप से किया गया हैं। इन छन्दों के माध्यम से प्रकृति, विरह का जीवन्त वर्णन भी किया गया हैं।

अलंकार- वाल्मीकि रामायण में यमक रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा तथा स्वाभावोक्ति अलंकारों का प्रयोग किया गया है। रामायण ग्रन्थ में अलंकारों का प्रयोग सहज रूप से किया गया है जिसे सरलता से समझा जा सके। इस काव्य में प्रायः अनुप्रास, श्रोक में चन्द्रोदय का काव्यात्मक वर्णन उपमाओं की सहायता से किया गया है।

"हंसो यथा राजतप जरस्थः सिंहो यथा मन्दरकन्दरस्थः"।

वीरो वधा गर्वितकुंजरस्थचन्द्रोऽपि बभ्राज तथाम्बरस्थः।

वा०रा० सुन्दर काण्ड 5.5.4

इसी तरह से कवि ने अशोकवाटिका में एकान्त में बैठी हुई दयनीय सीता के चित्रण में उपमाओं का महल ही खड़ा कर दिया था। कवि लिखते हैं की सीता सन्दिग्ध स्मृति वत, गिरी हुई ऋद्धि वतु, विहत श्रद्धा वत्, प्रतिहत आशा, विध्नित सिद्धि, कलुषित बुद्धि और मिथ्या कलंक से भ्रष्ट हुई कीर्ति के समान प्रतीत हो रही थी ऐसा वर्णन किया गया हैं।

रस- वाल्मीकि रामायण काव्य में प्रायः सभी रस प्राप्त होते हैं जेसे करुण, श्रृंगार और वीर इनमें मुख्य रस माने जाते हैं। करुण रस को ही मुख्य रस के रूप में स्वीकार किया गया है रामायण में करुण रस का उल्लेख मिलता हैं l आनन्दवर्धन ने रामायण में करूण रस को ही अंगी रस स्वीकार किया है- 'रामायणे हि करुण रसःअन्य रस वीर, रौद्र, भयानक एवं श्रृंगार आदि का भी यथास्थान कुशलता के साथ प्रयोग प्राप्त होता हैं। अनेक प्रसंगों में मुख्यतः युद्धकाण्ड में वीर रस ही प्रमुख है। सीता वियोग वर्णन में विप्रलम्भ श्रृंगार का सुन्दर एवं सजीव चित्रण किया गया हैं।

प्रकृति-चित्रण - प्राचीन काल से मानव का प्रकृति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहा हैं। वह प्रकृति सुख-दुःख की संगिनी रही है। महर्षि वाल्मीकि ने प्रथम बार मानवीय प्रकृति और वाय प्रकृति का तादात्म्य अपने ग्रन्थ में स्थापित किया है। सम्पूर्ण प्रकृति के सोंदर्य का समावेश रामायण में दिखाई देता हैं।

4.7 वाल्मीकि रामायण में राम,सीता,हनुमान जी का कथानक

प्राचीन काल में मेरु नाम का एक प्रसिद्ध पर्वत था जो सूर्यदेव के वरदान स्वरूप सुवर्णमय हो गया था। उस पर हनुमान के पिता केसरी राज्य किया करते थे। उनकी अंजना नाम से विख्यात एक पत्नी थीं। जब भगवान विष्णु ने राजा दशरथ के यहाँ पुत्रभाव से जन्म ले लिया, तब ब्रह्मा जी ने सभी देवताओं से कहा कि वे लोग उनके सहायक के रूप में ऐसे पुत्रों की सृष्टि करें, जो बलवान, इच्छानुसार रूप धारण करने में समर्थ, माया जानने वाले, शूरवीर, वायु के समान वेगशाली, नीतिज्ञ, बुद्धिमान, विष्णुतुल्य पराक्रमी, किसी से परास्त न होने वाले, तरह-तरह के उपायों के जानकार, दिव्य शरीरधारी तथा अमृतभोजी देवताओं के समान सब प्रकार की अस्त्रविद्या के गुणों से संपन्न हों। ब्रह्माजी की आज्ञानुसार वायुदेवता ने अंजना के गर्भ से हनुमान नाम के ऐश्वर्यशाली वानर को जन्म दिया। हनुमान वायुदेव के औरस पुत्र थे। उनका शरीर वज्र के समान सुदृढ़ था। उनकी गति गरुड़ के समान थी। वे सभी वानरों में सर्वाधिक बुद्धिमान और बलवान कहे जाते थे।एक दिन माता अंजना फल लाने के लिए आश्रम से निकलीं और गहन वन में चली गईं। माता से बिछुड जाने और भूख से

पीड़ित होने के कारण हनुमान जोर-जोर से रोने लगे। इतने में उन्होंने जपाकुसुम के समान लाल रंग वाले सूर्यदेव को उदित होते देखा। उन्होंने उसे कोई फल समझा और फल के लोभ से वे सूर्य की ओर जोर से उछले। सूर्य को पकड़ने की इच्छा से वे आकाश में उड़ते ही चले गए। अपने पुत्र को सूर्य की ओर जाते देख उसे दाह से बचाने के लिए वायुदेव भी बर्फ के समान शीतल होकर उसके पीछे-पीछे चलने लगे। उड़ते हुए बालक हनुमान आकाश को लाँघते हुए सूर्यदेव के पास पहुँच गए। उन्हें बालक जान सूर्य ने भी उन्हें जलाया नहीं। जिस दिन हनुमान सूर्यदेव को पकड़ने के लिए उछले, उसी दिन राहु द्वारा सूर्यग्रहण किया जाना था। हनुमान ने सूर्य के रथ के ऊपरी भाग से ज्यों ही राहु का स्पर्श किया तो वह डरकर वहाँ से इंद्र के पास भाग गया। हनुमान को दूसरा राहु समझकर उसने इंद्र से गुस्से में कहा कि जब वह सूर्य को ग्रस्त करने की इच्छा से वहाँ गया, तभी दूसरे राहु ने आकर सूर्य को पकड़ लिया। यह सुनकर इंद्र घबरा गए और गजराज ऐरावत पर आरूढ़ होकर उस स्थान की ओर चल दिया जहाँ हनुमान के साथ सूर्यदेव विराजमान थे। राहु इंद्र को छोड़कर बड़े वेग से आगे बढ़ गया। हनुमान सूर्य को छोड़कर, राहु को ही फल मानकर उसे पकड़ने के लिए पुनः आकाश में उछले। सूर्य को छोड़ अपनी ओर हनुमान को देख राहु अपनी रक्षा करने के लिए इंद्र को पुकारने लगा इंद्र ने हनुमान पर वज्र के द्वारा प्रहार किया जिससे वे एक पहाड़ पर गिरकर उनकी बॉये अंग को नुकसान हो गया । अपने पुत्र के गिरते ही वायुदेव इंद्र पर कुपित हो उठे। उनका क्रोध प्रजाजनों के लिए बड़ा ही अहितकारक हुआ। प्रजाजनों से समस्त अपने पुत्र के गिरते ही वायुदेव इंद्र पर कुपित हो उठे। उनका क्रोध प्रजाजनों के लिए बड़ा ही अहितकारक हुआ। प्रजाजनों से समस्त वायु खींचकर वे अपने शिशु पुत्र को लेकर एक गुफा में घुस गए। इधर वायु के प्रकोप से त्रस्त समस्त प्रजा दौड़ती हुई ब्रह्मा जी के पास गई और वायुरोधजनित दुःख को दूर करने की प्रार्थना करने लगी। इस पर ब्रह्माजी ने बताया कि इंद्र द्वारा उनके पुत्र हनुमान पर वार किए जाने के कारण वायुदेव कुपित हैं। सबको मिलकर उन्हें प्रसन्न करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। तब सभी उस स्थान पर गए जहाँ वायुदेव छिपे बैठे थे। ब्रह्माजी को देख वे अपने पुत्र को लिए हुए ही उनके सामने उठ खड़े हुए और उन्होंने ब्रह्माजी को नमन किया। जैसे ही उन्होंने उस शिशु पर हाथ फेरा, वैसे ही वह शिशु उठ खड़ा हुआ। अपने पुत्र को उठ खड़ा देख प्रसन्न हुए वायुदेव पूर्ववत् वायु का संचार करने लगे वे हनुमान के नाम से प्रसिद्ध हो गये ।

सीताजन्म वृतांत -

एक बार की बात हैं की रावण, हिमालय के वन में घूम रहा था। तभी उसने ब्रह्मर्षि कुशध्वज की अत्यंत सुंदर पुत्री वेदवती को ऋषिप्रोक्त विधि से तपस्या में संलग्न देखा। उसे देख कर वह काममोहित हो गया। उसने वेदवती से उसकी तपस्या करने का कारण पूछा। जब उसने बताया कि उसके पिता तीनों लोकों के स्वामी भगवान विष्णु से उसका विवाह करना चाहते थे किंतु बलाभिमानी दैत्यराज शंभु द्वारा उनकी हत्या कर दी गई। अतः उसने अपने पिता के मनोरथ को पूरा करने के लिए भगवान नारायण को पति के रूप में पाने की प्रतिज्ञा की है. इसीलिए वह यह महान तप कर रही है। यह सब जान लेने पर भी रावण ने उसे अपनी पत्नी बनाने का प्रलोभन कई बार दिया किंतु वह व्यर्थ गया। जब वह नहीं मानी, तब रावण ने अपने हाथों से उसके केश पकड़ लिए। इस पर कोधाभिभूत हो वेदवती ने अपने हाथों से अपने केशों को मस्तक से अलग कर दिया। फिर जल कर मरने के लिए उतावली हो, अग्नि की स्थापना करके उस निशाचर को दग्ध करती हुई-सी बोली, 'तुझ पापात्मा ने इस वन में मेरा अपमान किया है, इसलिए मैं तेरे वध के लिए फिर उत्पन्न होऊँगी। यदि मैंने कुछ भी सत्कर्म, दान और होम किए हों तो अगले जन्म मैं सती साध्वी अयोनिजा कन्या के रूप में प्रकट होऊँ तथा किसी धर्मात्मा पिता की पुत्री बनूँ। और अग्नि में प्रवेश कर अपने जीवन का अंत कर लिया।तदन्तर दूसरे जन्म में वह कन्या पुनः एक कमल से प्रकट हुई। लेकिन उस राक्षस ने वहाँ से उस कन्या को प्राप्त कर लिया तथा अपने घर ले गया। उसने मंत्री को वह कन्या दिखाई। बालक-बालिका के लक्षणों को जानने वाले उस मंत्री ने कन्या को अच्छी तरह देखकर रावण को बताया, 'यह सुंदर कन्या यदि घर में रही तो आपकी मृत्यु का कारण होगी। इस पर रावण ने उसे समुद्र में फेंक दिया। तत्पश्चात् वह कन्या समुद्र में बहती हुई राजा जनक के यज्ञमंडप के मध्यवर्ती भूभाग में जा पहुँची। एक दिन जब राजा जनक स्वयं हाथ में हल लेकर यज्ञ के योग्य क्षेत्र को जोत रहे थे, तभी वह कन्या भूमि से प्रकट हुई। राजा जनक की दृष्टि उस पर पड़ी। उसके सारे अंगों में धूल लिपटी हुई थी। उस अवस्था में उसे देखकर राजा को बडा आश्चर्य हुआ। उन दिनों उनके कोई संतान नहीं थी, इसलिए स्नेहवश राजा जनक ने उसे अपनी पुत्री के रूप में स्वीकार कर लिया और उसे पुण्यकर्मपरायणा बड़ी रानी को सौंप दिया जिन्होंने मातृ समुचित सौहार्द से उसका लालन-पालन किया। क्योंकि वह कन्या हल के अग्र भाग से खींची गई रेखा (सीता) से प्रकट हुई थी, इसलिए उसका नाम सीता रखा गया।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार राम,लक्ष्मण,भरत, शत्रुघ्न कथानक

दूरदर्शी, सत्यपरायण, महात्मा दशरथ अत्यंत प्रभावशाली होते हुए भी पुत्रहीन होने की बात से सदैव चिन्तित रहते थे। उनके कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा नाम की तीन रानियाँ थी। किंतु वंश को आगे चलाने के लिए किसी से भी उनके कोई पुत्र नहीं था। इस पर बहुत अधिक चिंतन करते-करते एक दिन उनके मन में विचार आया कि पुत्र प्राप्ति के लिए अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया जाए। उस पर मंत्रणा करने के लिए उन्होंने वेदविद्या में पारंगत मुनियों सुयज्ञ, वामदेव, जाबालि, काश्यप तथा कुलपुरोहित वशिष्ठ जी तथा अन्य श्रेष्ठ ब्राह्मणों को बुलवाया। सभी ब्राह्मणों ने उनके अश्वमेध करने के विचार की प्रशंसा की और ऐसा करने के लिए उन्हें आश्वस्त किया, साथ ही अश्वमेध की तैयारी करने के लिए कहा। फिर वे राजा को बधाई देते हुए उनकी आज्ञा लेकर चले गए। मुनियों के जाने के बाद मंत्री सुमंत्र ने राजा दशरथ से एकांत में अश्वमेध यज्ञ के लिए मुनिकुमार ऋष्यश्रृंग को बुलवाने का निवेदन किया और उनसे प्रार्थना की कि वे ऋषि को स्वयं बुलाकर लाएं। उनकी प्रार्थना का सम्मान करते हुए राजा स्वयं ऋषि ऋष्यश्रृंग को उनकी पत्नी शांता सहित अंगदेश से अयोध्या में बुलाकर लाए। ऋष्यश्रृंग के नेतृत्व में वशिष्ठ ऋषि आदि सभी श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने सरयू नदी के तट पर तैयार की गई यज्ञ भूमि में शास्त्रोक्त विधि के अनुसार पुत्रेष्टि यज्ञ आरंभ किया। अवध नरेश ने अपनी पत्नियों के साथ यज्ञ की दीक्षा ली। देवता, सिद्ध, गंधर्व और महर्षिगण अपना-अपना भाग लेने के लिए उस यज्ञस्थल पर एकत्रित थे। उसी समय देवताओं ने ब्रह्माजी से रावण के अत्याचारों से संसार को मुक्त करने के लिए कोई युक्ति सुझाने का निवेदन किया। ब्रह्माजी ने देवताओं को बताया कि रावण ने उनसे देवता, गंधर्व, यक्ष, तथा राक्षसों से न मारे जाने का वरदान मांगा था, मनुष्य को तुच्छ समझने के कारण उससे अवध्य होने का नहीं। इसलिए अब मनुष्य के द्वारा ही उसका वध होगा। तभी भगवान विष्णु जी भी वहाँ आ गए। देवताओं ने उनसे प्रार्थना की, 'आप धर्मज्ञ, उदार और तेजस्वी राजा दशरथ की तीनों रानियों के गर्भ से अपने चार स्वरूप बनाकर पुत्र रूप में अवतार ग्रहण कीजिए। इसप्रकार मनुष्यरूप में प्रकट होकर आप संसार के लिए कंटकरूप रावण का समरभूमि में वध कर दीजिए।' इस प्रार्थना को स्वीकार कर विष्णु जी ने अपने को चार रूपों में प्रकट करके राजा दशरथ को पिता बनाने का निश्चय किया। जब राजा दशरथ यज्ञ कर रहे थे, तभी यज्ञ कुंड में से एक विशालकाय पुरुष प्रकट हुआ। वह प्रज्ज्वलित अग्नि की लपटों के समान दैदीप्यमान था। उसके हाथ में जाम्बुनद नामक स्वर्ण की बनी हुई एक बड़ी परात थी जो चांदी के ढक्कन से ढकी हुई थी। उसमें दिव्य खीर भरी हुई थी। उसने स्वयं को प्रजापतिलोक का पुरुष बताया और राजा से स्वयं देवताओं द्वारा बनाई गई दिव्य खीर को स्वीकारने और उसे अपनी पत्नियों को खिलाने के लिए कहा ताकि इससे उन्हें अनेक पुत्रों की प्राप्ति हो सके। इसके बाद वह कांतिमान पुरुष अंतर्धान हो गया। राजा ने

उस पुरुष की बात को मानते हुए उस खीर का आधा भाग कौशल्या को दे दिया। फिर बचे हुए आधे का आधा भाग सुमित्रा को दे दिया। उन दोनों को देने के बाद जितनी खीर बची थी, उसका आधा भाग कैकेयी को अर्पित किया और अवशिष्ट खीर को कुछ सोचकर पुनः सुमित्रा को दे दिया। यज्ञ समाप्ति के बाद छः ऋतुओं के बीत जाने पर चैत्र के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्न में कौशल्या ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोक वंदित जगदीश्वर श्री राम को जन्म दिया जिनके नेत्रों में कुछ-कुछ लालिमा थी ओठ लाल-लाल थे, भुजाएं बड़ी-बड़ी थीं और स्वर दुंदुभि के समान गंभीर था। कैकेयी ने सत्यवादी, पराक्रमी भरत को और सुमित्रा ने लक्ष्मण व शत्रुघ्न को जन्म दिया।

4.8 सारांश

आप सभी ने वाल्मीकि रामायण पारायण विधि का क्या विधान हैं, किस प्रकार से रामायण का पाठ करना चाहिए इन सभी के बारे जान लिया होगा। इस इकाई मैं वाल्मीकि रामायण के बारे मैं, महर्षि वाल्मीकि का परिचय, रामायण ग्रंथ का परिचय, एवं स्वरूप, रामायण पाठ विधि, एवं विनियोग का क्या विधान हैं, वाल्मीकि रामायण मैं सात कांडों मैं किन किन पात्रों के कथानक का वर्णन किया गया हैं, रामायण मैं प्रमुख पात्रों, राम, सीता, और हनुमान जी का वर्णन किया गया, तथा वर्तमान संदर्भ मैं रामायण की समाज मैं क्या आवश्यकता हैं, जिससे समाज मैं एक सकारात्मक विचार प्रेरित हो सके। इन सभी विषयों का उल्लेख किया गया हैं। इसके पश्चात् श्री राम के जीवन न चरित्र के प्रत्येक पहलू की मर्यादा का पालन करनें के साथ साथ स्वयं को एक भाई, पति,पुत्र, तथा राजा के रूप मैं स्थापित भी किया। राजा का कार्य प्रजा को संतुष्ट करना तथा प्रजा के हित मैं फैसला लेना ही राजा के राजत्व को दिखाता हैं। जो धर्म,न्याय,प्रेम, कर्तव्य के मार्ग पर चलते हुए औरों को भी इस पर पर चलने के लिए प्रेरित करता हैं। वाल्मीकि रामायण से हमारे जीवन मैं वो शिक्षा मिलती हैं जो धर्म, न्याय, कर्तव्य, प्रेम, के साथ साथ आदर्शों के साथ चलनें तथा उस परम धर्म की और चलनें का मार्ग भी प्रशस्त करता हैं, जिससे हमारे जीवन के उद्देश्य पूर्ण हो सके 1 यह शिक्षा हमें वाल्मीकि रामायण ग्रंथ से प्राप्त होती हैं।

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. महर्षि महान द्रष्टा
2. महाकाव्य वृहद आकार, की रचना जिसमें सर्ग एवं उपाख्यान होते हैं।

3. पारायण पाठ का संस्कृत पारायण लौकिक मंत्र
4. विधिवत नियमानुसार पूजन करना
5. विनियोग किसी भी। पाठ से पूर्व जल के द्वारा विनियोग करना
6. संकल्प प्रतिज्ञा करना व
7. विराड वृहत् आकार
8. वैदेही सीता जी
9. लक्ष्मण जो लक्ष्य का भेदन करे
10. शत्रुघ्न जो शत्रुओं का विनाश करें

4.10 अभ्यास प्रश्न

1. वाल्मीकि रामायण मैं कितने कांड हैं।
2. वाल्मीकि को किस नाम से जाना जाता हैं।
3. हनुमान जी के पिता का नाम हैं।
4. अंजनी के पुत्र का नाम क्या हैं।
5. रामायण के नायक कोन हैं।
6. नायिका कोन हैं।
7. रामायण का रचना काल क्या हैं।
8. याकोबी के अनुसार रचना काल हैं।
9. आदिकाव्य के रुप मैं कोन सा ग्रंथ हैं
10. मनोजवं मारुतुल्यवेगं इस श्लोक मैं किसका वर्णन किया गया हैं।
11. राम जी का पूजन किस उपचार के माध्यम से करना चाहिए।
12. रामायण की भाषा शैली हैं।

4.11 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर

1. सात
2. भार्गव वाल्मीकि
3. केसरी
4. हनुमान जी
5. श्रीराम
6. सीता जी

7. 10000से 8000ई.पूर्व
8. 800से 500ई पूर्व
9. वाल्मीकि रामायण
10. हनुमान जी का
11. षोडशोपचार से
12. सरल, सरस, प्रांजल एवं परिष्कृत

4.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. वाल्मीकि रामायण प्रथम, द्वितीयखंड, गीता प्रेस प्रकाशन
2. तुलसीदास हनुमान प्रसाद पोद्दार श्रीरामचरितमानस मानस गीताप्रेस गोरखपुर
3. रामायण मीमांसा स्वामी करपात्री जी
4. रामकथा भगवान स्वरूप व्यास

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. महर्षि वाल्मीकि का विस्तृत विवरण दीजिए।
2. भगवान राम के चरित्र तथा आदर्शों का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
3. वाल्मीकि रामायण के अनुसार सप्तम कांड परिचय दीजिए।
4. रामायण की पाठ विधि का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
5. रामायण का रचनाकाल एवं स्वरूप पर प्रकाश डालिए।